हिन्दी शब्द-रचना

माईदयाल जैन

*

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

माननीय साहू शान्तिप्रसादजी जैन

को

सप्रेम

प्राक्कथन

●

इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थका स्वागत करनेके लिए और उसके लेखकका अभिनन्दन करनेके लिए दो शब्द लिख रहा हूँ।

अँगरेजीसे मराठीमे अनुवाद करते समय मेरा ध्यान सर्वप्रथम शब्द-रचनाकी ओर गया। जब कोई मराठी शब्द न मिलता तब संस्कृतसे शब्द लेकर काम चलाना अथवा नया शब्द बनाना—यही दो उपाय थे। अँगरेजी शिक्षाके कारण अँगरेजीमे सोचनेकी आदत हो गयी थी। अनुवादके समय भी देशी शब्द ढूँढने पडते थे। लिखते समय अगर शब्द न मिलें तो इधर-उधर ढूँढकर शब्द बनाये जा सकते हैं। लेकिन देशी भाषामे व्याख्यान देते समय देशी शब्द कहाँसे लावें। उस समय सोचनेके लिए ठहर तो नही सकते। प्रतिभा उसी क्षण जो शब्द सुझायेगी, उसीको लिये बिना दूसरा चारा नही होता। मैं समझता हूँ कि सोच-सोचकर बनाये हुए शब्दोकी अपेक्षा प्रत्युत्पन्न मतिसे तुरन्त सुझाये हुए शब्द कम उपयुक्त नही थे, क्योकि मैं मानता हूँ कि हर-एक आदमीकी प्रत्युत्पन्न मति ईश्वरका वरदान है। जितनी भी दिशाओसे सोचना जरूरी है, उन सब दिशाओका एक ही साथ ध्यान रखकर योग्य शब्द देनेकी सत्ता प्रत्युत्पन्न मतिकी है। यह मति कविकी प्रतिभासे कम नही है।

बादमे जब महात्मा गान्धीजीके चरणोमे अपनी सेवा अर्पण की, तब उनकी भाषा गुजराती सीखकर उसमे लिखना, बोलना और पढना शुरू किया। जो भाषा मेरी मातृभाषा नही थी, उसकी सेवा करनेका

जब अवसर मिला, तब तो मेरी आँखें ही खुल गयी। वाणीके भिन्न-भिन्न क्षेत्रोका विकास कैसे होता है, यह देखने तथा समझनेका मौका मिला। यह भी देख सका, कि जिस तरह विद्वान् लोग शब्द बनाते है उसी तरह सामान्य जनता भी अपनी आवश्यकताके अनुसार नये-नये शब्द बनाती आयी है। और जब दूसरी भाषासे शब्द उधार लेने पडते है तब जनता ऐसे नये शब्दोको देशी रूप दिये बिना नही छोडती। जनताकी सर्वप्रथम निष्ठा अपनी भाषाकी प्रकृतिके प्रति होती है। जो भी आदमी किसी भाषाकी सेवा करना चाहता है, उसे उस भाषाके स्वभाव अथवा प्रकृतिका उत्तम परिचय होना ही चाहिए। पर केवल परिचय ही काफी नही है, उस स्वभाव या प्रकृतिके प्रति पूरी सहानुभूति और आदर भी होना चाहिए। आदर और सहानुभूतिके बिना आत्मीयता पैदा नही होती और आत्मीयताके बिना सेवा करनेका अधिकार प्राप्त नही होता। आत्मीयताके अधिकारके बिना की हुई सेवा न मजूर होती और न टिकती है।

मैं गुजरातीमे लिखने लगा, पढाने लगा, यही मेरा गुनाह हुआ। गान्धीजीने गुजरातीके अच्छे-अच्छे विद्वानोके सहयोगसे गुजरातीके लिए एक प्रामाणिक शब्दकोश बनानेका कार्य मुझे सौपा। मैंने बचनेकी काफी कोशिश की, लेकिन महात्माजीने एक ही बात पकडी, "मैंने यह कहा, तुम्हीको सौंप दिया है। मदद चाहे वैसे लोगोंसे ले लो। पाँच वर्षके अन्दर कोश मुझे मिलना ही चाहिए।"

महात्माजीका सकल्प सिद्ध हुआ और गुजराती भाषाके इतिहासमे पहली ही दफा गुजराती शब्दोकी वर्तनी (गुजरातीमे स्पैलिंग Spelling को जोडनी कहते है।) स्थिर हो गयी। हमारे कोशका नाम ही हो गया 'जोडनी कोश'।

अब गान्धीजीने मुझे राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रचारका कार्य सौप दिया। मेरा क्षेत्र एकदम विशाल हो गया। हिन्दीको हमने इसलिए

पसन्द किया, कि उसमे भारतकी सब भाषाओका समन्वय करनेकी शक्ति है। आज जिसे हम भावनात्मक एकता कहते है, और जिसे मैं सास्कृतिक समन्वय (Cultural integration) कहता हूँ, उसकी शक्ति सन्तोके आशीर्वादसे हिन्दीमे है। यह देखकर उसी हिन्दीका भारतकी राष्ट्रभाषाके तौरपर प्रचार करनेका काम गान्धीजीने शुरू किया।

इसमे मुसलमानोको अलग रखना असम्भव था और उन्हे सन्तोष देना भी इतना ही कठिन था। गान्धीजीने दोनो पक्षोको समझानेकी पूरी-पूरी कोशिश की। मैं दोनोंके सघर्षके बीच ऐसा फंसा कि मेरी तो कोल्हूमे पडे हुए तेल-जैसी हालत हो गयी। मैंने सोचा कि पिसे हुए मेरे तेलने अगर सघर्षको टालनेवाले स्नेहका काम किया तो मेरा जीवन कृतार्थ हो जायेगा।

उन दिनो एक मुसलिम विद्वान् नेताके साथ बातचीतमे उन्होंने कहा, "काका साहेब, आपकी हिन्दुस्तानी हम तब मजूर करेंगे, जब अरबी-फारसीमे बने हुए मौजूदा और आयन्दा उर्दू लफ्ज़ोको आप स्वीकार करेंगे।" मैंने जवाब दिया, "मैं भारतकी सम्मिश्र सस्कृति (Composite Culture) को ईश्वरकी बडी देन मानता हूँ और मेरी सस्कृति-सेवा भूतकालके उद्धारके लिए नही, किन्तु भविष्य कालके निर्माण और विकासके लिए है। इसलिए मैं अपने मनमे किसी तरहकी चोरी (mental reservation) रखे विना आपको वचन देता हूँ, कि उर्दूके मौजूदा और आयन्दा सब शब्दोको स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ, लेकिन—इसमे लेकिन आ ही जाता है—आपके ये सारे शब्द हमारी हिन्दुस्तानीमे टिकेंगे इसका आश्वासन मैं तो क्या भगवान् भी नही दे सकेगा। विशाल जनताके हाथमे ये शब्द पहुँच जायेंगे, बादमे इनका जो होगा, सो होगा। जब किसीका वश नही चलता है, तब हम कहते हैं कि इतिहास विधाताके हाथमे है।"

मुझे पता नही उस विद्वान् नेताको सन्तोष हुआ या नही, लेकिन

वे चुप हो गये, क्योंकि उनके पास कहनेको कुछ रहा ही नही था।

इसके बाद स्वराज्य हो गया। स्वराज तो पूर्ण स्वराज मिला, किन्तु देश बँटवारेके कारण खण्डित हुआ। भारतने तय किया कि देश भले ही खण्डित हो, लेकिन हम अपनी मुश्तरिका सस्कृति खण्डित न होने देगे। स्वराज सरकारको राष्ट्रीय सविधानने आदेश दिया कि सम्मिश्र सस्कृतिकी वाहक हिन्दी भाषाका विकास करो। इस आदेशके अनुसार हिन्दीकी पारिभाषिक शब्दावली बनानेके लिए स्वराज सरकारने, शिक्षा मन्त्रालयने और पार्लियामेण्टने जो अनेक समितियाँ बनायी, उनमे काम करनेका मौका मुझे दिया। मैं भारतकी अनेक भाषाओको जानता हूँ, इसके कारण मैं इन समितियोमे कुछ काम कर सका और मैं इस बातका भी अनुभव कर सका कि भिन्न-भिन्न प्रान्तोके, भिन्न-भिन्न कार्योंके और भिन्न-भिन्न अवस्थाओंके लोगोमे जो राग-द्वेष होते हैं, और जो मर्यादाएँ होती है, उन्हे सँभाल कर ही धीरे-धीरे प्रगति की जा सकती है।

इन सबसे जबर्दस्त पक्ष था उन लोगोका जो सारा काम-काज और सारी पढाई अँगरेज़ीके माध्यमसे ही चलानेके समर्थक थे। उन्होने कभी नही कहा कि अनन्त काल तक अँगरेज़ीका ही राज चले, किन्तु उनका रुख तो अँगरेज़ीके व्यवहारकी आयु-मर्यादा जितनी बढ सके, बढ़ानेकी ओर था। देशी भाषाके विकासका उत्तरदायित्व वे अपने सिर पर लेनेको तैयार नही थे। देशी भाषाका विकास तुम करते जाओ, जबतक तुम्हारी देशी भाषाएँ प्रौढ और सशक्त नही बनती, तबतक अँगरेजीको लेकर हम बैठे ही हैं, यही है उनका रुख। ऐसे लोगोने, स्वराज्य-प्राप्तिके लिए मेहनत कम की हो या ज्यादा, स्वराज्य चलानेका अधिकार उन्हीके हाथोमे गया है।

ऐसी परिस्थितिमे मेरे विद्वान् मित्र श्री माईदयाल जैनने शब्द-रचना या शब्द-सगठनका भार उठानेवाले लोगोके हाथ मजबूत करनेके

लिए परिश्रमपूर्वक यह एक उत्तम साधन तैयार किया है। नये-नये शब्द बनानेकी एक प्रतिभा होती है, लेकिन उसका एक विज्ञान भी है और भारतमे आजकी सस्कृतिका स्वरूप देखते हमे सस्कृत, अंगरेजी और सब प्रान्तीय भाषाओके ऐतिहासिक विकासका एक साथ खयाल करके भविष्यके लिए अपनी वैज्ञानिक दृष्टि तय करनी है। मैंने ऊपर जो अपना अनुभव वताया है, उसपर-से देखता हूँ कि श्री माईदयालमे यह योग्यता है। उनकी यह उपादेय पुस्तक जो भी पढेंगे, वे नये-नये शब्द बनाते समय लोगोकी जो भूलें होती हैं, उनसे बच जायेंगे। हम शब्द वनायें और कोई उन्हे स्वीकार न करे अथवा उनका प्रचलन थोडे ही दिनोमे खत्म हो जाये, ऐसी नौवत कोई पसन्द न करेगा। कोई भी पिता अपने वाल-वच्चोको अल्पायु वनना पसन्द नही करेगा। श्री माईदयालकी किताबके अध्ययनके वाद जो भी शब्द बनाये जायेंगे, उनके दीर्घायु होनेकी सम्भावना अधिक रहेगी। सरकारी समितियोमे काम करते देशके अनेक विद्वानोके साथ सहयोग करनेका जो मौका मिला, उसे मैं अपना अहोभाग्य मानता हूँ। मैं मानता हूँ कि ये सारे विद्वान् भी माईदयालजीके इस ग्रन्थकी विवेचन-शैलीको पसन्द करेंगे। कवियो, लेखको, अनुवादको तथा पत्रकारो आदिके लिए भी यह ग्रन्थ उपयोगी सिद्ध होगा, ऐसी मेरी धारणा है। आखिरकार शब्दोका भाग्य तो इतिहास-विधाताके हाथमे ही है। उसीका आशीर्वाद इस ग्रन्थको मिले।

—काका कालेलकर

सन्निधि, राजघाट
नयी दिल्ली

प्रस्तावना

•

इस पुस्तकने निस्सन्देह हिन्दीके स्तरको ऊँचा कर दिया है। विचारशील पाठकोको इस पुस्तकके तीन गुण विशेपत प्रभावित करेगे—१ हिन्दी साहित्य सेवा, २ गम्भीरता और ३ विशालता। इन गुणोपर यहाँ कुछ विचार प्रकट किये जाते है—

(१) **हिन्दी साहित्य सेवा :** (क) व्यवहार-प्रधान इस युगमे, शब्दोंके तारतम्यमे और शब्दावलियोकी जटिलताओमे इस पुस्तकने उन शब्द-निर्माताओकी हृदय-वेदनाको पढ लिया है, जो निरन्तर यह अनुभव किया करते है, कि हिन्दीमे गढे हुए शब्द दुर्लभ हो गये है। उदाहरणार्थ भारत सरकारके 'पारिभाषिक शब्द सग्रह' १९६२ मे अँगरेजी शब्द 'Electrify' के लिए केवल 'बिजली लगाना' निर्धारित किया गया है। पुस्तकने सुझाव दिया है, कि क्या वास्तवमे चालू 'दफनाना, गिलाफना और फिलमाना' के नमूनेको आधार मानकर 'बिजलियाना' का प्रयोग नही हो सकता था? बात तो यह है कि हिन्दी तो बन रही है, परन्तु इस बननेमे भी 'रस्साकशी'-जैसा खेला जा रहा है। इधर हिन्दीकी विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति-द्वारा आकर्पित आम जनता तो 'बिजली लगाना' ही पसन्द करेगी, उधर सश्लेपणात्मक शब्दोंके लिए सघर्प करनेवाले तकनीशनोकी माँग किसी एक गढील शब्दके लिए होगी। पुस्तकने इस माँगके महत्त्वको दर्शाकर हिन्दी साहित्यकी सेवा की है।

(ख) पुस्तकने हिन्दी-ससारमे उस प्रवृत्तिको भी भाँप लिया है,

जो शब्दोके अध्ययनके लिए चल पडी है। पृष्ठ ४मे कहा गया है—"शब्दोके समझनेका प्रयत्न ही तो शब्दोका अध्ययन है।" यद्यपि हमारी शिक्षा-सस्थाओमे अभीतक रटनेका ही बोलबाला है, और आम 'शिक्षित' जनताको शब्दोके समझनेकी फुरसत नही, बाजारी नोटोके यान्त्रिक उपाय-द्वारा ही शब्दोसे काम चलाया जा रहा है, तो भी इसमे सन्देह नही कि शब्दोके समझनेका प्रयत्न भी कही-कही अवश्य हो रहा है। इसके सम्बन्धमें पृष्ठ ५ में भाषाओके विद्वानोंके लिए शब्दोका अध्ययन आवश्यक बताया गया है। अनुभवी लोगोके विचारमे भाषाओके अध्यापकोका तो यह अत्यन्त आवश्यक कर्त्तव्य है, कि वे शब्दोको समझनेका प्रयत्न करे, तभी कुछ आशा हो सकती है, कि उनके विद्यार्थियोके हृदयोमे भी इस जिज्ञासाकी जागृति हो जाये। इस प्रकारके प्रयत्नशील अध्यापकोपर जो उपकार इस पुस्तक-द्वारा होगा, उसका मूल्याकन मननशील पाठक अवश्य करेगे।

(ग) हिन्दी कैसी बननी चाहिए, परन्तु वास्तवमे हिन्दी क्या बन रही है, इन दो सकल्पनाओका स्पष्ट विभिन्न प्रदर्शन कराकर इस पुस्तकने विशेष सेवा की है। आधुनिक वैज्ञानिक शब्दोके निर्माणमे उतावलापनके दोषोका उल्लेख करते हुए इस पुस्तकमे कहा गया है—"सहस्रो शब्दोको वनाकर ऊपरसे थोपना पड रहा है।" (पृष्ठ २०८) ठोस जगत्मे सिद्धान्त और प्रयोगमे कितना भेद हो सकता है—इस घटनाका यह साक्षात् उदाहरण है। आदर्श तो यह था, कि "शब्दावली बोलने, लिखने और समझनेमे आसान हो" (पृष्ठ २४१), परन्तु उतावलापनमे इस आदर्शकी सुध किसको हो सकती है? अनुसूचित (Scheduled) अवधिमे देशकी तुरन्त माँगके अनुसार उलटा-सीधा जैसा हो सके अनेक शब्द गढे गये हैं। आदर्शकी माँग तो यह थी, कि पहले इन शब्दोको श्रोताओपर परखा जाता और ग्राह्य सिद्ध होनेपर उनका प्रकाशन किया जाता। परन्तु परिवर्तनात्मक (transitory) अव-

धियोमे इस प्रकारकी घटनाएँ अनिवार्य होती हैं। हाँ, पुस्तक हमे यह शिक्षा देती है; कि शीघ्रकालीन योजनाके साथ एक दीर्घकालीन योजना भी चलनी चाहिए थी जिसमे यथायोग्य विचारपूर्वक शब्दोका निर्माण हो सकता।

(घ) पुस्तककी हिन्दीके लिए कितनी तडप है, इसका मूल्याकन करनेके लिए पृष्ठ ९२ के इस वचनको देखिए—"लेखक शब्दके अभावमे नया शब्द बनानेका रचनात्मक प्रयास करनेकी बजाय सस्कृतसे तद्भव शब्द बनाये बिना भी झटसे सस्कृत तत्सम शब्द प्रयोग कर देते हैं। इससे हिन्दी शब्द-रचनाका मार्ग सीमित तथा बन्द होता है।" इस वचनसे यथार्थताकी क्रूरता सिद्ध होती है। शिक्षित लोगोंके लिए जहाँतक सकल्पनाओ (concepts)का प्रश्न है, सस्कृत तत्सम शब्द अपेक्षतया सुगम होते हैं। परन्तु इस तत्सम आश्रयणसे वह सैकडो तद्भव-भाषियोको वचित कर देते हैं। तद्भव हिन्दीकी विपत्ति तो यह है, कि इन साधारण सकल्पनाओ-जैसे 'स्वास्थ्य'के लिए शब्द विरले ही मिल सकते है। इसलिए सकल्पनाके प्रकरणोमे तत्सम शब्दोका आश्रयण प्राय अनिवार्य होगा। परन्तु सकल्पनाओको छोडकर अन्य अर्थोके लिए हिन्दीमे तद्भव शब्दोकी भरमार है, जैसा कि अगले प्रकरणमे स्पष्ट हो जायेगा। अत पुस्तकका तद्भव महत्त्व प्रदर्शन सर्वथा समुचित है।

(च) पुस्तककी सर्वोत्तम सेवा हिन्दीकी शब्दावलीका वर्गीकरण है, जो प्राय उपसर्गो अथवा प्रत्ययोके आधारपर किया गया है। इस वर्गीकरणने हिन्दी अनुसन्धानके लिए एक नया क्षेत्र उपस्थित कर दिया है। जैसें सकल्पनाओकी दृष्टिसे कौन-कौन-से प्रत्यय हिन्दीमे अधिक चालू हैं, इसपर बहुत-से सश्लेषणात्मक निबन्ध तैयार हो सकते है। उदाहरणाथ पृष्ठ ३४ और ३६ में घुमक्कड, लडाकू आदिसे उपलब्ध प्रत्यय स्वभाव अथवा प्रकृतिके द्योतक हैं। पाणिनिने इसके सदृश, ३, २, १३४ 'आक्वेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु' इस सूत्रसे प्रारम्भ करके अनेक प्रत्यय जो

'वर्धिष्णु' आदि शब्दोमे देखे गये हैं, निरूपित किये हैं। इस वर्गीकरणका महाफल एक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण होगा, जिससे समान प्रत्ययवाले शब्दोमे एक सकल्पनामूलक एकसूत्रताका दर्शन होगा, और एक नये जगत्का उद्घाटन हो जायेगा। इस प्रारम्भिकाको लेकर अध्ययन और अध्यापन रटनेकी राक्षसी प्रवृत्तिका सर्वथा विध्वस कर देगा।

(२) **गम्भीरता** इस पुस्तककी गम्भीरता विशेष उल्लेखनीय इसलिए है कि यह हिन्दी सरचनाका वडा गम्भीर अध्ययन है। इस कृतिमे न तो पल्लवग्राही पाण्डित्य है और न ही आडम्वरी विद्वत्ता। इसकी पद्धति सीधे अवगाहनकी है। इस अवगाहनके विशेष गुण ये हैं--

(क) हिन्दी आदि भाषाओंके मूलभूत सारघटक नियमोंके महत्त्वको दर्शाते हुए जहाँ भाषाको एक 'शक्ति' अथवा शब्दब्रह्मसे निरूपित किया है (पृष्ठ १), वही पृष्ठ १३ में 'भाषा एक सामाजिक वस्तु है' इस परममौलिक सिद्धान्तपर भी ज़ोर दिया है। नवीनतम भाषाविज्ञानके सिद्धान्तमे भी यह वलपूर्वक वताया गया है कि भाषा एक अशमे अवश्य ऐसी है जो मनुष्यके अधीन नही। यह भाषाके विश्वजनीन नियम है, जिनके वलसे भाषामे उच्चारण और अर्थके भिन्न-भिन्न रूप स्वय वनते रहते हैं और जिनके प्रतापसे तीन वर्षके वच्चेमे अपनी भाषाकी रूपरेखा और लहजा बँध जाता है। कहा गया है कि इससे वढकर चमत्कारी घटना मानव जीवनमे और कोई नही। परन्तु जो लोग वैयक्तिक शब्दोमे ही शक्ति देखते हैं, उन्होने अभीतक भापाके महत्त्वका समुचित मून्याकन नही किया। नवीन भाषाविज्ञानका विशेप महत्त्व यह है, कि इसमे भापाके सामाजिक अशपर वहुत गहराईसे विमर्श किया गया है, और वैयक्तिक शव्दोके अर्थको केवल समाजवश वताते हुए साकेतिक ही माना है। कहा गया है, कि 'अन्तर्वैयक्तिक ज्ञानमे 'अर्थ'का साकेतिक होना अनिवार्य है' (Meaning in inter subjective knowledge is inevitably formal देखिए—Bent Nordhjen The Phonemes of

English कोपनहागन १९६०, पृष्ठ ७१)। उदाहरणार्थ हिन्दीमे 'घोडा' शब्द एक पशु-विशेषका वाचक है, इस अर्थके निर्धारणका मूल श्रोता-वक्ताका अज्ञात समझौता है। पुस्तकने इसी अशके महत्त्वका मूल्याकन करते हुए भाषाको एक 'सामाजिक वस्तु' कहा है।

(ख) पुस्तककी विचारशीलता इससे भी निश्चित होती है, कि इसमे केवल शब्दोकी सूचियाँ ही नही दी गयी, अपितु साथ-साथ दृष्टान्तपूर्वक शब्द-वैचित्र्यकी घटनाओपर भी विचार किया गया है। उदाहरणार्थ पृष्ठ २४में यह भी बताया गया है कि हिन्दी भाषामे अर्थभेदको जतलानेके लिए एक ही शब्दके भिन्न-भिन्न रूपोका प्रयोग किया जाता है, जैसे—'गर्भिणी' मानव-स्त्रीका उल्लेख करके, और 'गाभिन' पशुका निर्देश करके प्रयोग-मे लाये जाते हैं। इसी प्रकार सस्कृत 'सौभाग्य' और 'सुहाग' व्युत्पत्ति-की दृष्टिसे तो एक ही शब्द हैं, परन्तु उनका अर्थ भिन्न-भिन्न हो गया है। अँगरेज़ीमे केमेरा (Camera) और चेम्बर (Chamber) का भी यही हाल है। यदि भाषा इस वैविध्यरूपी यन्त्रका प्रयोग न करती, तो नये-नये शब्द गढनेकी विपत्ति आ जाती।

(ग) शास्त्रीय दृष्टिकोणके अतिरिक्त हिन्दी भाषाकी आधुनिक परि-स्थिति, व्यावहारिक जगत्की माँग और जनताकी हिन्दी शब्दोके लिए प्रतिदिन बढती हुई उत्सुकतापर भी इसमे यथोचित विचार किया गया है, और बताया गया है, कि शब्द-निर्माण मानो आवश्यकताओकी मजबूरीका फल बनकर हमारे सिरपर आ पडा है, तथा आधुनिक अव-स्थाओमे 'नये शब्दोकी बाढ' का निर्देश किया गया है (पृष्ठ २६—२८)। प्रतीत होता है कि मजबूरियोने ही ऐसी विचारगर्भित और विचार-प्रव-र्तक पुस्तकको भी उत्पन्न कर दिया है। जब सन्ततियोके भविष्यका एक जटिल समाजकी सस्कृतियोका, प्राचीन आचार्योंकी परम्पराका और ठोस बौद्धिक प्रगतिका प्रश्न हो, तो इस प्रश्नको हल करनेके लिए मानो एक ठीक अवसरपर इस पुस्तकका प्रादुर्भाव हुआ है।

(घ) पृष्ठ २९ मे शब्द-रचनाकी जो पद्धतियाँ बतायी गयी हैं, उनमे-से व्युत्पत्ति-पद्धति और अर्थपरिवर्तन पद्धति बहुत महत्त्वपूर्ण है। परन्तु अवगाहनशील विचारकोका अनुभव है, कि व्युत्पत्ति-पद्धतिके लिए अत्यन्त विशाल सामग्री और एक भगीरथ प्रयत्न अत्यन्त आवश्यक है। इसी आवश्यकताको अनुभव करके आचार्य पाणिनिने 'गणपाठ' की रचना की थी।

बडे हर्षकी बात है कि इस पुस्तकने 'गणपाठ'के सदृश हिन्दी व्युत्पत्ति पद्धतिके लिए पहला कदम उठाया है, अर्थात् सामान्य अर्थके अनुसार शब्दोका वर्गीकरण किया गया है, जैसे ऊपर 'बत्तीसा' आदिका उदाहरण (हिन्दी साहित्य-सेवा प्रकरण 'च') देकर व्याख्या की जा चुकी है। परन्तु यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वर्तमान युगमे सस्कृतिकी विशालताके कारण इस प्रकारके वर्गीकृत शब्दोका अवचयन एक व्यक्तिका कार्य नही। इसके लिए 'टीमो'की जरूरत है।

अर्थ-परिवर्तनके सम्बन्धमे जो समास-विषयक सामग्री इस पुस्तकमे दी गयी है, वह बहुत रुचिकर है। किसी समाजकी प्रमुख विशेषता यह है कि यह केवल शब्दोका समुच्चय नही है। यह आभासी समुच्चय वास्तवमे एक इकाई होती है, जिससे कुछ नया अर्थ निकल आता है। यही अर्थ-परिवर्तन समाजकी विशेषता है। उदाहरणार्थ पृष्ठ १४६ मे 'कनकटा' शब्द लीजिए। यह दो शब्द 'कान' और 'काट का समुच्चय तो है, परन्तु इसका कुछ अभिनव अर्थ बन गया है, जिसमे एक तीसरी सकल्पना (Concept) का निवेश हो गया है, अर्थात् एक पुरुष जिसका कान काटा गया है या जिसका कान कटा हुआ है। आचार्य पाणिनिने भी समास एक इकाई है, इसको भाँप लिया था और यह उपसर्ग नियम बताया था कि समासमे प्राय एक ही स्वराघात हो सकता है, भाषा स्वय भी स्वाभाविक रीतिसे मनुष्यके लहजेमे समासका उच्चारण ऐसे कराती है, कि इस इकाईकी रक्षाके लिए आशिक शब्दो-

का स्वर छोटा कर देती है, जैसे 'कनकटा' मे 'कान' और 'काट' दोनोके दीर्घ स्वर ह्रस्व बन गये है।

(३) विशालता : पुस्तकमे जिस विशाल दृष्टिकोणसे हिन्दी शब्दोका अध्ययन किया गया है, उसने विशेषत हिन्दीके स्तरको ऊँचा कर दिया है। इस विशालताके कुछ उदाहरण लीजिए—

(क) पशु-पक्षियोकी ध्वनियोको हिन्दीमे कैसे निरूपित किया जाता है इसका विवेचन बडा प्रभावशाली है। केवल इस सचयने ही अनुसन्धानका एक विशेष क्षेत्र खोल दिया है। हिन्दीमे मुरगेकी ध्वनिको 'कुकडूँ कूँ' बताया गया है। व्याकरणकी पाठ्य-पुस्तकोमे इस प्रकारके शब्दोको शब्दानुकरण कहा गया है। परन्तु प्रश्न यह उपस्थित होता है कि वास्तवमे यह कहाँतक 'अनुकरण' है ? तुलना कीजिए—अँगरेज़ीमे इसीको 'काकेडूडल डू', बँगलामे 'कोकोरको', जर्मनमे 'कीकरीकी', फ्रेंचमे 'कोकोरिको', रूसीमे 'कुकूरेकू' कहते हैं। भूविख्यात मनोवैज्ञानिक वूण्ट लिखते हैं, कि वास्तवमे शब्दानुकरणका अनुपात ऐसे शब्दोमे बहुत कम होता है, इसके साथ मनोवैज्ञानिक कल्पनाओ, अन्धविश्वासो और पुराणकथाओके सस्कारोका भी सम्मिश्रण होता है। (देखिए Wundt · Volkerpsy choolgie, I die Sprache · १९२१, पृष्ठ ३३०-३१)। इन अनुपातोका अनुसन्धान भविष्यका विषय है।

(ख) हिन्दी शब्दोकी परस्पर बन्धुता और अलगावको बडी सुन्दरतासे दर्शाया गया है। 'सुराहीका मुंह', 'पहाडकी चोटी', 'कमीज़की पीठ'—इनमे मुंह, चोटी, पीठ आदिका अपने-अपने अर्थ रखते हुए भी कुछ दूसरा अर्थ है। यह सरचना भी समासकी सम्बन्धिनी (Correlate) है। पुस्तकने मानो हिन्दीमे एक नयी विचारधाराको चला दिया हैं। कल्पना की जा सकती है कि प्रत्येक हिन्दी शब्दका सम्बन्धित्व किन-किन अन्य शब्दोके साथ हुआ करता है, इस जिज्ञासाके

विवर्त्तक कोश किसी दिन अलग-अलग तैयार करनेकी योजना बनायी जायेगी। इस प्रयत्नसे अभीतक अपेक्षित शब्द एक उच्चतर स्तरपर लाये जायेंगे।

(ग) आम बोलचालमे प्राय चालू शब्दोंके अतिरिक्त साकेतिक शब्द, जैसे सुदि, वदि, रुचिकर, ऐतिहासिक वर्णन-द्वारा दर्शाये गये है, और उनकी 'यूनेस्को' आदिसे तुलना की गयी है। (ग २) मिलवाँ शब्द (प्रसिद्ध 'फुलेल' (फूल + तेल) के अतिरिक्त हरियानामे प्रचलित 'मका —'मैंने कहा' का उल्लेख है। इस 'मका' मे 'मैं' के मकार और 'कहा' के ककारका अन्तर्भाव है। परन्तु इस 'मका' का विस्तार बहुत दूर तक है। इन पक्तियोके लेखकको विदित हुआ है कि 'मका' न केवल अम्बाला जिलामे अपितु जटखेडा तहसील रुडकी तक चालू है।

(घ) इस विशालताका एक प्रभावशाली पक्ष यह भी है, कि इस पुस्तकमे वर्तमान हिन्दी पारिभाषिक शब्द-विषयक सब सम्मतियोको निष्पक्षतासे दिखाया गया है। सब पक्षोको बडे परिश्रमसे इकट्ठा किया गया है। जहाँ ऐसे विचारक भी है, जिनके विचारमे सस्कृत हिन्दीकी जननी है, वहाँ अन्य ऐसे भी हैं, जिनके विचारमे हिन्दीकी जननी अपभ्रश है।

(ङ) पुस्तककी भिन्न हिन्दी पारिभाषिक शब्दोपर क्या सम्मति है इस प्रश्नका उत्तर केवल एक उदाहरणसे स्पष्ट हो जायेगा। अँगरेजी शब्द 'सीनियर' और 'जूनियर' के लिए भारत सरकारके हिन्दी शब्दो 'वरिष्ठ, कनिष्ठ' की आलोचना करते हुए लिखा गया है, कि 'सीनियर और जूनियर' का अनुवाद नही करना चाहिए।

इस सम्मतिसे पुस्तककी विशालता तो स्पष्ट हो जायेगी, परन्तु इन दो शब्दोके सम्बन्धमे इतना कहना आवश्यक प्रतीत हो रहा है, कि यद्यपि हिन्दीमे सीनियर और जूनियरके लिए सीधे शब्द नही

मिलने, तो भी हिन्दी मुहावरे अर्थात् विश्लेपणात्मक प्रतिपादन-द्वारा सकल्पनाके लिए बोलचालकी हिन्दीमे शब्द अवश्य मिल जाते है। वे क्या है ? वे हैं–'से ऊँचा', 'से नीचा।'

अनुवाद सर्वदा किसी भाषा-निर्माण पद्धतिपर ही आश्रित हो सकता है। यदि 'सीनियर'-'जूनियर' हिन्दीमे प्रयोग किये जाये तब भी 'से' का अवश्य प्रयोग करना पडेगा। जैसे 'वह मुझसे सीनियर है।' इसके स्थानमे 'वह मुझसे ऊँचा है' यदि यह कहा जाये तो अनपढ लोग भी समझ तो जायेंगे। 'सीनियर और जूनियर' गाँववाले लोगोके लिए कठिन होगे।

पाठकगण इस पुस्तककी हिन्दी साहित्य सेवा, गम्भीरता और विशालतासे प्रभावित तो होगे ही, परन्तु इस-जैसी महान् कृतिके पाठक-के लिए एक जिम्मेवारी हो जाती है। क्योंकि जिस भगीरथ प्रयत्नसे एकाकी ग्रन्थकर्ताने हिन्दी सकल्पनाओका जो वर्गीकरण करनेका प्रयत्न किया है, उससे आशा की जा सकती है कि पाठकवर्ग भी किसी-न-किसी अशमे इस पुस्तक-द्वारा प्रवर्तित विचारधाराको आगे चलायेंगे।

—(डॉ०) सिद्धेश्वर वर्मा

चण्डीगढ–२

भूमिका

●

हमारी सविधान परिषद्ने १४ सितम्बर सन् १९४९ को हिन्दीको समस्त भारतकी राजभाषा तथा नागरीलिपिको राष्ट्रलिपिके रूपमे स्वीकार करके हिन्दीको उचित गौरव प्रदान किया। देशकी जनताका वहुभाग तथा हमारे बहुत-से दूरदर्शी नेता इससे वहुत पहले ही हिन्दीको राष्ट्रभाषाके महान् पदपर प्रतिष्ठित कर चुके थे। यह खेदकी वात है कि कुछ व्यावहारिक, प्रशासनिक, कठिनाइयो, पारिभापिक शब्दोकी कमी तथा राजनैतिक कारणोसे वह अभीतक उस पदको प्राप्त करनेसे वचित रही है। पर वह दिन दूर नही है, जब उसको वह पद दिया जायेगा। पर हिन्दीभाषियोको इस पद-प्राप्तिसे परम आनन्दित या विजित अनुभव नही करना चाहिए, वरन् नम्र होकर दूसरी आधुनिक भारतीय भापाओके प्रति समादरभाव प्रकट करना चाहिए।

राष्ट्रभापाके अति उत्तरदायित्वपूर्ण पदपर आसीन होनेवाली हिन्दी-से वहुत-सी अपेक्षाएँ की जाती हैं। सक्षेपमे कहे, तो वे भारतकी सास्कृतिक, साहित्यिक, प्रशासनिक, न्याय, कूटनीति तथा उच्चशिक्षा सम्वन्धी, वैज्ञानिक तथा शिल्प-वैज्ञानिक, व्यावसायिक तथा औद्योगिक और अधुनातन सैनिक विज्ञान-विषयक भापा सम्वन्धी आवश्यकताएँ हैं, जिन्हे हिन्दीको पूरा करना है। इन सव आवश्यकताओको पूरा करनेके लिए और सव क्षेत्रोमे भारतको जगत्के समुन्नत देशोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर चलानेके लिए हिन्दीको विशाल तथा वृहद् शब्दावली चाहिए। इतना ही नही, नयेसे नये विचारो, ऊँचीसे ऊँची कल्पनाओ

और सूक्ष्मसे सूक्ष्म भावो तथा अनुभूतियोकी अभिव्यक्तिके लिए भी उसमे नये-नये शब्द बनानेकी क्षमता होनी चाहिए। यदि देखा जाये तो आज हिन्दी शब्दावली अनुवाद तथा सग्रह अवस्थामे है।

भारतके सविधानके प्रारूपका हिन्दी अनुवाद प्रकाशित होनेपर भाषाई तथा राजनैतिक क्षेत्रोमे उसकी शब्दावली तथा भाषाकी जो आलोचना हुई तथा उसपर जो चर्चा या वाद-विवाद हुआ, उससे हिन्दी शब्दावलीके रूपके सम्बन्धमे तीन मत सामने आये। प्रथम, हिन्दीमे अन्तर्राष्ट्रीय शब्दोको स्थान मिले, दूसरे, हिन्दी शब्दावली सस्कृतनिष्ठ हो, तीसरे, वह दिल्लीके आस-पास तथा उत्तर भारतमे बोले जानेवाले सरल शब्दोसे भरपूर हो। विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओ तथा क्षेत्रीय निहित स्वार्थोने इस चर्चाका निर्णय भाषाविज्ञानके सिद्धान्तोके आधारपर नही होने दिया।

एक शिक्षक तथा साहित्यसेवी होनेके नाते मैं अपनी युवावस्थासे ही राष्ट्रभाषाके प्रश्नमे दिलचस्पी लेता रहा हूँ। शब्दोके अध्ययनसे भी मुझे प्रेम है। सन् १९३४ के लगभग प्रो० वहीदुद्दीन 'सलीम' पानीपती-द्वारा लिखित तथा अजुमन तरक्कीए उर्दू, हैदराबाद-द्वारा प्रकाशित उर्दू शब्द-रचना सम्बन्धी पुस्तक 'वज़ा इस्तलाहात' को पढनेका अवसर मुझे प्राप्त हुआ था। तब मैने चाहा था, कि उस ढगकी पुस्तक हिन्दीमे भी होनी चाहिए। हिन्दी शब्दो सम्बन्धी उपर्युक्त चर्चा-से मुझे प्रेरणा मिली और मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा कि हिन्दीको इस समय वैसी पुस्तककी बडी आवश्यकता है, जिससे हिन्दी शब्द-रचना-कार्य राजनीति, हठ तथा कदाग्रहकी दलदलसे निकलकर वैज्ञानिक, व्यापक तथा समन्वयात्मक ढगसे हो।

मैं अपने सीमित साधनो तथा भाषाविज्ञानके अल्पज्ञानको जानते हुए भी अत्यन्त धैर्यसे सलग्नता तथा परिश्रमके साथ इस विषय तथा समस्या-को समझने तथा उनपर विचार करने लगा और भाषाविज्ञानके हिन्दी,

उर्दू तथा अँगरेजी साहित्यका अध्ययन करने लगा। आठ-दस वर्षके तपरूपी यज्ञके फलस्वरूप मैं यह ग्रन्थ हिन्दी-प्रेमियो तथा विद्वानोके समक्ष सहर्ष उपस्थित कर रहा हूँ।

मैंने इस पुस्तकमे शब्द-रचनाकी विविध सैद्धान्तिक पद्धतियो तथा उपपद्धतियो और उनके व्यावहारिक प्रयोगको सविस्तार तर्कपूर्ण तथा वैज्ञानिक ढगसे सैकडो उदाहरणोके साथ दिया है। पाणिनि तथा यास्क कालसे सस्कृतकी प्राचीन शब्द-रचना परम्परासे लेकर आज तककी हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषाओ और समुन्नत युरोपीय तथा एशियाई देशोकी भाषाओकी शब्द-रचना परम्पराओको इसमे दिया गया है। इसमे हिन्दी शब्द-रचना सम्बन्धी सभी विचारधाराओके पक्ष-विपक्षकी युक्तियोको तार्किक तथा सैद्धान्तिक विधिसे निष्पक्षताके साथ उपस्थित करनेका भरसक प्रयत्न किया गया है। सभी विचार-धाराओके समर्थक विद्वानोके प्रति मेरे हृदयमे आदर-भाव है। समस्त पुस्तकमे वैज्ञानिक, व्यापक तथा समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है, जिससे वह हिन्दीकी अन्तर्राष्ट्रीय, अखिल भारतीय तथा साधारण जनताकी आवश्यकताओको पूरा कर सके। शब्द-रचना-जैसे गम्भीर तथा शुष्क विषयको सरल, सरस तथा रोचक शैलीसे दिया गया है।

हिन्दी एक सशक्त, सप्राण, जीवित तथा सग्राहक भाषा है। भारतकी प्राचीन भाषाओ, आधुनिक भारतीय भाषाओ तथा विदेशी भाषाओके शब्द, तत्त्व, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, चिह्न, सकेताक्षर तथा सूत्र और आचलिक जनपदीय तथा किसानो और कारीगरोंके शब्द अनेक ढगोसे हिन्दीके आदि कालसे उसमे रचते-पचते आ रहे हैं। भविष्यमे यह प्रक्रिया और भी अधिक परिमाणमे होगी और उससे हिन्दीकी गतिशीलता तथा शब्द-भण्डार खूब बढेंगे। यह पुस्तक साहित्यकारोको शब्द-रचनाके नये साँचे देनेमे समर्थ होगी, ऐसा विश्वास है।

इस पुस्तकमे शब्दो-सम्बन्धी बहुत-सी नयी बातें, प्रेरक तथा उत्तेजक विचार है और शब्दोके अध्ययन तथा सग्रहके इतने क्षेत्र बताये गये है कि सैकडो हिन्दी विद्वान् भी उस कामके लिए कम है।

इस पुस्तकके लेखन-कालमे हिन्दी तथा भारतकी दूसरी आधुनिक भाषाओमे भिन्न-भिन्न सस्थाओ, केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय तथा प्रान्तीय सरकारो, तथा और व्यक्तियो आदि-द्वारा शब्द-रचना कार्य इतने बडे परिमाणमे हुआ है, कि उसका परिचय यहाँ देना कठिन है। उसका कुछ अनुमान पुस्तकके अन्तमे दिये हुए तद्विषयक परिशिष्टसे हो जायेगा। उनसे सभीको लाभ उठाना चाहिए।

प्रचलनकी कसौटी और व्यवहारके परिमार्जन तथा सस्कारसे ही शब्द टकसाली बनते है। तभी उनका अटपटापन, नयापन, कर्कशता, अपरिचितता तथा कठोरता आदि दूर होते है और वे कर्णप्रिय, प्रयासलाघवतापूर्ण तथा सरल आदि बनकर भाषाका अग बनते हैं। और जो शब्द प्रचलनकी कसौटीपर पूरे नही उतरते वे प्रयोग-बाहर हो जाते हैं, मर जाते हैं। आज मुद्रणालयो, समाचारपत्र-पत्रिकाओ, शिक्षा प्रचार, चलचित्र, रेडियो तथा सम्मेलनो आदिके द्वारा शब्दोके प्रसार तथा प्रचलनमे तेज़ गतिसे इतना महान् कार्य हो रहा है कि शब्दोका प्रचार अत्यन्त अल्प कालमे विशाल क्षेत्रमे हो रहा है। हमारे हिन्दी साहित्यकार, कवि, पत्रकार, चित्रपट निर्माता तथा रेडियोपर कार्यक्रम उपस्थित करनेवाले इन साधनोसे हिन्दी शब्दोके प्रचार तथा प्रचलनमे अधिकसे अधिक सहायता कर सकते हैं।

मैं पहले कह चुका हूँ कि यह विषय महान् है, सामग्री कम है, मेरा ज्ञान अल्प तथा मेरे साधन सीमित हैं। इससे सम्भव है, कि यह पुस्तक जितनी अच्छी होनी चाहिए थी, वैसी न बन पायी हो। फिर भी मैंने अपनी ओरसे इसे अत्यन्त उपयोगी बनानेका भरसक प्रयत्न किया है।

इसमे त्रुटियाँ होगी। इसलिए पाठको तथा विद्वानोसे मेरा विनम्र निवेदन है, कि वे इसकी त्रुटियो तथा शब्द-सम्बन्धी अशुद्धियोंसे मुझे सूचित करने तथा अपने उपयोगी सुझाव देनेका कष्ट करनेकी कृपा करें, जिससे उनके प्रकाशमे पुस्तकमे समुचित सशोधन किये जा सकें।

इस पुस्तककी तैयारीमे जिन-जिन विद्वानोकी पुस्तको आदिसे सहायता ली गयी है, उन सबका मैं आभारी हूँ। केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालयके हिन्दी विभागके विशिष्ट अधिकारी स्व० डॉ० यदुवशी तथा वयोवृद्ध डॉ० सिद्धेश्वर वर्माने अपना अमूल्य समय देकर इस पुस्तककी पाण्डुलिपिको आद्योपान्त देखकर इसके सशोधनके लिए अपने भाषाविज्ञान तथा हिन्दी शब्द-रचना कार्यके दीर्घ अनुभवपर आधारित अत्यन्त उपयोगी सुझाव दिये तथा डॉ० सिद्धेश्वर वर्माजीने इसकी प्रस्तावना भी लिखनेकी कृपा की। इन सुझावोसे पुस्तकका भापावैज्ञानिक स्तर निस्सन्देह ऊँचा हुआ है और मैं उन दोनोका अत्यन्त आभारी हूँ। मित्रवर प० निरजनलालजी शास्त्री, एम० ए० अनुसन्धान सहायक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्लीसे भी समय-समयपर जो सहायता मिली है, उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। श्रद्धेय काका साहब कालेलकर, भू० पू० ससद् सदस्य तथा सदस्य वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली बोर्ड, इस पुस्तकको लिखनेमे आरम्भसे ही मेरा उत्साह बढाते रहे हैं। अत मैं उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट किये बिना नही रह सकता।

भारतीय ज्ञानपीठके सस्थापक माननीय श्री साहू शान्तिप्रसाद जैन, अध्यक्षा श्रीमती रमा जैन, प्रन्यासी स्व० बाबू छोटेलालजी जैन तथा मन्त्री श्री लक्ष्मीचन्द्रजी जैनका मैं अत्यन्त आभारी हूँ, जिनके सहयोगसे यह गम्भीर तथा व्यय-साध्य ग्रन्थ इतने सुन्दर ढगसे प्रकाशित हो रहा है।

यदि इस ग्रन्थसे हिन्दी शब्द-रचना कार्य तथा हिन्दी शब्दोके अध्ययनमे कुछ भी प्रगति हुई और शिक्षित वर्गमे शब्द प्रेम बढा, तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूंगा ।

—*माईदयाल जैन*

४५६६, डिप्टीगज,
दिल्ली–६
२३ अक्तूबर ६६

अनुक्रम

---

* पृष्ठ ३० पर 'व्युत्पत्ति' के स्थानपर 'व्युत्पत्तिसे शब्द बनाना' नामक सातवाँ परिच्छेद प्रारम्भ होता है ।

• •

संकेत सूची

अ०	—	अरबी भाषा
अं०	—	अंगरेज़ी भाषा
अव्य०	—	अव्यय
उप०	—	उपसर्ग
क्रि०	—	क्रिया
तु०	—	तुरकी भाषा
न०	—	नया शब्द
पु०	—	पुल्लिंग
पुर्त०	—	पुर्तगाली भाषा
प्रत्य०	—	प्रत्यय
फा०	—	फारसी भाषा
भाववा०	—	भाववाचक संज्ञा
वि०	—	विशेषण
सं०	—	संस्कृत
सू०	—	सूचना
स्त्री०	—	स्त्रीलिंग
हिं०	—	हिन्दी

हिन्दी शब्द-रचना

पहला परिच्छेद

शब्दका महत्त्व

समस्त विद्या, शिल्प और कला शब्द-शक्तिसे सम्बद्ध है। शब्द-शक्तिसे पूर्ण या सिद्ध समस्त वस्तुएँ विवेचित और विभक्त की जाती हैं।[1]

—भर्तृहरि

आरम्भमें शब्द था और शब्द परमात्माके साथ था और यह शब्द परमात्मा था।

—बाइबिल

शब्द मानवको स्वाधीन बनाता है। जो व्यक्ति अपने भावोंको वाणी नहीं दे सकता वह ग़ुलाम है। बोलना स्वतन्त्रताका काम है। शब्द ही स्वाधीनता है।

—अज्ञात

शब्द शक्ति है। शब्द ब्रह्म है। शब्द परमात्मा है। शब्द ही मनके घाव पूर सकता है। शब्द तीरसे भी अधिक मर्मवेधी है। शब्द मोहिनी है। शब्द ही फूट डालते हैं। शब्द अमृतसे भी अधिक जीवनदायक है। शब्द हाइड्रोजन बमसे भी अधिक संहारक है। कौन-सा रस है, जो शब्दो-

---

१. सा सर्वविद्याशिल्पाना कलानां चोपबन्धिनी।
तद्वशादभिनिष्पन्न सर्वं वस्तु विभज्यते।

—वाक्यपदीय १। १२५

मे नही है। शब्दकी महिमा अपार है। जिसने शब्दको साध लिया, उसने सब कुछ साध लिया।

ससारकी अनेक छोटी-बडी बोलियो, भाषाओ और साहित्योका आधार शब्द ही है। यही उनकी इकाई है। शब्दोके महत्त्वको अनेक उपमाओसे समझाया जा सकता है। शब्द फूल है—जिनसे रग-बिरगी और सुगन्धित फूलमालाएँ बनती है। शब्द मोती है—जिनसे कण्ठहार बनते है। शब्द रुपये है, जिनसे कोश बनते है। शब्द ईंटें है, जिनसे भाषा-भवन तैयार होते है।

जैसे किसी व्यक्तिकी मुखाकृति और रंग-ढग उसके मनोभावो तथा चरित्रको प्रकट करते है, ठीक वैसे ही उसके उच्चारित शब्द मनोदशा तथा चरित्र समझनेमे सहायक होते है। किसी भी राष्ट्र, जाति या जन-समुदायकी भाषा उसके विशेष गुणो तथा चरित्रको बताती है। भाषाके शब्दोको कालक्रमसे अध्ययन करनेसे उसके बोलनेवालोके चरित्रके उत्थान-पतन, रीति-रिवाज, इतिहास, सभ्यता, सस्कृति, समाज, शासनतन्त्र आदि-की उन्नति और अवनतिका पता लग जाता है।

अभी हालमे प्रकाशित दो पुस्तकोके विद्वान् लेखकोने शब्दोकी सहायतासे दो देशोके जीवन-चित्र खीचने और इतिहासकी रूपरेखा बनानेका सफल प्रयत्न किया है। इनमे-से एक है डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल-द्वारा लिखित 'पाणिनिकालीन भारत', और दूसरी है श्री ओवेन बारफील्ड-लिखित 'हिस्ट्री इन इग्लिश वर्ड्स'। डॉक्टर अग्रवालने भारतके प्रसिद्ध सस्कृत वैयाकरण पाणिनिके सस्कृत व्याकरण अष्टाध्यायीमे आनेवाले शब्दो-की सहायतासे पाणिनिकालीन भारतका इतना सुन्दर चित्र खीचा है कि पुस्तक पढते ही पाणिनिकालीन समाजका चलचित्र आँखोके आगे आ जाता है। यह एक छोटे-से कालकी पूरी कहानी है। श्री ओवेन बारफी-ल्डने भी अँगरेजी शब्दोकी सहायतासे अँगरेज जातिके सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा साहित्यिक इतिहासकी अच्छी झलक दिखायी

है। काश, ऐसे सत्प्रयत्न हर-एक देशमे हर-एक भाषाके शब्दोके माध्यम-से किये जाते।

हिन्दी शब्दो तथा मुहावरोसे भी भारतकी स्थितिको दिखाया जा सकता है। वैदिक काल तथा पौराणिक कालके बहुत-से शब्द आजकल प्रयोग-बाहर होनेपर भी इसी दृष्टिसे अध्येय है। राजपूती कालके शब्द और मुहावरे—जैसे, जौहर, केसरिया बाना, बीडा उठाना, स्वयवर, चूडी पहनना तथा राखी-बन्द भाई, महाराणा प्रताप, भामाशाह, पन्नदाई आदि अपने अन्दर पूरी कहानियाँ रखते है। इसी प्रकार भारतमे स्वातन्त्र्यसघर्ष युगके कुछ शब्द भी आज हमारे कानोमें गूँजते है और हमारी आज़ादीकी लडाई-के अनेक दृश्य हमारी आँखोके सामने लाते है। स्वराज्य, वन्दे मातरम्, भारतमाताकी जय, इन्कलाब ज़िन्दाबाद, स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, बग-भग, स्वदेशी आन्दोलन, बाल-पाल-लाल, नरम दल, सत्याग्रह, असहयोग आन्दोलन, गान्धी टोपी, महात्मा गान्धीकी जय, २६ जनवरी, टोडी बच्चा हाय-हाय, नमक सत्याग्रह, डाँडी मार्च, भारत छोडो तथा यरवदा मन्दिर आदि शब्द हमें आज भी याद है। भगतसिह, बिस्मिल, आज़ाद, काकोरी केस आदि नाम भी हमे भारतकी इन्कलाबी पार्टीके कामोकी याद दिलाते हैं। नेताजी, जयहिन्द, दिल्ली चलो, तथा आजाद हिन्द फौज, आदि शब्द भारतकी आज़ादीके लिए भारतसे बाहर किये गये प्रयत्नोकी याद दिलाते है। पन्द्रह अगस्तका नाम सुनते ही किस हिन्दुस्तानीका मन स्वतन्त्रताके उल्लास और उमगसे न भर जायेगा ? राशन, राशनकार्ड, परमिट, कोटा, चोरबाज़ारी, नफाखोरी आदि शब्द सन् १९४४ के लगभग शुरू होनेवाले भारत-व्यापी अन्नसकटकी याद दिलाते है। पचवर्षीय योजना, भाखरा-नाँगल बाँध तथा दामोदर घाटी योजना आदि नाम भारतके औद्योगिक निर्माणकी कहानियाँ सुनाते है। भूदान, श्रमदान, सम्पत्तिदान, ग्रामदान, विनोबा भावे तथा 'सर्वं भूमि गोपालकी' आदि शब्द श्री विनोबा भावेके उस प्रयत्न और महान् कार्यको प्रकट

करते है, जो कि वे कुछ वर्षोसे पैदल घूम-घूमकर कर रहे है। कहनेका तात्पर्य यही है कि हर शब्दमे भावो तथा अनुभूतियोको जगानेकी शक्ति और गुण अन्तर्निहित है।

यह तो शब्दोमे इतिहासकी बात हुई। शब्दोका इतिहास और भी अधिक रोचक है। इस पुस्तकमे शब्दोके इतिहास और शब्द-रचनाकी बातें काफी मिलेंगी। यहाँ नमूनेके तौरपर कुछ उदाहरण दे रहे है। सस्कृत शब्द उपाध्यायके ओझा, झा और पाधाजी रूप हो गये। इसी प्रकार अरबी शब्द मौलवी, मुल्ला और कठमुल्ला एक ही शब्दके विभिन्न रूप है। अँगरेजी शब्द गार्डने गार्ड और गारद दो रूप धारण कर लिये। अँगरेज़ी लैण्टर्नका लालटैन बन गया। जनताका शब्द-प्रयोग सबसे बडा नियम है। जनताने केरोसीन आयलको मिट्टीका तेल बना दिया। जनताने देखा कि धरतीको बरमो बेधकर बनाये कुओसे तेल निकालते है, इसलिए यह तेल मिट्टीका तेल हुआ। कितनी रोचक तथा रसीली बातें है ये। गल्पो तथा कहानियोसे भी अधिक रोमास शब्दोमे है। पर उसका आनन्द शब्दोके अध्ययनसे ही मिल सकता है।

शब्द नये हो या पुराने, वे अब भी चमकते है और उन युवक-युवतियो, कवियो, गायको, लेखको तथा वक्ताओके काम आनेको तैयार है—जो उन्हें समझकर काममें लाना चाहें।

शब्दोको समझनेका प्रयत्न करना ही तो शब्दोका अध्ययन है। प्राचीन कालमे भारतमें शब्दोके अध्ययनकी परिपाटी थी। यास्कने वेदोके शब्दोको समझा और उस महान् शब्दशास्त्रीने दूसरोको वेदोके शब्द समझानेके लिए निरुक्त तैयार किया, जिसमे वैदिक साहित्यमे आनेवाले शब्दोकी धातुओको, उनकी व्युत्पत्ति तथा अर्थोको समझाया गया है। फिर पाणिनि, पतजलि, कैयट, नागेश, भर्तृहरि, अमरचन्द आदि विद्वानोने सस्कृत शब्दोके सम्बन्धमें बडा काम किया। इससे प्रकट है कि प्राचीन भारतमें भी शब्दोके अध्ययनपर अधिक बल दिया जाता था।

फिर अपभ्रंश भाषाके युगमे, आठवी शताव्दीसे तेरहवी शताव्दी तक सैंकडो कवियोने एक नयी साहित्यिक तथा जनभाषाका निर्माण किया।

यह अपभ्रंश द्राविड भाषा-भाषी क्षेत्रोको छोडकर भारतके बडे भागकी साहित्यिक तथा जन-भाषा थी। अपभ्रंशके लेखकोने संस्कृत शब्दोके तत्सम रूपोके अक्षर-भेदसे ऐसे शब्द तैयार किये कि भाषामें आमूल परिवर्तन हो गया। इसी प्रकार हिन्दीके तद्भव शब्द संस्कृत शब्दोका अध्ययन करके हिन्दीके लिए सरल शब्द बनानेकी तीव्र भावना या विचारोकी अभिव्यक्तिके लिए शब्दसाधनकी खोजसे बने। या यो कहिए कि पुराने संस्कृत शब्दोसे हिन्दी शब्दोके नये साँचे तैयार हुए और कठिन भाषाने सरल बनकर जनताकी बोलीका रूप लिया।

आज हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओके विद्वानोके लिए यह आवश्यक है कि वे शब्दोका सम्यक् अध्ययन करें, उनकी बनावट, उनसे अनेक नये शब्द बनने-बनानेकी विधियोंका ध्यानपूर्वक अध्ययन करें, अपने भावोकी अभिव्यक्तिके लिए नये-नये शब्द सिद्ध करें, सूक्ष्मसे सूक्ष्म विचारो तथा ऊँचीसे ऊँची कल्पनाओको प्रकट करनेके लिए शब्द, मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ बनायें। यह तभी हो सकता है जब कि लेखक, कवि, वक्ता तथा सम्पादक आदि बननेसे पहले विद्वान् अपना कुछ समय और शक्ति—अत्यन्त आवश्यक काम—शब्दोके अध्ययनमे लगायें।

•

दूसरा परिच्छेद

संसारकी भाषाएँ और हिन्दी

शब्द-रचनाके महान् कामको विधिवत् तथा वैज्ञानिक ढंगसे पूरा करनेके लिए यह बहुत आवश्यक है कि हर भाषाके नये शब्द उसी भाषाकी प्रकृतिके अनुसार बनाये जाये। भाषा-प्रकृतिको समझनेकी प्रक्रियामे भाषा-वैज्ञानिकोने ससारकी भाषाओके तुलनात्मक अध्ययनके पश्चात् वर्गीकरणके लिए उन्हें भिन्न-भिन्न भाषा-परिवारोमे बाँट दिया है। भाषा-विशेषके वर्तमान स्वरूपको समझनेके लिए केवल उसके रूप, ध्वनि और अर्थका ज्ञान ही पर्याप्त नही है, वरन् एक ही मूलसे निकली अन्य भाषाओ तथा बोलियोका अध्ययन भी आवश्यक है। प्रत्येक भाषा अपनी अन्तरग प्रकृतिके अनुसार देश और कालके व्यवधानसे परिवर्तित हो जाती है। अत भाषा-वैज्ञानिकोने भाषाओके तुलनात्मक और ऐतिहासिक अध्ययनकी ओर प्रेरित होकर भाषा-वर्गीकरणको जन्म दिया।

भाषा-वर्गीकरणके अनेक आधार हो सकते हैं, जैसे महाद्वीप, देश, धर्म, भाषाओकी आकृति, परिवार प्रभाव और अन्तमें काल या भाषाका इतिहास। इन आधारोके दोष-गुणोका विवेचन न तो यहाँ वाछित है और न उसकी आवश्यकता है। देशके आधारपर भाषाओका वर्गीकरण करना अवैज्ञानिक है। धर्मके आधारपर भाषाओका वर्गीकरण प्राचीन कालमे होता था—जैसे, आर्य-भाषाएँ, मुसलिम भाषाएँ तथा ईसाई भाषाएँ। पर धर्मका भाषाकी प्रकृति, आकृति और परिवारसे कोई अभेद सम्बन्ध न होनेके कारण भाषाओके वर्गीकरणका यह आधार भी छोड दिया गया।

यह कहना कि संस्कृत हिन्दुओकी भाषा है और अरबी तथा फारसी मुसलमानोकी भाषाएँ है, हिन्दी हिन्दुओकी भाषा है, उर्दू मुसलमानोकी भाषा है—सर्वथा गलत है। भाषाओको आकृतिके आधारपर भी वर्गीकृत किया गया है। इसमे भिन्न-भिन्न भाषाओकी वाक्य-रचना एवं रूप या पद-रचनाके आधारपर भाषाओका वर्गीकरण किया गया था, जैसे अयोगात्मक एव योगात्मक (प्रश्लिष्ट, अश्लिष्ट, श्लिष्ट) भाषा-विज्ञानके इतिहासमे इसकी उपयोगिता तथा अनुपयोगितापर वाद-विवाद चलते रहे और अन्तमें इसकी तात्त्विक या व्यावहारिक उपयोगिता न देखकर भाषाओका वर्गीकरण परिवार एव प्रभावके आधारपर किया गया। यही आजकल अधिक उपयोगी और महत्त्वपूर्ण आधार माने जाते है। भाषाओके शब्दार्थ, रचना या सम्बन्ध-तत्त्व एव ध्वनिसाम्यके अनुसार विश्वकी भाषाओको कुलो या परिवारोमें बाँटा गया है। कालान्तरमे उनमे जो परिवर्तन देश, समाज या परिस्थितियोके कारण हुए है वे तो सरलतासे गिने ही जा सकते है।

जो भाषाएँ परिवार और आकृति-साम्यकी दृष्टिसे एक दूसरेके समीप नही मानी जाती उनका तुलनात्मक अध्ययन प्रभावके आधारपर किया जाता है। हिन्दी और तमिलमें पारिवारिक और आकृति-साम्य न होनेपर भी दोनोपर पडे एक-से प्रभावोसे आये शब्द और ध्वनिके साम्यको इसीलिए भारतीय भाषाओके अध्ययनमे प्रधानता दी जाती है।

विश्वकी अधिकाश भाषाएँ योगात्मक हैं। हिन्दी भी योगात्मक भाषा है। योगात्मक भाषाओमें सम्बन्धतत्त्व और अर्थतत्त्वका योग होता है। इनके शब्द विभक्ति और प्रत्यय आदिके जोडनेसे बनते है। पारिवारिक दृष्टिसे हिन्दी भारोपीय परिवारकी भाषा है।

भाषाओके पारिवारिक वर्गीकरणमें शब्दोके अर्थ और ध्वनिसाम्य-पर भी ध्यान दिया जाता है। इस साम्य-निर्धारणमें भाषाओके इतिहास, आपसी सम्बन्ध और अन्य भाषाओंसे सम्बन्धको भी विस्मृत नही किया

जाता। शब्द समूहके साम्यमें मूल शब्दोको ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं जो कि प्राय. अपरिवर्त्य ही रहते हैं, यथा—क्रिया और सर्वनाम। तद्भव शब्दोके साम्य और व्याकरणिक रचना-साम्यको भी पारिवारिक वर्गीकरणमें आधार बनाते हैं। जिन भापाओमें धातुसे शब्द बनाना, मूल शब्दमे पूर्व सर्ग, मध्य सर्ग और अन्त सर्ग जोडना तथा वाक्यगठन आदि एक-जैसे होते है, उन्हे एक ही परिवारमे गिनते है।

ससारकी सारी भापाओका सर्वांग-सम्पूर्ण तुलनात्मक और ऐतिहासिक अध्ययन सम्पन्न नही हो सका अत पारिवारिक वर्गीकरण भी निश्चयात्मक स्थितिमे नही आया। भाषातत्त्वके सभी विद्वान् इस वर्गीकरणकी सख्या-पर भी एकमत नही हो सके हैं। एकसे लेकर एक सौ परिवार तक मानने-वाले लोग मौजूद है और कुछ अमेरिकी विद्वान् तो अकेले अमेरिकामें ही सौ परिवार मानते है। हम यहाँ केवल प्रमुख परिवारोका ही निर्देश कर रहे हैं। विशेष ज्ञानके लिए भापा-विज्ञानका अध्ययन आवश्यक है।—

१. भारोपीय

इसको आर्य, भारत-जर्मनी और इण्डोकेल्टिक कुल भी कहते है। हम इसे भारोपीय भाषा-कुल कहेंगे। इस कुलमें नयी-पुरानी कई भापाएँ सम्मिलित है और वे उत्तर भारत, अफगानिस्तान, ईरान तथा प्राय. सारे युरॅपमें बोली जाती है। सस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, पुरानी ईरानी, ग्रीक-यूनानी, तथा लातीनी आदि पुरानी भाषाएँ और अँगरेजी, फ्रान्सीसी, जर्मन, नयी ईरानी, पश्तो, हिन्दी, मराठी, बगला, गुजराती, पजाबी, उर्दू, कश्मीरी, सिन्धी, उडिया, बिहारी, असमिया तथा राजस्थानी भाषाएँ है।

२. सैमिटिक या सामी

इसमें यहूदियोकी पुरानी भाषा हिब्रू और अरबी भाषा मुख्य हैं। हिब्रूमें मूल बाइबिल और अरबीमें कुरान-शरीफ लिखा है। प्रकृति और

शब्द-रचनाके मामलेमें यह भाषा भारोपीय भाषा-परिवारसे सर्वथा भिन्न है। आजकल इस कुलकी मुख्य भाषा अरबी है। अरबीका प्रभाव उर्दूपर विशेष रूपसे पड़ा है और भारतमे हिंदू-मुसलमानोके साथ-साथ रहनेसे सहस्रो अरबी शब्द हिन्दीमें ही नही वरन् भारतकी सभी आधुनिक भाषाओमे स्थान पा गये है।

३. हैमिटिक या हामी

इस कुलकी भाषाएँ उत्तरी अफ्रीकामें बोली जाती हैं, जिनमें मिस्रकी प्राचीन भाषा काप्टी मुख्य है। पर अब मिस्रकी भाषा अरबी हो गयी है। अब इस कुलमें बर्बर और ईथियोपिक या ऐबिसीनियन बोलियाँ मुख्य है।

४. चीनी या एकाक्षरी

इसमे चीन, तिब्बत, बर्मा, स्याम तथा हिमालयके भीतरी प्रदेशकी भाषाएँ सम्मिलित है। इनमें चीनी भाषा सबसे प्रधान है।

५. यूराल-अलताई या तुर्की

इसको तुरानी या सीरियन कुल भी कहते हैं। इस कुलमे चीनके उत्तरमें मगोलिया तथा साइबेरियाकी बोलियाँ है। तुर्की या तातारी भाषा भी इस कुलकी है। तुर्की भाषाके बहुत-से शब्द हिन्दीमें भी मिलते है!

६. द्राविड़ कुल

दक्षिण भारतकी तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कन्नड भाषाएँ इस कुलमें है। ये उत्तर भारतकी भाषाओसे बिलकुल भिन्न हैं। पर इन भाषाओके शब्द सस्कृतमे और सस्कृत शब्द इन भाषाओमें मिलते है तथा सस्कृतके माध्यमसे वे शब्द हिन्दीको भी उत्तराधिकारमें मिले है।

७ मलय-पॉलीनेशियाई, ८. बाण्टू, दक्षिणी अफ्रीकाके आदि-निवासियोंकी भाषाएँ, ९. बुशमैन आदि अफ्रीकी कुल, १० अमेरिकाकी रेडइण्डियन भाषाओंका कुल और ११. आस्ट्रेलिया-पापुवन, १२. काकेशी, १३ जापानी-कोरियाई, १४. सूपनी।

यो कुछ विद्वान् मलय और पॉलीनेशियाई और जापानी और कोरियाईको भी अलग-अलग मानते हैं। और एक अफ्रीकी समुदायमें ही बुशमैनकी तरह सूदानी, सामो, हामी और बाण्टूको गिनते हैं। इन भाषा-परिवारोंकी किसी भी भाषा या बोलीसे हिन्दीका कहने योग्य सम्बन्ध नहीं है, यो इनके इने-गिने शब्दोंका हिन्दीमें मिलना दूसरी बात है।

उपर्युक्त भाषा-परिवारोंपर ध्यानसे विचार करनेसे यह भलीभाँति प्रकट हो जायेगा कि हिन्दीका मुख्य सम्बन्ध भारोपीय भाषा-कुलकी भारतीय आर्य उपकुलकी भाषाओंसे है।

•

तीसरा परिच्छेद

हिन्दीकी प्रकृति

भिन्न-भिन्न जातियो और व्यक्तियोकी प्रकृति और गुण विशिष्ट होते हैं। इसी प्रकार हर भाषाकी अपनी प्रकृति, विशेषताएँ, अच्छाइयाँ और बुराइयाँ होती है।

भाषाकी प्रकृतिसे आशय है—भाषाके, भाषा-कुलके गुण, उसकी बनावट, ध्वनियोकी विशेषताएँ, व्याकरणकी विशेषताएँ, बाहरी रूप तथा आन्तरिक स्वरूप और उसके वैशिष्ट्य। श्री रामचन्द्र वर्माके शब्दोमें "प्रत्येक भाषाकी प्रकृति उसके व्याकरण, भाव-व्यजनकी प्रणालियाँ, मुहावरो, क्रिया-प्रयोगो और तद्भव शब्दोंके रूपो या बनावटो आदिमें निहित रहती हैं।"[1] भाषाके नियमो, उसके व्याकरणके नियमो, भाषाकी प्रवृत्तियो तथा मूल तत्त्वो आदिसे ही भाषाकी प्रकृतिका ज्ञान होता है।

किसी भाषाके व्याकरणसे उसके निर्माणका पता लगता है, भाषाकी प्रकृतिका नही। श्री रामचन्द्र वर्माने ठीक ही लिखा है कि, "व्याकरण तो उन्ही बातोका विचार करता है, जो उसकी क्रियात्मक अभिव्यक्तिके कारण हमारे सामने आती हैं। हाँ, व्याकरणके नियमो और तत्त्वोका विचार करके हम उस प्रकृतिका कुछ-कुछ परिचय पा सकते हैं।"[2] भाषाकी प्रकृतिको समझनेमे उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, देश या खण्डके भौगोलिक प्रभावो, जातियोके कण्ठ, जीभ तथा तालू आदिकी रचना

१ अच्छी हिन्दी, दसवाँ सस्करण, पृ० १६।
२ वही, पृ० १७, १८।

आदिका ज्ञान और आसपासकी भाषाओके तुलनात्मक अध्ययन बडे सहायक होते है।

हिन्दी भाषाकी प्रकृतिके यथार्थ ज्ञानकी आवश्यकता पहले इतनी अधिक न थी जितनी कि आज है। हिन्दी भाषासे महान् अपेक्षाएँ तथा माँगें आज की जा रही हैं। आज हिन्दीकी सबसे बडी आवश्यकता यह है कि वह सूक्ष्म भावोकी अभिव्यक्तिका साधन तो बने ही साथ ही प्रशासन, न्याय, कूटनीति, उच्चतम वैज्ञानिक शिक्षा और विश्वविद्यालयोकी शिक्षाका माध्यम भी बन सके। इसके लिए लाखो नये पारिभाषिक अर्द्धपारिभाषिक तथा सामान्य शब्दोकी आवश्यकता है। ये और हिन्दीसे की जानेवाली इन सब अपेक्षाओकी पूर्ति हिन्दीकी प्रकृतिका सम्यक् ज्ञान प्राप्त किये बिना नही हो सकती।

हिन्दीकी प्रकृति तथा विशेषताओका वर्णन करनेसे पहले भाषाकी प्रकृतिके सम्बन्धमें कुछ महत्त्वपूर्ण बातें तथा अर्जनके उपाय बता देना आवश्यक है। भाषा एक परम्परागत सम्पत्ति है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी माँ तथा परिवारसे लोकभाषा सीखता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति भाषाको अन्य परम्परागत सम्पतियोके समान प्राप्त करता है। भाषाकी प्रकृति अपनेको बचानेकी है। हर-एक व्यक्तिको अपनी मातृभाषासे मोह होता है। वह अपनी भाषाको तर्क या ज्ञानसे नही परखता। यद्यपि विकास भाषाकी प्रकृति है और मनुष्य अपनी भाषामें अनेक परिवर्तन करता है, फिर भी परम्परासे प्राप्त भाषा उसके साथ लगी रहती है। फल यह होता है, कि बोलनेवालोके लहजे (टोन) सदा अपने रह सकते हैं। अँगरेज़ीका उच्चारण भिन्न-भिन्न देशोके लोग और भारतमे भिन्न-भिन्न प्रदेशोके लोग अपनी-अपनी परम्पराके अनुसार करते है।

भाषा एक अर्जित सम्पत्ति भी है। अर्जनसे परम्परागत भाषाका परिमार्जन और मातृभाषाका क्षेत्र-विस्तार होता है। और दूसरी बोलियोके शब्द और व्यक्तीकरण ग्रहण किये जाते है। विदेशी भाषाओके शब्द और

भाव यातायातके सुगम तथा तीव्रगामी साधनो—प्रेस, रेडियो तथा सिनेमा आदिसे ग्रहण किये जाते है। आज यह सम्पर्क अनेक साधनोके कारण बढ गया है, इसलिए भाषाओकी अर्जन-शक्ति बढ गयी है। अर्जन-शक्तिके कारण हिन्दी कितनी समृद्ध हो गयी है तथा उसका शब्द-समूह कहाँसे कहाँ पहुँच गया है, यह बतानेकी आवश्यकता नही है।

भाषा एक सामाजिक वस्तु है, व्यक्तिगत नहीं। वह किसी एक व्यक्ति या कुछ लोगोके द्वारा नही बनायी जाती। समाजमे कुछ नये शब्द, वाक्याश, मुहावरे या वाक्य औपचारिक रीतिसे उत्पन्न होते रहते हैं। समाजमें नये-नये उद्योग तथा शिल्पविज्ञान जारी होते रहते है। उनके शब्द भाषामे मुहावरो तथा लोकोक्तियोके रूपमे स्थान पाते रहते है। कुछ शब्द प्रचलित हो जानेके बाद भी सामाजिक व्यवस्था बदल जानेके कारण अपने-आप त्याज्य हो जाते हैं। शब्दोंकी ध्वनियाँ तथा अर्थ बदल जाते है। वैदिककालीन समाज-व्यवस्था, पौराणिककालीन समाज-व्यवस्था, राजपूतकालीन समाज-व्यवस्था और फिर मुसलमानकालीन तथा अँगरेजी-कालीन राज्य-व्यवस्था बदल जानेसे सहस्रो शब्द हिन्दीसे बाहर निकल गये और निकल रहे है। स्वराज्य प्राप्तिके पश्चात् राजे-महाराजे, नवाबो तथा जागीरदारोंके समाप्त हो जानेसे उनसे सम्बन्ध रखनेवाले अनेक शब्द अप्रचलित होते जा रहे हैं और नये शब्द आ रहे है।

भाषा सदा ही विकासोन्मुख तथा अर्जनशील रहती है। विकासका नाम ही परिवर्तन है। परिवर्तन कभी वृद्धिके रूपमे होता है तो कभी ह्रास-के रूपमें। भाषा अपनेमे नये-नये रूप, नये-नये अर्थ तथा नयी ध्वनियो आदिको स्थान देती है, साथ ही इनमे-से पहले कुछ रूपो, अर्थों तथा ध्वनियो आदिको छोडती भी जाती है। भाषाकी प्रकृति ही आगे बढनेकी है, उसका कोई अन्तिम रूप नही है। वैदिक सस्कृत, उत्तर सस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रश तथा आधुनिक आर्यभाषाओके रूपमे वह लगातार आगे-ही आगे बढती जा रही है। जहाँ उसकी ऐतिहासिक परम्परा अक्षुण्ण

शब्द, आर्य तथा आर्येतर भाषाओके शब्द और विदेशोकी सभी भाषाओके शब्द खपकर रच-पच जाते हैं। इसी विशेषताके कारण हिन्दीके आदि-कालसे लेकर अबतक हिन्दीके शब्द-भण्डार, मुहावरे तथा लोकोक्तियोमे वढती हो रही है और भविष्यमें भी ये बहुत बडी सख्यामे वढेंगे। इस पुस्तकके चौथे परिच्छेद 'हिन्दी शब्दावली' तथा ग्यारहवें परिच्छेद 'विदेशी शब्दोका हिन्दीकरण' से इस कथनकी पुष्टि होती है।

हिन्दी भारतके बहुत बडे क्षेत्रमे बहुत बडी जनसख्याकी साहित्यिक तथा बोल-चालकी भाषा है और हिन्दी समझी जानेका क्षेत्र तो और भी विस्तृत है। यदि आप थोडी भी हिन्दी जानते हो तो भारतमे उत्तर-से दक्षिण तक तथा पूर्वसे पश्चिम तक किसी भी तीर्थ, नगर, मण्डी और मेले आदिमे चले जायें, आपको भाषाकी कोई कठिनाई नही होगी। किसानो तथा विशेषकर मजदूरो तथा कारीगरोसे सम्पर्क बनानेके लिए हिन्दी या हिन्दुस्तानी सबसे बडी कडी है। अपने इसी गुणके कारण वह राष्ट्रभाषा बनी थी, और इसी गुणके कारण वह राजभाषाके पदपर आसीन की गयी है। इसमे जनताकी अनुभूतियाँ, उनके दु ख सुखो, उनके रीति-रिवाजो तथा उनके दैनिक जीवनकी झलक है। इसमे मिलनेवाले जनताके शब्द स्थानीय भावो रगो तथा वैचित्र्यको प्रकट करते हैं।

भारतके सन्त, साध्वियाँ, भक्त तथा सूफी फकीरोके भजन, दोहे, गीत तथा पद्य आदि हिन्दीमे है। इसे हिन्दुओ, मुसलमानो, सिखो, जैन तथा दूसरे पन्थोके सन्तो तथा सन्त कवियो—तुलसी, कबीर तथा मीरा आदिका योगदान प्राप्त है। आज भी हमारे देशके करोडो स्त्री-पुरुषोको इनसे ही सास्कृतिक प्रेरणा मिलती है। इसके अतिरिक्त इन कविताओमे भारतकी सम्मिलित सस्कृतिकी झलक है।

हिन्दी खडी बोलीके रूपमे आगरे और दिल्लीके आसपास फली-फूली और बढी है। ये दोनो शहर भारतकी राजधानी रहे है। दिल्ली तो अब स्वतन्त्र भारतकी भी राजधानी है। देशकी भाषाके विकास, गठन तथा

शब्द-समूहपर, राजधानी और उसके आसपासकी भाषाका बड़ा प्रभाव पड़ता है। राजधानीमे सरकार तथा न्यायालयोसे सम्बन्ध रखनेवाले सभ्य तथा शिष्टाचार पालनेवाले शिक्षित व्यक्ति रहते हैं, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक आयोजन होते रहते हैं, विद्वानो, लेखको तथा कवियोकी भाषा-सम्बन्धी नयी-नयी प्रवृत्तियाँ तथा साहित्यिक प्रयोग भी राजधानीमे अपेक्षाकृत अधिक परिलक्षित होते हैं। इसलिए राजधानीके आसपासकी भाषा ही टकसाली राष्ट्रभाषा बनती है, और यह गौरव हिन्दीको ही प्राप्त है। भविष्यमें स्तरीय हिन्दीके विकासमे दिल्लीके आसपासकी हिन्दी सर्वाधिक सहायक होगी।

डॉ० सुनीतिकुमारके शब्दोमे "हिन्दीकी शैली संक्षिप्त या लाघवपूर्ण एवं अलंकृत या विस्तारपूर्ण दोनो प्रकारकी हो सकती है। हिन्दुस्तानी एक ओजपूर्ण पौरुषयुक्त भाषा है, एक मरदानी जबान या पुरुखकी बोली कहकर इसके बोलनेवालो तथा प्रशंसकोने इसका वर्णन किया है।"[1] इसे आप क्लिष्टसे क्लिष्ट संस्कृतनिष्ठ बना लीजिए अथवा सरल हिन्दुस्तानी बना लीजिए, दोनो ही हिन्दी कहलायेंगी। प्रत्येक शैलीकी हिन्दी सरलतासे लिखी जा सकती है। साहित्यकी प्रत्येक विधा तथा बोलचालके प्रत्येक स्तरके लिए यह उपयुक्त है। जिस परिमाणमे यह सरल होगी उतनी ही जनताकी भाषाके अधिक समीप होगी और उसके प्रभावका क्षेत्र विशाल होगा। वैसे भारत-जैसे विशाल तथा बहुभाषी क्षेत्रमे हिन्दीकी शैली और गद्य-पद्यके शब्द-प्रयोगमें अन्तर तो बना ही रहेगा।

हिन्दीके शब्दोमें अर्थ-सन्दिग्धताको कोई स्थान नही है और एक-एक शब्दके कई-कई रूप उसी अर्थमें या भिन्न-भिन्न अर्थोमे—भाषामे चलते रहते हैं, जैसे कृष्ण, किसन, कान्हा, कन्हैया तथा लक्ष्मण, लछमन और लखन आदि। गर्भिणी शब्द स्त्रीके लिए और गाभिन शब्द मादा पशुके

---

१ भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी पृ० १५०।

लिए, स्तन स्त्रीके स्तनोके लिए पर थन मादा पशुके स्तनोके लिए आते है। बरसातसे बरसाती विशेषण रूपमे, ओढनेकी बरसाती अर्थमे और बरसातमें सोनेके स्थानके अर्थमे प्रचलित हैं। अँगरेज़ी शब्द गार्डसे गारद तथा स्लेटसे स्लेटी शब्द विकसित हुए है। स्लेटी रग भी होता है और स्लेटपर लिखनेकी बत्ती भी। बत्तीके अर्थमें स्लेटी शब्द दिल्लीके छोटे-छोटे छात्रोकी देन हैं। इतना ही नही, हिन्दीमे नियम-विरुद्ध सदृशताके सिद्धान्तपर भी शब्द बन गये है, फिर भी उनके अर्थमे सन्दिग्धता नही आयी है, जैसे 'व्रती' से नियमविरुद्ध ढर्रेपर 'चरती', 'बराती' से 'सराती' आ गया।

हिन्दी व्याकरण वास्तवमे कितना सरल और सुबोध है, इस बारेमे प्रसिद्ध भाषातत्त्वविद् डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्याका मत ध्यान देने योग्य है "वह अन्य भारतीय भाषाओकी तुलनामे अत्यन्त छोटा और सरल है। 'लिग्विस्टिक सर्वे ऑव इण्डिया' मे हिन्दी व्याकरणके मोटे-मोटे नियम एक ही पृष्ठमे आ गये है, जब कि बगला, मराठी, तमिल, तेलुगु आदि भाषाओके लिए दो-दो पूरे भरे पृष्ठ हैं, पजाबीके तीन पृष्ठ और मैथिलीके चार।"[१] हिन्दी-क्षेत्रके आस-पासके प्रदेशोमे साधारण जनता-द्वारा बोली जानेवाली अत्यन्त प्राणवान् और सार्वजनीन हिन्दी या हिन्दुस्तानीका व्याकरण तो और भी सक्षिप्त है और इसकी यह व्यावहारिकता भारत तथा विदेशोमे रहनेवाले भारतीयोकी भाषाको एक सूत्रमे बाँध सकती है। हिन्दी व्याकरण समझनेके लिए नवीन शिक्षार्थियोको न तो सैकडो सूत्र रटने पडते हैं और न उनके प्रयोगके लिए सदा सावधान रहनेकी ही आवश्यकता है। किसी भी संज्ञासे बहुवचन, लिग-भेद और कारक-भेद अत्यन्त आसानीसे बनाये जा सकते हैं। हिन्दीमें अपनाये गये विदेशी शब्दोसे भी ये सब रूप आसानीसे

१ डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या लिखित 'भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी', पृ० १५२।

वनाये जा सकते है, जैसे डॉक्टर, डॉक्टरो, डॉक्टरनी तथा डॉक्टरी आदि। इसीलिए किसी भी अहिन्दी भाषीको हिन्दी सीखनेमे व्याकरणकी कठिनाई कभी अनुभव नही होती।

हिन्दीकी स्पृहणीय विशेषता उसकी ध्वनियोके वैज्ञानिक तथा सुनिश्चित रूपमें है। डॉ० सुनीतिकुमारका कथन है "उसकी ध्वनियोका नपा-तुला और सुनिश्चित रूप है। उसके स्वर विलकुल स्पष्ट है और स्वर-ध्वनियोका परिवर्तन दुरूह नियमोसे बद्ध नही है जैसा कि कश्मीरी तथा वगलामें है। हिन्दीकी स्वर-ध्वनियाँ सरल है, जैसे अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, और ए, ऐ आदिका उच्चारण आसान है। हिन्दीकी व्यजन-ध्वनियाँ भी सुस्पष्ट है और उसके महाप्राणो घ, झ, ढ, ध या भ की सुनिश्चित ध्वनियाँ है और उसके 'ह' से हकारका ही वोध होता है। पजावीकी भाँति महाप्राणोके उच्चारणमे विभिन्न प्रकारके सविशेष उच्चारण-भेद हिन्दीमे नही होते।"[१]

ध्वनियोको सरल बनाना, कर्कश ध्वनियोको निकालना और व्यजनोको निर्वल बनाना हिन्दीकी वहुत वडी विशेषता है। वर्गोके पहले अक्षरको तीसरा अक्षर बनाना, ध्य तथा त्य को झ और च बनाना और स को ह बनाना, जैसे काकसे काग आदि, वन्ध्यासे बांझ, सत्यसे सच, केसरीसे केहरी। डॉ० धीरेन्द्र वर्माने लिखा है "आधुनिक साहित्यिक हिन्दीमे अधिकाश ध्वनियाँ तो परम्परागत भारतीय आर्यभापाके ध्वनि-समूहसे आयी है, कुछ ध्वनियाँ आधुनिक कालमे विकसित हुई है तथा कुछ ध्वनियाँ फारसी, अरवी और अँगरेजी सम्पर्कसे भी आ गयी है"[२]। फारसी और अरवी ध्वनियोके वोधक क, ज, फ, ख, ग, ऐ और औ—ऐनक, और अँगरेज़ी ध्वनि 'आ' है। घोडा, कोडा, पापड तथा

---

१. डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या लिखित 'भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी', पृष्ठ १२१।

२. हिन्दी भाषाका इतिहास, पृ० ६९-६८।

खड आदिमे जो 'ड' है वह पूर्णत स्वदेशी है। कई सस्कृत स्वरो जैसे ऋ लृ को उडा देना, ऋ को रि बना देना तथा ङ, ञ, ण के स्थानपर अनुस्वारको ला देनेसे हिन्दी लिखनेमे भी बहुत सरल हो गयी है। अब मराठी 'ळ' को भी ले लिया गया है। ध्वनियोके सामजस्यसे हिन्दीमे बहुत-से नये-नये शब्द बन रहे हैं।

हिन्दीकी अपनी विशेषता लिंग-भेद भी है। हिन्दीमें न तो सस्कृतके समान तीन लिंग है, और न अँगरेजीके समान चार। इसमे केवल दो ही लिंग हैं, स्त्रीलिंग तथा पुल्लिंग। व्याकरणसम्बन्धी लिंग-भेद अन्य भारतीय भाषाओसे कुछ कठिन अवश्य हैं। डॉ० धीरेन्द्र वर्माका कथन है "हिन्दीमें नपुसकलिंग नही है, अत प्रत्येक अचेतन पदार्थके नामको पुल्लिग या स्त्रीलिंगके अन्तर्गत रखना पडता है और तत्सम्बन्धी समस्त रूप-परिवर्तन इन शब्दोमें भी करने पडते है।"[1] हिन्दीवाले जड पदार्थोमें लिंग-भेद अभ्याससे ही करते है। हिन्दी व्याकरणके अनुसार क्रियाओ तथा विशेषणोमे भी लिंग-भेद होनेसे प्राय विशेषणोके दो-दो रूप बन जाते हैं और क्रियाओके तो अनिवार्यरूपसे दो रूप होते हैं। प्राचीन हिन्दीमें क्रियाओमे इतना लिंग-भेद न था, जैसे—राम आवत है, सीता आवत है।

हिन्दीके इस लिंग-भेदको समझना अहिन्दी-भाषियो तथा विदेशियोके लिए कठिन पडता है। फिर भी लिंग-भेदकी कठिनाई दूर करना तो असम्भव मालूम होता है। यहाँ एक बात और विचारणीय है, कि क्या हिन्दीमें अँगरेजीके समान उभयलिंग (कॉमन जेण्डर) का विकास किया जाये। सस्कृतके अनुकरणपर प्रधान, प्रधाना, सम्पादक, सम्पादिका तथा मन्त्री, मन्त्राणी या मन्त्रिणी आदि शब्दोका प्रयोग भी चल पडा है। मेरी रायमे अति-प्रचलित शब्दोको छोडकर, हिन्दी पद या व्यवसायसूचक सज्ञाओको एक ही लिंगके रूपमे व्यवहृत करना चाहिए, वरना राष्ट्रपति

१. हिन्दी भाषाका इतिहास, पृष्ठ ६८।

राज्यपाल, राजदूत तथा चालक आदिके भी दो-दो रूप बनाने पडेंगे, जो हास्यास्पद भी होगे और लिंग-भेदके अतिसूचक भी। परन्तु इसमें एक कठिनाई आयेगी। जब ये पदसूचक शब्द अकेले प्रयुक्त होगे तब क्रियाओमे कौन-सा लिंग रहेगा ? अमुक पुरुप-राजदूत या अमुक महिला-राजदूत कहनेमे तो कोई कठिनाई नही आयेगी, पर जब यह कहा जायेगा कि 'हमारे राजदूत आ रहे हैं', तो नि सन्देह उससे पुरुप राजदूत समझा जायेगा, महिला राजदूतके लिए तो 'हमारी राजदूत आ रही हैं' यही कहना होगा। कुछ भी हो इस समस्याका एक सर्वसम्मत समाधान आवश्यक है।

हिन्दी क्रिया-रूप विशिष्ट होते हैं। सैकडो सस्कृत धातुओको तद्भव रूप देकर हिन्दी-क्रियाएँ विकसित की गयी है, जैसे करना, खाना, दोहना, नहाना, पढना, बोलना, तथा लिखना आदि। ये तद्भव क्रियाएँ हिन्दी और उर्दूमे समान रूपसे चलती है। बहुत-सी फारसी तथा अरबी क्रियाओ-को भी तद्भव रूपमें विकसित किया गया है, जैसे तराशना, कबूलना, गिलाफना, दफनाना तथा बदलना आदि। अँगरेज़ीसे भी फिलमाना क्रिया चल पडी है। हिन्दी और उर्दूमे सस्कृत, फारसी, अरबी, अँगरेज़ी तथा विदेशी भापाओकी मनुष्याधीन सज्ञाओके अन्तमे 'करना' जोडनेसे भी क्रिया बनायी जाती है, जैसे स्वीकारना, शोर करना, सलाम करना, मालिश करना, पॉलिश करना, फोन करना, तथा वार्निश करना आदि। यह मनचाहे रूपमें नही होता, जैसे राष्ट्र और विद्युत्से राष्ट्राना या विद्युताना बनानेका साहस कोई नही करता। 'नेशनलाइज' और 'इलेक्ट्रिफाई'के लिए राष्ट्रियकरण और विजली लगाना ही प्रयुक्त होते है। हिन्दीका यह गुण अपना विशेप महत्त्व रखता है। पर इनमे तद्भव क्रिया-रूपवाली लाघवता नही है। इसको एक त्रुटि कहा जा सकता है, क्योकि ये अधिक श्रम, स्थान तथा समय लेती हैं। इनके प्रयोगसे तार भेजनेमे अधिक समय लगेगा। इन सब बातोपर क्रिया-सम्बन्धी परिच्छेद-मे सविस्तार विचार किया गया है।

हिन्दी क्रियाओमें एक बडी विशेषता यह भी है, कि उसमें सहायक क्रियाओ (आक्जिलिअरी वर्ब्स) का सबसे अधिक प्रयोग होता है, तथा किया जा सकता है। जैसे ले आना, ले जाना, ले मरना, ले पडना, ले सकना आदि। क्रिया-सम्बन्धी ये सब बातें हिन्दीकी अभिव्यजना-शक्तिको बढाती हैं और विदेशी शब्दोको पचानेमे सहायक होती है।

हिन्दीकी विशेषताओ और प्रकृतिके गुणोको यहाँ सक्षेपमे दिया गया है। अभी इनके और भी अधिक अध्ययनकी आवश्यकता है। एक वाक्यमें इतना ही कहा जा सकता है कि हिन्दीमे आसान, छोटे, निश्चित अर्थ-सूचक तथा भिन्न-भिन्न अर्थसूचक शब्द बनाने और आजकी पारिभाषिक शब्द-सम्बन्धी आवश्यकताओको पूरा करने एव विदेशी शब्दोको आत्म-सात् करके पचानेकी पर्याप्त शक्ति है।

•

अनेक तरहसे प्रभाव डाला।

साधारणतया हिन्दी शब्द-समूहको तीन श्रेणियोंमे बाँटा जा सकता है १ भारतीय आर्यभाषाओंके शब्द, २. भारतीय आर्येतर भाषाओंके शब्द, ३ विदेशी भाषाओंके शब्द। यहाँ आगे इन तीनों श्रेणियोंके शब्दोका वर्णन अति सक्षेपमे दिया जा रहा है।

१. भारतीय आर्यभाषाओंके शब्द

इनमे सस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रशके तत्सम शब्द, तद्भव शब्द, जनपदीय या बोलियोंके शब्द और आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं जैसे बगला तथा मराठी आदिके शब्द सम्मिलित है।

हिन्दीमे सस्कृतके तत्सम शब्दोकी बहुत बडी सख्या है—जैसे अहिंसा, अवतार, जल, यज्ञ आदि। आजकल इन शब्दोकी संख्या बहुत बढती जा रही है। इसके कई कारण है—एक तो हमारा सस्कृत-प्रेम, दूसरे सस्कृत तत्सम शब्दोका हिन्दीमे आसानीसे खप जाना और तीसरे हिन्दी तद्भव शब्दोसे शब्द बनानेकी अप्रवृत्ति।

तद्भव शब्द तो हिन्दीका आधार ही है, जैसे अकड, आग, धन, बनिया, पढना और परसो आदि। ये तद्भव शब्द ही हिन्दीका आधार है, जिसमे भिन्न-भिन्न भाषाओके शब्दोकी पौधे लगायी गयी है। विचारोके लिए तत्सम शब्दोका अधिक प्रयोग होता है, पर पदार्थो तथा वस्तुओके लिए तद्भव शब्द बडी सख्यामें मिलते हैं। ये तद्भव शब्द कब, कैसे और कितने लम्बे कालमे बने, यह बताना कठिन है। जनताकी बोलियोमे तद्भव शब्दोकी सख्या बहुत बडी है। हिन्दी, उर्दू तथा हिन्दुस्तानीवाले इन तद्भव शब्दोको साहित्यमे खुले तौरसे काममे लाते है, पर सस्कृत-निष्ठ साहित्यिक-हिन्दीमें इन शुद्ध हिन्दी शब्दोकी सख्या कम होती जा रही है। इसी कारणसे साहित्यिक हिन्दी और बोल-चालकी हिन्दीमे बडा अन्तर होता जा रहा है। तद्भव शब्द प्राय आसान और छोटे होते हैं।

चौथा परिच्छेद

हिन्दी शब्दावली

प्रत्येक भापाकी शब्दावली या शब्द-समूह एक प्रकारसे मिला-जुला ही होता है। न उसमें एक ही भापाके शब्द होते है और न उसके शब्द अपने आदि विशुद्ध रूपमे चले आते है। जातियोका विकास कुछ ऐसे मिश्रित ढगपर होता है और उनका इतिहास तथा सस्कृति कुछ ऐसी महान् घटनाओसे प्रभावित होती है कि अन्तमे उनकी भापाओकी शब्दावली एक मिश्रित शब्दावली बन जाती है। हिन्दी भी इस नियमका अपवाद नही है।

हिन्दी शब्द-समूहकी उपमा पँचमेल मिठाई या अनेक प्रकारके फूलोके गुलदस्तेसे दी जा सकती है। उसमें सस्कृत शब्द है, प्राकृत शब्द है, अपभ्रश शब्द है, जनपदीय शब्द हैं, भारतीय भापाओके शब्द है, और इन सबके अतिरिक्त विदेशी शब्द है, जिनमें अरबी, फारसी, तुर्की, पुर्तगाली, अँगरेज़ी, यूनानी, फ्रान्सीसी, इतालवी आदि भाषाओके शब्द शामिल है। इन विदेशी शब्दोके भापामे आनेके दो मुख्य ऐतिहासिक कारण है, एक तो भारतपर आठवी-नवी शतीमे मुसलमानोका आक्रमण और दूसरे सन् १४९८ में पुर्तगाली नाविक वास्को डि गामा-द्वारा भारतके लिए समुद्री मार्गकी खोजमे कालीकट पहुँचना और उसके फलस्वरूप यूरॅपकी जातियोका व्यापारके लिए भारतमे आकर यहाँका राज हथिया लेना। इन दोनो घटनाओने भारतकी भापाओमें सहस्रो विदेशी शब्द ही नही दिये, बल्कि यहाँकी भापाओ, साहित्य तथा साहित्यकी शैलियोपर

अनेक तरहसे प्रभाव डाला।

साधारणतया हिन्दी शब्द-समूहको तीन श्रेणियोमे बाँटा जा सकता है १ भारतीय आर्यभापाओके शब्द, २ भारतीय आर्येतर भाषाओके शब्द, ३ विदेशी भाषाओके शब्द। यहाँ आगे इन तीनों श्रेणियोके शब्दोका वर्णन अति सक्षेपमे दिया जा रहा है।

१. भारतीय आर्यभापाओंके शब्द

इनमे सस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रशके तत्सम शब्द, तद्भव शब्द, जनपदीय या बोलियोके शब्द और आधुनिक भारतीय आर्यभापाओ जैसे बगला तथा मराठी आदिके शब्द सम्मिलित है।

हिन्दीमे सस्कृतके तत्सम शब्दोकी बहुत बडी सख्या है—जैसे अहिंसा, अवतार, जल, यज्ञ आदि। आजकल इन शब्दोकी संख्या बहुत बढती जा रही है। इसके कई कारण है—एक तो हमारा सस्कृत-प्रेम, दूसरे सस्कृत तत्सम शब्दोका हिन्दीमे आसानीसे खप जाना और तीसरे हिन्दी तद्भव शब्दोसे शब्द बनानेकी अप्रवृत्ति।

तद्भव शब्द तो हिन्दीका आधार ही है, जैसे अकड, आग, धन, बनिया, पढना और परसो आदि। ये तद्भव शब्द ही हिन्दीका आधार है, जिसमे भिन्न-भिन्न भापाओके शब्दोकी पौधें लगायी गयी है। विचारोके लिए तत्सम शब्दोका अधिक प्रयोग होता है, पर पदार्थों तथा वस्तुओके लिए तद्भव शब्द बडी सख्यामे मिलते है। ये तद्भव शब्द कब, कैसे और कितने लम्बे कालमे बने, यह बताना कठिन है। जनताकी बोलियोमे तद्भव शब्दोकी सख्या बहुत बडी है। हिन्दी, उर्दू तथा हिन्दुस्तानीवाले इन तद्भव शब्दोको साहित्यमे खुले तौरसे काममे लाते है, पर सस्कृत-निष्ठ साहित्यिक-हिन्दीमे इन शुद्ध हिन्दी शब्दोकी सख्या कम होती जा रही है। इसी कारणसे साहित्यिक हिन्दी और बोल-चालकी हिन्दीमे बडा अन्तर होता जा रहा है। तद्भव शब्द प्राय आसान और छोटे होते है।

हम सब जनपदीय और ग्रामीण बोलियोके शब्दोको बोलते है, पर साहित्यिक हिन्दीमे इनकी चाशनी कही-कही मिलती है। इनके प्रयोगसे भाषामे जो गरिमा आ सकती है या पुराने बने-बनाये पारिभाषिक शब्द मिल सकते है, उनका सग्रह न होनेसे न उनका उपयोग हो रहा है और न उनकी रक्षा।

गुजराती, बगला, पजाबी तथा मराठी आदि भाषाओके शब्द हिन्दीमे बहुत कम मिलते है। डॉ० धीरेन्द्र वर्माने इसका कारण यह बताया है कि हिन्दी-भाषी लोगोने सम्पर्कमें आनेपर भी इन भाषाओको बोलनेका कभी उद्योग नही किया।[1] यो तो इन भाषाओके कुछ शब्द ढूँढनेपर हिन्दीमे मिल जायेंगे पर अधिक नही। जब हिन्दी-भाषी छात्र सरकारकी वर्तमान भाषानीतिके अनुसार कोई एक दूसरी प्रादेशिक भाषा पढ़ेंगे और अहिन्दी-भाषी लेखक हिन्दीमे लिखेंगे, तब भविष्यमें इन प्रादेशिक भाषाओके शब्द स्वाभाविक रूपसे हिन्दीमे बडी सख्यामे आ जायेंगे।

२. भारतीय आर्येतर भाषाओके शब्द

तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कन्नड भाषाओके शब्द बडी सख्यामें सस्कृतमे आकर तत्सम शब्द बन गये और वे पर्यायवाची शब्दोके रूपमे सस्कृतमें और अब हिन्दीमें प्रचलित हैं, जैसे अगर, काजल, कुदाल तथा चन्दन आदि। ऐसे कुछ शब्द ऋण शब्दोके प्रसगमे दिये गये है। पर हिन्दी कोशोमें किसी दक्षिणी भाषाके शब्दके बारेमे ऐसा सकेत नहीं मिलता है।

३ विदेशी भाषाओंके शब्द

भारतमें मुसलमानो तथा यूरॅपीय जातियोका आना दो ऐसी ऐतिहासिक घटनाएँ हैं जिन्होने हिन्दी ही नही वरन् भारतकी सभी

---

१. हिन्दी भाषाका इतिहास, पृ० ७०।

आधुनिक भाषाओपर गहरा प्रभाव डाला है। इन शब्दोमे फारसी, अरबी तथा अँगरेज़ी शब्द जैसे चश्मा, बदला, कप्तान, बोतल तथा अफसर आदि तो हजारोकी सख्यामे है, पर इनके अतिरिक्त संसारकी दूसरी भाषाओके शब्द भी इन भाषाओके माध्यमसे या दूसरे सम्पर्कोके कारण यहाँ स्थायी स्थान पा गये है और वे साहित्यिक भाषामें खूब चलते भी है। इन शब्दोको दो श्रेणियोमें विभक्त किया जा सकता है

१ विदेशी सस्थाओ के वाचक शब्द जैसे शासन, कचहरी, फौज, इजीनियरी, उद्योग व्यवसाय और चिकित्सा-प्रणाली सम्बन्धी शब्द जैसे डॉक्टरी, अस्पताल, मुशी, बैक तथा बीमा आदि।

२ विदेशी प्रभाव या ससर्गसे प्राप्त नयी वस्तुओ, नये वस्त्र, खानेके पदार्थ, मशीनें, विनोदके नये-नये साधनो, जैसे सिनेमा तथा रेडियो आदिकी वस्तुएँ ओर काम और क्रियाएँ जैसे क्रिकेट, टेनिस टाकी-शो, रूमाल, कोट, बिस्किट आदि।

अरबी, फारसो और तुर्की शब्दोसे हिन्दी और सुदूर दक्षिण तककी भाषाएँ भरी पडी है और ये शब्द स्थायी रूपसे भाषामे जम गये है। कुछ शब्द तो हिन्दू कुलोके उपनाम, उपाधि, पदवी, उपनाम या गोत्र से बन गये है, जैसे मुशी, बजाज, कानूनगो, सर्राफ, दीवान, मलिक, मियाँ, सरकार, दफ्तरी, चिटनोस तथा मजूमदार आदि। वे इन नामोको गर्वसे अपने नामोके साथ प्रयोग करते है। प्रचलित अरबी, फारसी या विदेशी शब्दाके स्थानपर भाषा-शुद्धिके लिए सस्कृतसे नये-नये शब्द बनाना ठीक नही है। ये शब्द हिन्दीका अग बन गये है और शब्दकोशोमे भी बराबर मिलते है। विदेशी शब्दोकी भाषावार बडी सूची इसी पुस्तकमे उधार लिये शब्दोके प्रकरणमे दी गयी है।

●

पाँचवाँ परिच्छेद

शब्द-रचनाकी आवश्यकता

नये-नये शब्द बनानेकी आवश्यकता मानव जातिकी निहायत पुरानी—हज़ार वर्ष पुरानी—आवश्यकता है। आरम्भमे मानव जातिकी बोली या भाषाके शब्द बहुत थोडे थे, जैसा कि आजकल भी अफ्रीकाकी बहुत-सी असभ्य जातियो और भारतकी कुछ जगली जातियोके शब्द-समूहोका हाल है। पर जातियोकी सभ्यता, सस्कृति और साहित्यकी उन्नतिके साथ-साथ उनके शब्दोकी सख्या भी बढने लगी। इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण सभ्य जातियोके पुराने और नये शब्द-कोशोकी शब्द-सख्याकी तुलनासे मिलता है। हिन्दीमे तुलसीदासके युगमें जितने शब्द थे आज उनसे कई गुना शब्द हिन्दीमे है। सैयद अहमद देहलवी-द्वारा सम्पादित उर्दूके प्रसिद्ध शब्द-कोश फरहग-ए-आसिफियामे चौवन हज़ार नौ शब्द थे। आज उर्दूमे उससे कई गुना शब्द है। वेव्स्टर साहबने जब अँगरेज़ी शब्द-कोश बनाया तब उसमे कुल सत्तर हजार शब्द थे। पर अँगरेज़ीमे आज लगभग पाँच लाख शब्द हैं। सभी भाषाओकी शब्द-सख्या न्यूनाधिक दिन-प्रतिदिन बढती ही जा रही है।

इससे प्रकट है, कि किसी जातिको जैसे-जैसे नये शब्दो, मुहावरो तथा लोकोक्तियोकी आवश्यकता पडती रहती है, वह अनेक ढगो या रीतियोसे उन्हे बनाती रहती है। साधारण तौरसे शब्द-रचनाका यह काम इतना धीरे-धीरे और अनजाने ढगसे होता रहता है कि नये शब्दोका बनना और भाषामे आना न किसीको मालूम होता और न खटकता है। आवश्यक-

तानुसार धीरे-धीरे नये शब्द बनकर सामाजिक जीवनका अग बनते रहते है।

पर जातियोके जीवनमें कभी-कभी ऐसी बडी घटनाएँ होती है या ऐसे नये आविष्कार होते है कि उनकी भाषाओमे नये शब्दोकी बाढ-सी आ जाती है। नयी दुनियाकी खोज, अँगरेजी साम्राज्यके विस्तार और वैज्ञानिक आविष्कारोने अँगरेजी भाषाको इतना बढाया कि आज वह एक द्वीपकी भाषा न रहकर एक अन्तरराष्ट्रीय भाषा बन गयी है। फलस्वरूप उसकी शब्द-सख्या लाखोमे है। विज्ञान, रेल, प्रेस, बिजली, सिनेमा, रेडियो आदि और हालमे अणुशक्तिके आविष्कारो और अन्तरिक्ष-सम्बन्धी खोजोने देखते-ही-देखते अनेक भाषाओको सहस्रो नये शब्द दे दिये। पहले और दूसरे महायुद्धोने भी भाषाओको अनेक नये शब्द देनेमे बडा काम किया। विशेष परिस्थितियोमे नये शब्दोका रचना-कार्य इतनी जल्दी होता है, कि भाषाशास्त्री, शिक्षित वर्ग और साधारण जनता उन अपरिचित शब्दोको सुनकर चौक पडते है और वे उनकी भिन्न-भिन्न ढगोसे परीक्षा करते है।

साधारण जनता ही नही, बडे-बडे शिक्षित स्त्री-पुरुष भी नये शब्दोको बोलने और लिखनेकी सुविधाकी दृष्टिसे देखते है। अटपटे, जबडा-तोड, लम्बे-लम्बे और कठिन शब्दोको वे पसन्द नही करते और उनमे वे सुविधानुसार कतर-ब्योत करके उनको अपने अनुकूल बना लेते है।

यूनानियो, मुसलमानो तथा युरोपीय जातियोके भारतमे आनेसे उनकी भाषाओका भारतीय भाषाओके शब्द-समूहपर बडा प्रभाव पडा और उनमे शब्दोकी वृद्धि हुई।

१५ अगस्त सन् १९४७ को भारतका स्वतन्त्र होना एक इतनी बडी ऐतिहासिक घटना थी कि उसने देशकी भाषाके प्रश्नको अन्तिम रूपमे निश्चित करनेके लिए ललकारा। देशकी पार्लियामेण्टने इस चुनौतीको स्वीकार किया और भाषा और लिपिके महान् पेचीदा और विवादग्रस्त

प्रश्नके सब पहलूओपर विचार करके १४ सितम्बर सन् १९४९ को हिन्दीको राजभापा और देवनागरीको उसकी लिपि स्वीकार किया। भापाकी स्वतन्त्रताके पक्षमें यह एक इन्कलाबी पर उचित निर्णय था। इस निर्णयको अमली रूप देनेमें जो बहुत-सी कठिनाइयाँ तथा रुकावटें है, उनमें हिन्दी पारिभापिक शब्दो, अर्द्ध-पारिभाषिक शब्दो तथा सामान्य शब्दोका अभाव ऐसी वास्तविक तथा सच्ची कठिनाई है, जो आज भी विद्यमान है। इसके लिए सबसे बडी आवश्यकता यह है कि भापा वैज्ञानिक और साहित्यकार महान् साधना और कठोर परिश्रम करके भिन्न-भिन्न विषयोके पारिभाषिक शब्दोकी कमीको पूरा करें और जो नये शब्द बन रहे है उनकी जाँच-पडताल करें। इससे जहाँ बहुत-से नये शब्द बनेंगे, वहाँ नये शब्दोकी परीक्षा होनेसे घटिया शब्द अमान्य हो जायेंगे।

इस समय देशके बहुत से विद्वान्, सस्थाएँ तथा केन्द्रीय और राज्य-सरकारें शब्द-रचनाका काम कर रही हैं और उनके परिश्रमके फलस्वरूप सहस्रो नये शब्द हिन्दी तथा दूसरी भारतीय भाषाओमे बन रहे हैं। अकेला केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालय ही अबतक दो लाखके लगभग पारिभाषिक शब्द बना चुका या स्थिर कर चुका है। इन नये शब्दोमे गुणोके साथ दोप भी हो सकते है, पर दोष तो प्रयोगसे ही मालूम होगे। शब्द-रचनाके महान् काममें हर-एकको अपना योगदान देना चाहिए। प्रसिद्ध विचारक एमर्सनने कहा भी है, "भाषा एक नगरके समान है, जिसको बनानेके लिए हर-एक नागरिक अपना-अपना पत्थर लगाता है।" सबके मिलकर काम करनेसे ही शब्द-रचनाकी आवश्यकता पूरी होगी।

•

छठा परिच्छेद

शब्द-रचनाकी पद्धतियाँ

शब्द-रचनाकी पद्धतियाँ बहुत है । उनको दो भेदोमें बाँटा जा सकता है—मुख्य पद्धतियाँ और उप-पद्धतियाँ । मुख्य पद्धतियाँ गिनतीमें पाँच है और भारोपीय भाषाओके अधिकतर शब्द इन्ही पद्धतियोसे बने है । बडी-बडी उप-पद्धतियोकी सख्या छह है और उनमें-से हर-एक पद्धतिसे थोडे ही शब्द बनते है ।

मुख्य पाँचो पद्धतियाँ अपने उपभेदो सहित निम्नलिखित है—

१ व्युत्पत्ति पद्धति (डेरीवेशन) इसके दो भेद है (अ) उपसर्ग (प्रिफिक्स) और (आ) प्रत्यय लगाकर नये शब्द बनाना ।

२ समास पद्धति (कम्पाउण्डवर्ड्स) ।

३ शब्द उधार लेना (वर्ड बॉरोइग) । इसके भी तीन भेद है—(अ) उधारे शब्द (लोन वर्ड्स), (आ) सकर शब्द (हाइब्रिड्स) और (इ) अनूदित शब्द (ट्रासलेशन लोन्स) ।

४ वर्णविपर्यय पद्धति (मेटाथीसिस), अर्थात्, वर्णो के उलट-फेरसे नये शब्द बनाना, ध्वनि विपर्यय भी इसीमे आता है ।

५ अर्थ-परिवर्तन-पद्धति (सेमाण्टिक चेंजेज़) ।

उप-पद्धतियोके भेद इस प्रकार है—१ कटवाँ शब्द (क्लिप्ड वर्ड्स), २ साकेतिक शब्द (अक्रॉस्टिक् वर्ड्स), ३ मिलवाँ शब्द (ब्लॅण्डेड वर्ड्स), ४ ढर्रेपर गढे शब्द (काइण्ड वर्ड्स), ५ पूर्वोन्मुखी शब्द (वैंक फॉर्मे-

शन), ६ प्राचीनवर्ती शब्द (थ्रोवैक्स)।

आगे इन सब पद्धतियो तथा उप-पद्धतियोका उदाहरण-सहित विस्तारपूर्वक वर्णन तथा विवेचन है।

व्युत्पत्ति (अ) उपसर्गोसे शब्द बनाना

किसी शब्दके पहले जो अक्षर, अव्यय, शब्द और शब्दाश जोडा जाता है, उसे उपसर्ग कहते है। सस्कृतमे उपसर्गोकी सख्या नियत है, बाकी-को अव्यय माना गया है। पर हिन्दीमे उपसर्गोकी सख्या बहुत बढ गयी है। उनमें सस्कृत उपसर्ग तथा अव्यय ही नही, बल्कि हिन्दी, फारसी तथा अरबी उपसर्ग भी शामिल हैं। व्याकरणकी परम्पराओ तथा सीमाओको तोडकर ये उपसर्ग समान भाषावाले शब्दोके साथ ही नही, वरन् सुविधानुसार किसी भी दूसरी भाषाके शब्दोके साथ चमत्कार-पूर्ण तथा क्रान्तिकारी ढगसे स्वतन्त्रताके साथ लगाये जाते है। हिन्दीके प्रवाहपूर्ण तथा सजीव नव-विकासमें ऐसा होना स्वाभाविक था, यह दूसरी जीवित भाषाओके अनुरूप ही है।

सस्कृतमे उपसर्गोको धातुओसे पहले लगानेसे उनके अर्थमे हेर फेर होता है।[1] सस्कृतमे बाईस उपसर्ग है—प्र, परा, अप, सम, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आ(ङ्), नि, अधि, अपि, अति, सु, अभि, प्रति, परि, उप, उत्।

हिन्दीके अपने और सस्कृत अरबी, फारसीसे लिये गये उपसर्ग अनु-क्रमसे उदाहरणसहित दिये है —

---

१. उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते।
प्रहाराहारसहारविहारपरिहारवत्॥

और भी

धात्वर्थं बाधते कश्चित्कश्चित्तमनुवर्तते।
तमेव विशिनष्ट्यन्य उपसर्गगतिस्त्रिधा॥

अ (सं०) विपरीत, निषेध, अभाव तथा नकार आदि अर्थोंमे आता है। सज्ञा तथा विशेषण शब्दोके पहले लगता है। स्वरसे आरम्भ होनेवाले शब्दोके पहले इसका रूप 'अन' हो जाता है। परन्तु हिन्दीमें 'अन' व्यजनोसे आरम्भ होनेवाले शब्दोके पहले भी आता है, जैसे अनजान, अनपढ, अनगिनत। यह उपसर्ग हिन्दी शब्दोके साथ भी प्रयुक्त होता है, जैसे अडिग, अजान, अचूक (औषधि), अचेत, अछूत, अछूतपन, अछूता, अपढ, अलग, अलोना (बिना नोनका) आदि। हिन्दीके कुछ वैयाकरण इसे अव्यय ही मानते हैं—सस्कृतके 'न' के समान। और अव्ययीभाव समासमें प्रयुक्त भी। अरबी शब्द 'जिल्द' से पहले भी 'अ' आ गया है और अजिल्द शब्द बन गया है, जिसका खूब प्रयोग होता है, जैसे अजिल्द पुस्तक।

न (हि०–फ़ा०) अभावसूचक, जैसे नदीदा (फा० क्रिया दीदन देखनासे, नादीदा अर्थात् अनदेखा, जिसने कुछ न देखा हो, स्त्री० नदीदी) नपूता, नपूती (पुत्रहीन स्त्री) राँड-नपूती (स्त्रियोकी प्रसिद्ध गाली) नहोत (अनहोत) आदि।

प्र (सं०) हिन्दीमें इस उपसर्गको 'पर' तथा 'पड' के रूपमे लिया गया है, जैसे परदादा, परदादी, परनाला, पडदादा, पडपोता आदि। इसे भी अ, अन, न(नञ्)के समान अव्यय और अव्ययीभाव समासमें ही कुछ वैयाकरणोने शामिल किया है।

बे (फ़ा) निषेध, अभावसूचक, जैसे बेअदब, बेइज्जत, बेईमान, बेकदर, बेकायदा, बेकार, बेखबर, बेचारा, बेचैन, बेजोड, बेठिकाने, बेडौल, बेढब, बेढग, बेधडक, बेपरवा, बेबस, बेशक, बेसिरा, बेहाल, बेहोश आदि। यह फारसी उपसर्ग हिन्दी शब्दोके साथ बे-रोकटोक प्रयुक्त होता है।

ला (अ०) बे, हीन, निषेधके अर्थमे। वास्तवमे यह शब्द भी अरबी अव्यय है, पर अरबी, फारसी और हिन्दी शब्दोके साथ उपसर्गके तौरपर

हो लगता है, जैसे लाइलाज, लाचार, लाजवाव, लापता, लापरवाह आदि।

सु (स०) सु उपसर्गको हिन्दी तथा अरवी शब्दोके भी साथ लगाया गया है। सुन्दर, अच्छा, श्रेष्ठ, उत्तम, शुभ अर्थोमे, जैसे सुकण्ठ, सुकवि, सुकाल, सुराज, सुसाहेब, (सस्कृत उपसर्ग अरवी शब्द साहेबके साथ जोड दिया गया है) आदि।

(आ) प्रत्ययोंसे शब्द बनाना

शब्दके अन्तमें जुडनेवाले अक्षर या शब्दाश प्रत्यय कहलाते है। उपसर्गोकी अपेक्षा प्रत्ययोकी सख्या वहुत अधिक है और इनकी सहायतासे बननेवाले शब्दोकी सख्या भी वहुत बडी है। रूढि शब्दके अन्तमे एक हो प्रत्यय नही, वरन् कभी-कभी एकसे अधिक प्रत्यय भी जुड जाते है, जैसे चटोरपनमे (चाटसे चटोरापन) चाटके पीछे दो प्रत्यय लग गये। इसी प्रकार किसी भी सज्ञासे विशेपण बनाकर भाववाचक सज्ञा बनानेपर दो प्रत्यय लग जाते है, जैसे धर्मसे धार्मिकता, नगरमे नागरिकता इत्यादि।

वहुत-से प्रत्यय मूल रूपमें स्वतन्त्र शब्द थे और समस्त पदोके उत्तर भागमे सैकडो वर्षों तक प्रयोगमें आते-आते अपनी स्वाधीनता खो बैठे और अन्तमे व्याकरणके तत्त्व (सकेत या चिह्न) मात्र रह गये। इनका प्रयोग फिर शब्दोके अन्तमे होने लगा। यह मत एक अँगरेज भाषा-शास्त्री स्टीफेन उलमैनने दिया है।[1] उन्होने उदाहरणमे अँगरेजी प्रत्यय

---

1 "Many of our suffixes were originally independent words Having appeared as second terms in countless compounds, they gradually lost their independence and sank to the level of grammatical elements ready to enter any fresh combination".

—Words & Their Use, by Stephen Ulman, page 68

१—धातुके आगे जोडा जाता है, जैसे, उचकनासे उचक्का (वस्तुओको चोरीमे उठानेवाला) कर्नबिधा, कमतोला (विशेषणको तरह प्रयोग होता है) गँठकटा, गँठकतरा, घसखुदा (घास खोदनेवाला), चरकटा (मुख्य अर्थ-चारा काटनेवाला, रूढ अर्थ चालाक, तुच्छ जन), छीला (ईख आदि छीलनेवाला), जोता (भूमि जोतनेवाला) आदि ।

२—भाव-वाचक सज्ञा क्रियाओका ना हटाकर इस प्रत्ययको लगाया जाता है। जैसे उछाला (उछालनेका काम, वमन, कै) झाडनासे झाडा (यन्त्र आदि), थापनासे थापा, निकाला (यौगिक, देश-निकाला), फेरा (फेरी भी), वदलनासे वदला, (अरवी शब्द वदलसे वदलना हिन्दी क्रिया वनी है), मरोडा, रगडा आदि ।

३—समुदाय-वाचक सज्ञा, जैसे चालीसा (हनुमानचालीसा), छत्तीसा, पजा (पाँच उँगलियोका समुदाय, पॉच वस्तुओका समुदाय, जैसे आमोका पजा, प्रयोग आम दो आने पजा विकते है), पचाससे पचासा, वत्तीसा (वत्तीसी भी, वत्तीस दाँतोका समुदाय), सातसे सत्ता (ताशका एक पत्ता), सतघरा (सात घरोके समुदायका मुहल्ला, दिल्लीमे ऐसे कई मुहल्ले है, जैसे छहघरा, नौघरा आदि), सतलडा हार आदि ।

४—स्थानवाचक सज्ञा, जैसे उतारा (उतरनेका स्थान, पडाव, परियोका उतारा), चौराहा, तिराहा, थान (स्थान) से थाना (पुलिस स्टेशन), वज़ाज़से वज़ाजा, (कपडेका वाज़ार), मच्छीहट्टा, सर्राफ से सर्राफा (सोने चाँदीका वाज़ार, सर्राफोका वाज़ार), हलवाई-हट्टा (हलवाई वाजार) आदि ।

५—कर्मवाचक सज्ञा, जैसे उतारा (प्रेत-वाधा या रोगकी शान्तिके लिए किसी व्यक्तिके सिरसे पैर तक कई वार फेरकर उतारी हुई सामग्री, टोटका), झारनासे झारा, (जो कुछ झारा जाये, जैसे झारेकी वरफी आदि)। उतारा और उतारनमे अन्तर है। उतारन पुराने उतारे हुए वस्त्रोके लिए आता है।

६ औज़ारवाचक सञ्ज्ञा। धातु और सञ्ज्ञाके आगे जुडता है, जैसे घोटनासे घोटा (हलवाईका घोटा), चिमटा, झूला, दस्ता (हत्ता), पलटनासे पलटा, पोछनासे पोचा (विशेपकर फर्श धोकर पोछनेका कपडा, क्रिया पौचा करना), फुटसे फुटा (बारह इचकी पट्टी, फुटकल), मापा (मापनेका बरतन या औजार), सरौता (?), हत्ता (हाथसे) आदि।

७ विशेपण बोधक, जैसे अछूता, आला (जनपदीय शब्द—आलसे, अर्थ सीला, गोला), इक्का, इकदरा, गन्दा, झूठा, दुक्का, नीला, बीसा (वह कुत्ता जिसे बीसो नाखून हो), मेला आदि।

८ रगवाचक, लाखसे लाखा रग।

आई (हि०) १. भाववाचक, (अ) क्रियाओसे जैसे उतारनासे उतराई, धुलाई, चढाई, ठगाई, पढाई, पिटाई, लिखाई, सिंचाई, सुनाई आदि। (आ) विशेपणोसे जैसे कठिनाई, सचाई, सुघडाई आदि।

२ कामके दाम, पारिश्रमिक, नेग तथा रीति आदिका बोधक। कतराई, कटाई, खुदाई, चराई, छपाई, ढुलवाई, तुडवाई, तुलाई, तुरपाई, धुलाई, पढाई, बदलाई, मिलाई (मिलन, विवाहोका एक नेग), रँगाई, लोगहँसाई, घिसाई, सम्पादन कराई आदि।

३ स्त्रीलिंग सञ्ज्ञा, लोगसे लुगाई, मूल शब्दके दीर्घ स्वर ओ को यहाँ ह्रस्व स्वर उ कर दिया गया है।

आऊ (हि०) १ योग्यतासूचक विशेषण, जैसे अगाऊ (पेशगी), उठाऊ चूल्हा, कामचलाऊ, गिराऊ, टिकाऊ, जलाऊ, तनढँकाऊ कपडा, दिखाऊ, पेटभराऊ, खानाफिराऊ, (सौदा या माल), विकाऊ, बटाऊ आदि।

२ कर्तृबोधक विशेपण, जैसे बरसाऊ (बरसनेवाला, बादल) आदि।

आकू (हि०) कर्तृवाचक सञ्ज्ञा, जैसे उडाकू, लडाकू आदि।

आटा (हि०) अनुकरणवाचक शब्दोके साथ इस प्रत्ययको लगानेसे

संज्ञाएँ बनती है और आ प्रत्ययका समानार्थी है, जैसे अर्राटा, फर्राटा, भर्राटा, सन्नाटा, सर्राटा आदि।

आड़ी (हि०) १ भाववाचक संज्ञा, जैसे अगाडी, पिछाडी (कहावत घोडेकी पिछाडी और अफसरकी अगाडी नही जाना चाहिए)।

२ औज़ारवाचक करण, जैसे पिछाडी (पीछासे, घोडेकी पिछली टाँगमें बाँधनेकी रस्सी और खूँटा)।

३. कर्तृवाचक संज्ञा तथा विशेषण, जैसे खेलसे खिलाडी आदि।

आत (हि०) १. भाववाचक संज्ञा, जैसे बरसात, बहुतात आदि।

२ क्षेत्रका नाम बोधक, मेवात (मेवा जातिके रहनेका भूखण्ड)।

३ कुछ अरबी बहुवचन संज्ञाएँ एकवचनमें भी प्रयुक्त होती है, जैसे खैरात (दान-पुण्य), हवालात (नज़रबन्दी, नज़रबन्दीका घर, कैदखाना) आदि।

आन (हि०) भाववाचक संज्ञा। १ विशेषणोसे जैसे ऊँचान, चौडान, निचान, लम्बान आदि।

२ क्रियाओंसे, जैसे उठनासे उठान, उडान, चलान (मालका), चालान (पुलिसका चालान, चलानका परचा भी), ढलान, थकान, लगानासे लगान (भूमिकर) आदि।

३ स्थानवाचक, जैसे धसनासे धसान, (दलदला स्थान) आदि।

आना (हि०) १. क्रियावाचक, जैसे आजमाइशसे आज़माना, गरमसे गरमाना, दफनसे दफनाना, नरमाना, फिल्मसे फिल्माना (फिल्म बनाना) शरमाना आदि। ये विदेशी शब्दोंसे बनी क्रियाओंके कुछ प्रयोग भी प्रचलित हो गये है।

२ सकर्मक क्रिया प्रत्यय, जैसे उठनासे उठाना, करना, चलाना, दबाना, पकड़ाना, सजाना आदि।

३ स्थानवाचक, जैसे चुल्काना (जि० सहारनपुर उ०प्र० मे एक गाँव), तिलगाना, ननकाना साहब (पश्चिमी पंजाबमें गुरु नानक देवका

जन्मस्थान, सिक्खोका तीर्थ, तलवण्डीका नाम), राजपूताना, समधियाना (समधीका स्थान), सिरहाना, हरसाना (जि० रोहतकका गाँव) आदि ।

४ भाववाचक सज्ञा प्रत्यय, जैसे दोस्ताना (दोस्ती, मित्रता), याराना आदि ।

आनी (हि०) १ विशेषणसूचक, जैसे बर्फसे बर्फानी, सैलानी आदि । २ स्त्रीलिंगवाचक प्रत्यय, जैसे जेठानी, देवरानी, पण्डितानी, महतरानी, मुगलानी, मास्टरानी (मास्टरनी भी) आदि । मास्टरानी और मास्टरनीमें अन्तर स्थापित करके दोनो शब्दोके विशेष अर्थ दिये जा सकते है, मास्टरनी पढानेवाली स्त्री अर्थात् अध्यापिका और आचार्याणीके ढर्रेपर मास्टरानी मास्टरकी पत्नीको कहा जा सकता है । पर साधारण रूपसे मास्टरनी शब्द दोनो अर्थोमे आता है, जो प्रचलनसे ठीक ही है ।

आप (हि०) भाववाचक सज्ञा चिह्न जैसे मिलाप आदि ।

आपा (हि०) भाववाचक सज्ञा जैसे कुटनापा (कुटनी कार्य) जलापा (जलना), वहनापा (बहनसे, दो स्त्रियोमे बहन-भाव होना) ।

आयन (हि०) स्त्रीलिंग प्रत्यय, जैसे चौधरायन, चौधरन भी, पण्डितायन पण्डितानी (पण्डितसे पण्डिता, विदुषी अर्थमे) आदि ।

आलु (सं० आलुच्) झगडा–झगडालु, लज्जा–लजालु (लजीला भी), शर्मालु (शर्मीला भी) आदि । सस्कृत प्रत्यय हिन्दी झगडा और फारसी शर्मके साथ प्रयुक्त हुआ है । यही हिन्दीका विशेष गुण है ।

आला (हि०) विशेपण जैसे जवाला (जौ मिश्रित अनाज), डढियाला (दाढीसे), पनियाला, मटियाला (मिट्टीसे) आदि ।

आव (हि०) १ भाववाचक, क्रियाओका 'ना' हटाकर इस प्रत्यय को लगाया जाता है, जैसे अटकाव, उलझाव (उलझन भी), ठहराव, ढलाव (ढाल भी), घटाव, घुमाव, छिडकाव, जमाव, झुकाव, तनाव, थमाव, दवाव, दिखाव (दिखावा, दिखावट भी) पचाव, पडाव, पथराव,

बचाव, बहाव, लगाव, सुझाव, गहराव (गहराई भी) आदि। २ स्थान-वाचक, जैसे डलाव (सामान डालनेका), पडाव (यात्रियोके ठहरनेका स्थान) आदि।

आवट (हि०) भाववाचक, जैसे कसावट, खिलावट, घुलावट, थकावट, बनावट, बुनावट, फलावट, फैलावट, मिलावट, रुकावट, लगावट, लिखावट, सजावट आदि।

आवना (हि०) विशेषण, जैसे घिनसे घिनावना, डरसे डरावना, लोभसे लुभावना, सुहावना आदि।

आवर (हि०) १ स्थानवाचक, जैसे दिसावर (प्रदेशकी मण्डी, दिसावरी माल) आदि। अपने ही देशकी मण्डीके लिए भी व्यापारी लोग दिसावर शब्दका प्रयोग करते है, जैसे वह दिसावर गया है।

आवा (हि०) भाववाचक, जैसे चढावा, चलावा, छलावा, छुडावा, डराना–डरावा (डरानेका भाव, डरानेके लिए कही जानेवाली बात, खेतमे पक्षियोको डरानेकी वस्तु आकृति (चेहरा) जो खेतमें लगायी जाती है), पछतावा, पहिरावा, फुसलावा, बढावा, बुलावा, भुलावा आदि।

आँस (हि०) भाववाचक, जैसे अडाँस (रुकावट) आदि।

आस (हि०) १ इच्छासूचक, भाववाचक सज्ञा, जैसे उघास, गवास (गानेकी इच्छा), छपास (न० प्र० लेख पुस्तक आदि छपानेकी तीव्र इच्छा) पनास (न० प्र० पान खानेकी इच्छा, प्यासके अनुकरणपर), बुलास (न० प्र० बोलने या भाषण देनेकी इच्छा), रुआस आदि। २ भाववाचक, खटास, मिठास आदि।

इयत (अ०) भाववाचक, जैसे अँगरेजियत (न० प्र०), असलियत, आदमियत, इन्सानियत, कांग्रेसियत (न० प्र०), लीगियत (न० प्र० मुसलिम लीगसे) कैफियत, यकसानियत (समता, चौरसपन) शहरियत, साहबियत (न० प्र०) आदि।

इयल (हि०) विशेषण जैसे अडियल (अटनासे, अडनेवाला, उदा-

हरण अडियल टट्टू), कटियल (काँटेदार), गठियल (गठीला भी) मरियल, सडियल आदि।

इया (हि०) १ कर्तृत्वबोधक जैसे आढतिया (आढती भी), कापडिया, गठिया, चरसिया, जडिया, झझटिया, झमेलिया, टटपूँजिया (निर्धन दूकानदार, टाट ही है पूँजी जिसकी), ढोलकिया, ताँतिया, दिवालिया, दूधिया (न० प्र०), परचूनिया, पूबिया, बखेडिया, अडबडिया, नियारिया (सोने-चाँदीको साफ करनेवाला), बहुरूपिया, मखौलिया (हँसी-ठट्ठा करनेवाला), मसानिया, रतौंधिया, रोकडिया, लोहिया, सारगिया, हडबडिया आदि। २ लघुताबोधक जैसे चुनरी–चुनरिया. घाघरा–घघरिया, गगरी–गगरिया, नगरी–नगरिया, वाँदरो–वँदरिया, कायर–कँयरिया, लहरी–लहरिया, गिलाम–गिलसिया। ३ कपडोके नाम, जैसे डोरिया (डोरेदार कपडा), लहरिया (लहरदार छपा कपडा) आदि। ४. नाता या सम्बन्धबोधक, जैसे चचिया ससुर (सास), ननिया ससुर (सास), फुफिया ससुर (सास), ममिया ससुर (सास) आदि। ५ लघुताबोधक (स्त्रीलिंग) जैसे अँबिया, खटिया, गठरिया, डलिया, डिबिया, तल्लिया, नदिया, पुडिया, फुडिया, बगिया, बिटिया, लुटिया आदि।

६ वस्त्रबोधक, जैसे अँगिया, जाँघिया आदि। तौलिया इस तरह नही बना है। यह अँगरेज़ी शब्द टॉवेलका विकसित रूप है।

७ विशेपण, जैसे केसरिया, कौडिया, घटिया, चौथिया (चौथे दिन आनेवाला ज्वर), तेलिया, दुखिया, दूधिया (दूधका रग), बढिया, मूँगिया, मोमिया, लँगोटिया (बचपनका दोस्त) सुखिया, सौंफिया आदि।

८ सज्ञा, पोलिया (पाण्डुरोग, पोले रगका ओढना, दुपट्टा, चुनरी आदि)।

९ अनादर या दुलारसूचक, ईकारान्त पुल्लिग और आकारान्त स्त्रीलिग शब्दोमें लगता है, दुर्गा–दुर्गिया, धोबी–धुबिया, हरी–हरिया।

१० स्थान, निवासी या सम्बन्धबोधक (विशेषण) जैसे कलकतिया

कन्नौजिया, नगरिया, फीरोजपुरिया, बम्बैया, मिरजापुरिया, (मिरजापुरी भी) आदि ।

११ कवितामे कई शब्दोमें इस प्रत्ययका प्रयोग अपने ही अर्थमे मिलता है, जैसे अँखिया (आंख), अगिया (आग) आदि ।

१२ औज़ार आदि जैसे कतिया (कतरनासे), गुनिया, तिकोनिया, फटफटिया (न० प्र०) ।

१३ अरबी भाषाके विशेषणसूचक, जैसे इसलामसे इसलामिया, मुगलसे मुगलिया, (खानदान—वंश) आदि ।

इयाँ (हि०) १ लघुतावाचक जैसे, पातीसे पतियाँ, बातसे बतियाँ बाँह–बहियाँ, रात–रतियाँ आदि । २ ईकारान्त शब्दोका बहुवचनसूचक, जैसे घोडियाँ, धीसे धियाँ (बेटियाँ—प्रयोग धियाँ जवाई ले गये बहुआँ ले गयी पूत, कहत कबीर सुनो भई साधो, तुम रहे ऊतके ऊत) आदि ।

इयाना (हि०) क्रिया बनानेका प्रत्यय, जैसे कथा–कथियाना, कस–कसियाना, खातासे खतियाना, चिचियाना, चुँधियाना, तँमियाना, दुलतियाना, पत–पतियाना, (आज़माना), बतियाना (बातें बनाना प्रयोग · आप क्यो बतिया रहे है ?), बिजलियाना, मटियाना, मिमियाना (भेड़की आवाज़ करना), मुकियाना (मुक्के मारना), रिरियाना (री-री करना), लाठोसे लठियाना (पीटना), लतियाना, गाठसे गठियाना, हाथ–हथियाना, हिन्दी तथा हिन्दसे हिन्दियाना (हिन्दी रूप देना, हिन्दीकरण, हिन्दका बनाना) आदि । इस प्रत्ययके योगमे भी मूल शब्दका प्रथम दीर्घ अक्षर लघु हो जाता है ।

इयारा (हि०) कर्तावाचक संज्ञा, जैसे घसियारा, दुखियारा आदि ।

इयाला (हि०) विशेषण, जैसे पनियाला (पानीसे, सांप, साग) आदि ।

इल (सं० इलच्) विशेषण जैसे बोझिल आदि ।

ल (हिन्दी सं०) हिन्दीमे इ का लोप करके, तोदल, पेटल आदि भी बनते है। कुछ लोग इन शब्दोमे एक भिन्न प्रत्यय 'ल' का योग मानते है।

ई (हि०) १ अकारान्त पुल्लिग शब्दोसे स्त्रीलिंग, जैसे कहारी, गीदडी, नटी, पठानी, दानी, बन्दरी आदि। आकारान्त और फारसी हकारान्त शब्दो, जो हिन्दीमे आकारान्त बन जाते है, स्त्रीलिंग बनानेके लिए यह प्रत्यय युक्त होता है। जैसे बकरा–बकरी, बन्दा–बन्दी, दास–दासी, पनिहारा–पनिहारी, महरा–महरी (बरतन माँजनेवाली), शहज़ादा–शहज़ादी आदि। अकारान्त, आकारान्त विशेषणोसे स्त्रीलिंग जैसे सुन्दरी, अकेली, अच्छी, गहरी, छोटी, बडी, लम्बी आदि।

२ औज़ारवाचक सज्ञा, जैसे गिरडी, चक्की, चरखी, चिमटी, जीभी (जीभ साफ करनेकी सलाई), थापी (थापनेका औज़ार), दराँती, दूधी (दूध पिलानेकी तूँती), धनकुट्टी (धान कूटनेका औज़ार), धुनकी, नकचूँटी, परखनासे परखी, बुहारनासे बुहारी, फाँसी, मापी (मापक), सूली आदि।

३ लघुतावाचक, अकारान्त और आकारान्त पुल्लिग शब्दोसे, जैसे आरा–आरी, ऊखल–उखली, कनस्तर–कनस्तरी, गिलासी, घाटी, टैक–टकी (पानी भरनेका सन्दूक-जैसा डिब्बा), टोकरी, डोरी, डोली, ढोलकी, पहाडी, मूली (स० मूल–जडसे, अब यह विशेष अर्थमे मूली नामक भाजी के लिए प्रयुक्त होता है), रस्सी, रोटी, शीशी आदि।

४ अल्पार्थक और स्थानवाचक, जैसे अचारी (अचारका बरतन, या अचारके बरतनोको रखनेका स्थान), कोतवाली (थाना), दुछत्ती (दो छतोके बीचका कम ऊँचा गोदाम, स्टोर, दो कमरोके बीचका छोटा कमरा), बरसाती (बरसातमें सोनेका स्थान), रजिस्ट्री (वह दफ्तर जहाँ क्रय-विक्रय आदि पत्रोकी रजिस्ट्री होती है) आदि।

५ जाति या भाषा, एक अथवा दोनोका, जैसे अँगरेज़ी, अर्द्धमागधी,

अरवी, अवधी, कश्मीरी, गुजराती, जापानी, तुर्की, पजावी, वागडी, फारसी, मराठी, मारवाडी, यूनानी, रूसी, लातानी, शौरसेनी, हिन्दी, हिन्दुस्तानी आदि ।

६ समुदायवाचक, जैसे छत्तीसी, पचीसी, (पचीससे प्रयोग वैताल-पचीसी, प्रेमपचीसी), पचमी, वत्तीसी (वत्तीस दाँतोका समुदाय, वत्तीस कथाओका समुदाय), वीसी आदि ।

७ भूषणवाचक, जैसे अँगूठी, कण्ठी (कण्ठमे कहावत—भूखे भक्ति न होय गोपाला, यह लो अपनी कण्ठी माला), करधनी, तगडी, तिलडी, वाली (वाल-सी पतली, कानोमे पहननेका आभूपण) पहुँचा–पहुँची आदि ।

८ मिठाइयोके नाम, अन्दरसी, इमरती, जलेवी, वरफी, वत्तीसी, वूँदी (वूँदसे) आदि ।

९ रगोके नाम, जैसे अगूरी, आवी (आव–पानी,) आसमानी (इसीके अनुकरणपर आकाशी वनाया जा सकता है), उन्नावी, कपूरी, किशमिशी, खाकी (खाक–मिट्टी, रेत गर्दी), गुलावी, घियाकपूरी, चाक-लेटी, धानी, नसवारी (हुलासका रग), प्याजी (प्याज, गण्ठा), वदली (वादलका रग), वादामी, वैंगनी, स्लेटी, शरवती, सिन्दूरी आदि ।

१० कपडोके नाम, जैसे आंगी (आँग–अग, शरीर, तन, स्त्रियोका प्रसिद्ध वस्त्र), ओढनी (ओनी भी), चोली (मु० चोली-दामनका साथ), कमरी, गजी, जवाहरी (जवाहरकट जाकेट, कमरीके अनुकरण पर) वण्डी, वरसाती, (वर्पा ऋतुमे पहननेका मोमिया कोट तथा चादर), मसहरी (मच्छरदानी, मच्छरसे, 'च' को 'स' हो गया), रामनामी (रामनाम छपी चादर), रूमाली, शतरजी (शतरंजनुमा जाजम या विछानेका वस्त्र), सदरी (कमरीकी तरह) आदि ।

११ स्थानोपर चीजोके नाम, जैसे चीनी (चीनसे, चीनी मिट्टी, दानेदार चीनी), खाँड, मिस्री (वहुत साफ की हुई खाँडको जमायी हुई

उडाऊ, कमानासे कमाऊ, खब्बासे खब्बू (बायें हाथसे काम करनेवाला), गँवारू, चलाऊ, चालू (जारी), जाँगलू, झगडू, झेंपू, डाकू, (दबनासे दब्बू, दबनेवाला), निखट्टू, पीठ–पिट्ठू, (पीछे-पीछे चलनेवाला), पीना–पीऊ, (युग्म, खाऊ-पीऊ), पेटू, फिराऊ (वह माल जो बिकनेपर फेरा जा सके), बाज़ारू, ब्याजसे ब्याजू (रुपया), बुद्धू, बेचू, भाडा-से भाडू, (भाडा खानेवाला, बुरे अर्थमें), भोदू (?), (मूर्ख, भोंदू भी), रट्टू, लदना–लद्दू, (बैल आदि, अर्थ-विस्तारसे यह बहुत काम देनेवाले नौकरके लिए भी आता है), लागू आदि ।

सू० स्त्रीलिंग विशेषण बनानेके लिए 'ओ' लगता है, जैसे खब्बो, बडदन्तो, शहरो (शहरमे रहनेवाली स्त्री) आदि ।

२ औज़ारवाचक, जैसे झाडना–झाडू, घौतू (पोगा, तुरई), भोपू, (नरसिघा-सीगा, हॉर्न) आदि ।

३. सम्बन्धसूचक, जैसे, नहरू (नहरके पास रहनेवाला), बाँगरू (बाँगरनिवासी) आदि ।

४ नाम बनानेका प्रत्यय, जैसे ताऊ, बापू, मामू, रामू, चन्दू आदि ।

ऊरा (हि०) विशेषण, जैसे अधूरा (आधा) आदि ।

ए (हि०) १ बहुवचन प्रत्यय, आकारान्त पुल्लिग शब्दोसे जैसे घोडे, बछडे, लडके, लोटे, हुक्के आदि ।

एँ (हि०) बहुवचन प्रत्यय । उन स्त्रीलिंग सज्ञाओसे जिनके अन्तमे ई न हो, जैसे कथाएँ, घटनाएँ, बेगमें, मसजिदें, मेज़ें, रेलें, सभाएँ आदि ।

एज (हि०) भाववाचक सज्ञा, जैसे बाँधना–बन्धेज, (बाँधनेकी क्रिया, व्रतबन्ध, विवाह आदिमें नेगोको बाँधना, रुकावट, नियम, कपडेके बन्धेज) आदि ।

एड़ा (हि०) भाववाचक सज्ञा, जैसे उलझना–उलझेडा (अलझेडा भी), बखेरना–बखेडा (झझट) आदि ।

एता (हि०) विशेषण, चहेता आदि ।

एर (हि०) १ भाववाचक, जैसे घुमेर, (घूमनासे), फेर (फिरना-से कर्मोका) आदि । २ जातिवाचक सज्ञा, जैसे मुँडेर (मूँडसे) आदि । ३ (फा०) विशेषण, जैसे दिलेर (दिलसे, साहसी) आदि ।

एरा (हि०) १ सज्ञाओ तथा क्रियाओके अन्तमें लगता है। व्यापारवाचक, जैसे काँसासे कसेरा (काँसा या उससे बने बरतन वेचने-वाला), चीतनासे चितेरा (चीतनेवाला), ठठेरा (ठक-ठक करनेवाला, वरतन वनानेवाला), लिखनासे लिखेरा (खिलौनोपर चित्र वनानेवाला), लुटेरा, सँपेरा आदि । २ गुणवाचक, जैसे घन घनासे घनेरा (बहुतेरा), दुधेरा भाई आदि । ३ सम्वन्ध–रिश्तासूचक, जैसे चचेरा, फुफेरा, मामासे ममेरा, मौसासे मौसेरा । ४ भाववाचक सज्ञा, जैसे अँधेरा, फेरा, वसेरा (ठिकाना, जैसे चिडिया रैन-वसेरा) आदि ।

एल (हि०) औज़ारवाचक, जैसे नुकेल या नकेल (नाकसे, पशुओके नाकमे डालनेकी रस्सी, लोकोक्ति नाकमे नकेल डालना आदि) ।

एला (हि०) १ लघुतावाचक विशेषणवाचक, जैसे गदेला (गद्दासे), मँडेला (माँडसे, माँडदार भी) आदि । २ सज्ञा, अधेला (आधासे आधा पैसा) अके लोपके पश्चात् धेलाका भी यही अर्थ है। ३. विशेषण जैसे अकेला, अलवेला (वाँका), दुकेला, नवेला, सौतेला आदि ।

एली (हि०) विविध सज्ञा, अधेली (आधा रुपया, अठन्नी, धेली भी), वहनसे भनेली (सखी), हाथसे हथेली आदि ।

एलू (हि०) विशेषण, घरसे घरेलू (झगडे, काम-धन्धे, कुटीर उद्योग) आदि ।

ऐत (हि०) कर्तावाचक, सज्ञाओ तथा क्रियाओके अन्तमे लगता है। जैसे चढैत, डाकासे डकैत, (डाकू या डाका डालनेवाला), पटासे पटैत,

(लोकोक्ति एक पटैत, सौ लठैत), वरछैत, लठैत, लडैत आदि।

ऐया (हि०) १ अपने अर्थमे सम्बोधनसूचक, जैसे दाईसे दैया, नैया, भैया, मैया आदि। २ कर्तावाचक, जैसे कटैया, बचैया, मरैया आदि। यह प्राचीन हिन्दीमे आता था। इसकी जगह वैया प्रत्यय अब भी कभी-कभी प्रयोगमे आता है।

ऐल (हि०) १ कर्मवाचक विशेषण, जैसे दवनासे दवैल (दवनेवाला) रखनासे रखैल आदि। २ कर्तावोधक विशेपण, जैसे (फा०) गुस्सा–क्रोधसे गुस्सैल, दाँतसे दँतैल, निन्दैल, दुधैल (अधिक दूध देनेवाली गाय, भैस), मूँछैल (बडी मूँछोवाला) आदि। (३) सज्ञा, खपरैल आदि।

ऐला (हि०) गुणवाचक, जैसे कसैला, धूमसे धुमैला, बीजसे विजैला, विषैला आदि।

ओ (हि०) स्त्रीलिंग विशेषण तथा नामसूचक, जैसे जमालो (फा० जमालसे, लोकोक्ति भुसमें आग लगा जमालो दूर खडी), जैनो, नक्को (व्यग्यमें वडी नाकवाली), पारसे पारो, (पार्वतीका पुकारनेका रूप भी) भग्गो (भगवतीसे)।

ओई (हि०) पुल्लिग सम्बन्धसूचक, जैसे नन्दोई (नन्दसे नन्दोईया भी) वहनोई (वहनसे, जीजा) आदि।

ओं (हि०) सकलता तथा बहुतके अर्थमे, जैसे तीनो, दोनो, वरसो, सैकडो, हज़ारो आदि।

ओटा (हि०) विविध सज्ञावाचक, भारसे भरोटा, सिंगोटा (सीगो पर चढानेका खोल), हिरनोटा (हिरनका वच्चा), पहलोटा (पहला वच्चा) आदि।

ओड़ा (हि०) कर्तावोधक विशेपण, जैसे भागनासे भगोडा, (भगैल भी), हँसोडा आदि।

ओतरा (हि०) प्रतिशतसूचक, दसोतरा, पंचोतरा (५ प्रतिशत,

पजावमें नम्बरदारको लगान इकट्ठा करनेपर मिलनेवाली पाँच प्रतिशत रकम) आदि ।

ओतरी (हि०) भाववाचक सज्ञा, जैसे घटोतरी, बढोतरी आदि ।

(ओरा हि०) विशेपण, चाटनासे चटोरा ।

(ओला हि०) १ लघुतावाचक, खाटसे खटोला आदि । २. विशेपण, मझोला (बीचका, सस्कृत मध्य और पाली मज्झसे हिन्दी मँझ) । स्त्रीलिगमें मँझोलीका अर्थ एक तरहकी बैलगाडी होता है, इसलिए सन्दिग्धता दूर करनेके लिए उक्त मँझोलाका स्त्रीलिग मँझली होता है, जैसे मँझली वहन आदि ।

ओलिया (हि०) लघुतावाचक, (साँपसे) सँपोलिया आदि ।

ओही (हि०) कर्तावाचक, जैसे बाटसे बटोही आदि ।

औटा (हि०) संज्ञा, पथरौटा (पत्थरका कूँडा कजलोटा या नाँद) आदि ।

औटी (हि०) १ भाववाचक सज्ञा हथौटी, सचौटी आदि । २. औज़ारवाचक, कजरौटी (काजल करने और रखनेकी चम्मच-जैसे आकार की डण्डीदार डिबिया, कजरौट भी), कसौटी (सोना कसनेकी वटिया या काला पत्थर) आदि ।

औड़ा (हि०) औज़ारवाचक, हाथसे हथौडा आदि ।

औता, औती (हि०) १. भाववाचक संज्ञा, सज्ञाओ तथा क्रियाओंसे जैसे कटौती, घटौती, चुकौती, छुडौती (छोडनासे, जो कुछ व्याज आदिमें छोडा जाये), फेरना—फिरौती, मनौती, वापसे वपौती (पैतृक सम्पत्ति) वुढौती, समझौता । कटौती, घटौती, छुडौती, फिरौती ये सब व्यापारियोंके पारिभापिक शव्द है । २ पात्रसूचक, काठसे कठौता, लघुतावाचक, कठौती, आदि । अब काठकी कठौतीके आकारका वरतन पीतलका भी बनने लगा, पर उसे भी कठौती ही कहते हैं ।

औनी (हि०) भाववाचक सज्ञा, विविध अर्थमे, जैसे खातासे बनी क्रिया खतियानासे खतौनी (पटवारीका रजिस्टर भी), छानासे छावनी, जगौनी, बिलौनो (दूध बिलौनेका बरतन), मीचना—मिचौनी (आँख-मिचौनी, एक प्रसिद्ध खेल), मिलनासे मिलौनी आदि ।

औलिया (हि०) कर्ताबोधक, जैसे बीचसे बिचौलिया (जमानती, मध्यस्थ, बीचमे पडनेवाला, लोकोक्ति बिचौलिया दे या दिलाय) आदि।

औवल (हि०) भाववाचक, फुटौवल, बनौवल, बुझौवल आदि ।

क (हि०) १ कर्तावाचक, घालनासे घालक, घोलक, तैराक, कुदाक, चालक, बिगाडक (सुधारकके ढर्रेपर उसका विपर्यय), मारक आदि । इसका सस्कृतमें अक और कन् प्रत्यय होते हैं । हिन्दीमें क्रियाओके साथमे यह प्रत्यय बहुत कम लगता है, पर लगाया जाना चाहिए। २ कर्मवाचक, भाववाचक, तथा जातिवाचक, बन्धक (बँधनासे, गिरवी रखी हुई वस्तु भी)। ३ भाववाचक, उठक (बहुत कम प्रयुक्त होता है), बैठक (कसरत) आदि । ४ स्थानवाचक, बैठक (बैठनेका कमरा) आदि । ५ अपने अर्थमे भाववाचक, जैसे ठण्डक (ठण्डासे) आदि । ६ ध्वनिसूचकसे भाववाचक, जैसे चटक, मटक, धडसे धडक, धडकन भी, छमसे छमक, भडक आदि। ७ सं०, हि०-फा० में भाववाचक, जैसे आतशक (आतश = आगसे, गरमीका रोग), कालक, गजक (गज—खानासे, तिलकी एक प्रसिद्ध मिठाई, रेवडी नही) पेचक आदि। ८. स०, हि०, फा० में लघुतावाचक, जैसे ऐनक (अरबी ऐन = आँख शब्दार्थ, छोटी आँख अर्थात्, चश्मा), ढोलक, बालसे बालक आदि ।

का (हि०) १ कर्तावाचक, जैसे उचक्का (युग्म प्रयोग चोर-उचक्का आदि। २ स्थानवाचक, मायका, मैका, पीहर, पितृगृह। ३ अपने ही, जैसे चुपसे चुपका, छापसे छपका, छोटासे छुटका, तृणसे तिनका, बडासे बडका, बूँदसे बुन्दका आदि। ४ यन्त्रसूचक, भापसे भपका, (अर्क खीचने या निकालनेका यन्त्र, भभका भी)। ५ सज्ञा-

सूचक, छोलनासे छिलका। ६ विविध, माट-मटका, (लघुतावाचक)। ७ विशेषण, जैसे लडाका आदि। ८. भाववाचक, जैसे धमाका, झडाका, धडाका, झनाका आदि। ९ सङ्ख्यावाचक, जैसे इक्का, दुक्का, तिक्का, चौका, नौका।

की (हि०) १ भाववाचक, जैसे डुबकी, चूसना—चुस्की (चूसनेकी वस्तु भी) आदि। २ सज्ञा, जैसे फिरकी, सिरकी आदि। ३ ऊनतावाचक, जैसे कनकी (चावलकी कनकी) ढोल—ढोलकी (ढोलक भी), नल—नलकी, बूँद—बूँदकी आदि। ४ औज़ारवाचक, जैसे धूनना—धुनकी आदि।

गर (फा०) करनेवाला या कर्त्तावाचक। जैसे कलईगर, कलईगरी, कारीगर, कारीगरी, चूडीगर, जादूगर, जादूगरी, नमकगर (नमक बनानेवाला), टीनगर, बाज़ीगर, रफूगर (ऊनी कपडोको रफू करनेवाला), शोरागर (शोरा बनानेवाला), सौदागर, सौदागरी आदि। अँगरेज़ी शब्द टिनसे हिन्दी टीन बनकर उसके साथ गर प्रत्यय लगा है।

चा (फा० च) ऊनतावाचक, जैसे कमानचा, देगचा (देगसे), नैचा (हुक्केकी निगाली), बागीचा, बेलचा, रोज़नामचा, सन्दूक़चा (सन्दूकची भी), मीखचा आदि।

ची (तु०) १. कर्त्तावाचक सज्ञा, जैसे अफीमची, खज़ानची, गुलेलची (गुलेल चलानेवाला), गोलची (अँगरेज़ी गोल-कीपर), ढँढोरची, तबलची, तोपची, नकलची, नक्कारची, निहानची, बन्दूकची, बावरची, (रसोइया) मशालची आदि। २ तिरस्कार सूचक, मिडिलची (आठवी मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण) नक़लची आदि। ३ (फा०) लघुतावाचक, जैसे डोलची, देगची, बुगची, सन्दूकची आदि। यह प्रत्यय हिन्दी-उर्दूमें खूब चलता है।

ट (हि०) भाववाचक सज्ञा, जीव—जीवट।

टा, टी (हि०) जैसे चोट्टा (चोरसे), रोंगटा (रोवासे) आदि। टी० भाववाचक सज्ञा और करणवाचक संज्ञा, जैसे सीटी (सी से) क्रिया—देना, मारना आदि।

ड़ (हि०) १ कर्तावाचक, जैसे भाँगसे भाँगड । २ सज्ञावाचक रुईसे रूअड (लोगड भी) ।

ड़ा, डी (हि०) १. विशेषण तथा सज्ञावाचक, जैसे बोडा (व्यु० सन्दिग्ध, जिसका दांत टूटा हो) फा० लग—लँगडा, सेवा—सेवडा (मृत बच्चोको भूमिसे निकालकर जादू मन्त्र करनेवाला) आदि । २ लघुतावाचक, कोठडा, चमडा, चमडी, टाँग—टँगडी, दु खडा, पटडा, पटडी, पख—पखडी, बनडा, बना, बनी, बनी-बनडी (वर-वधू), लालडी (लाल नगीना), लोथ—लोथडा आदि ।

त (हि०) १ भाववाचक, क्रियाओका ना हटाकर लगाया जाता है, जैसे खपना—खपत, चलत, चाहत, ढलत, पडना—पडत (कपडेकी तह, सौदा बिक्रीका पडता या पडत), पढत, फलत, फिरत, भरत, मिन्नत, रगत, लिखत आदि । २ विविध सज्ञाओसे भाववाचक, जैसे बादशाहत, (रावत रावसे—राउत भी, छोटा राजा, एक क्षत्रिय वश) आदि ।

तना (हि०) परिमाणवाचक, इतना, उतना, जितना, कितना आदि ।

ता, ती (हि) १ वर्तमानकालिक विशेषण, जैसे आता-जाता, उठती जवानी, उतरता चाँद (भाग्य, सूर्य) राम लगती बात आदि । २. कर्म-वाचक विशेषण, जैसे ब्याहता स्त्री । ३. भाववाचक संज्ञा, आना—आता (वाजिब, बाकी रकम-प्रयोग–जो आपका आता था, सब दे दिया, जो और आता हो बता दीजिए, आदि । ४ विविध, जैसे पांवो-पँयता (पायन्त भी) राई—राइता आदि ।

ती (हि०) भाववाचक, जैसे कटती, कम—कमती, गिनती, घटती, चढती, पावना—पावती (पहुँच, रसीद), फबती, बढती, बुनना—बुनती, भरना—भरती (अनाजकी भरती, फौजकी भरती) । कमती (फारसी शब्द) 'कम'से बना है । इसका प्रयोग विशेपणके रूपमें भी होता है, जैसे कमती तोल । वर्तमानकालिक कृदन्त, विशेषण, जैसे उठती जवानी, ढलती सांझ, चढती रात, चलती-फिरती माया, फबती बात आदि ।

ते (हि०) १ 'ता' का बहुवचन रूप–आते-जाते, आदि। २ क्रियाके पौन पुन्य और सातत्यका बहुवचन—वे वहाँ रोज़ आते और चले जाते। होटलमे खाते, मुसाफिरखानेमे सोते।

दान (फा०) किसी वस्तुको रखनेका पात्र, संज्ञा, जैसे अगरदान, आतिशदान (अग्निपात्र, कमरेकी अँगीठी), इत्रदान (नी), कटोरदान, कलमदान, गुलदान, गोंददानी, चायदानी, धूपदानी, नमकदान, नमकदानी, पानदान, फूलदान, रेतदानी (बालूदानी), रोशनदान (प्रकाशके लिए छतकी ओर बनी खिड़की) सिगारदान, सूरमेदानी आदि। दानवाले शब्द पुंल्लिग और दानीवाले शब्द स्त्रीलिंग तथा लघुतावाचक होते है। कुछ शब्दोंका केवल एक ही लिंग होता है। फारसी प्रत्यय होते हुए भी हिन्दी शब्दो और चीनी शब्द चायके साथ प्रयुक्त हो गया है।

दार (फा०) हिन्दीमें इसका समानार्थक प्रत्यय 'वाला' है। कर्तावाचक संज्ञा, पदसूचक संज्ञा तथा अँगरेजी शासनकालमें बहुत-से पदाधिकारियोंके नाम दार प्रत्ययसे बनते थे। ये शब्द आजकल भी प्रचलित है।

१. कर्तावाचक संज्ञा तथा पदसूचक संज्ञा, जैसे उज्रदार (आपत्ति करनेवाला) उज्रदारी, कर्जदार (ऋणी) कर्जदारी, किरायेदार, खरीदार (खरीद + दार), ग्राहक (लिवाल) घाटदार (घाटका ठेकेदार) घाटदारी, चोबदार, चौकीदार (री), जमीदार (री), जागीरदार (री), जिम्मेदार (री), जिलेदार (री), ठेकेदार (री), तहसीलदार (री), थानेदार (री), नातेदार (सम्बन्धी) नातेदारी (रिश्ता), पत्तीदार पत्तीदारी, पहरेदार पहरेदारी, फौजदार, बेलदार (फावड़ा चलानेवाला), मालदार (धनी), मुहल्लेदार (कहावत घर ना बार, मियाँ मुहल्लेदार) मुहल्लेदारी, रिश्ते-दार (री), रिसालदार (घुड़सेनाका एक छोटा या बिना कमीशनवाला अफ-सर) रिसालदारी, सरदार (सिक्खोंको आदरसे पुकारनेके लिए भी प्रयुक्त होता है) सरदारी, साझेदार (री), सूबेदार (री) आदि। इन शब्दोंके

स्त्रीलिंग रूपमें नी प्रत्यय लगता है, जैसे नम्बरदारनी, सरदारनी आदि और भाववाचक सज्ञामें ई प्रत्यय लगता है, जैसे ठेकेदारी।

२ विशेषण, जैसे आँकडेदार, आबदार (चमकदार), ऐवदार (दोषी, त्रुटिपूर्ण), कटारीदार, कन्नीदार, किनारीदार, खिडकीदार, दुनियादार (री), दुमदार (जानवर, पशु, तारा), धब्बेदार, धारीदार, नामदार (री), पत्तेदार, फलदार, फुन्देदार, फौज़दार (फौज़दारी, कचहरी, अदालत, मुकदमा), बालदार (बालोवाला, रोएँदार, बारीक तरेडवाला, चीनीका बरतन), मज़ेदार, मशालेदार, मेवेदार, रगदार, रद्देदार, रवेदार, रसदार (रसीला), रेशेदार, रूईदार, लचकदार (लचकीला भी), लच्छेदार (रबडी, बातें) आदि। यह प्रत्यय फारसी होते हुए भी दान प्रत्ययके समान हिन्दीमे रच-पच गया है।

न्त (हि०) भाववाचक, जैसे घडन्त, पढन्त, पिटन्त, लडन्त आदि।

न (हि०) १ (अ) भाववाचक, आकारान्त विशेषणोसे जैसे ऊँचान, चौडान, नीचासे नीचान, लम्बान आदि। (आ) धातुओसे—उतरन, उतारन, उलझन, कहन (कहनासे), चलन (चाल, यो० चाल), जलन, थकन, धडकन, मरन, लेन-देन, सूजन आदि। २ विशेषण, जैसे लोटनासे लोटन आदि। ३. स्थानवाचक जैसे फिसलन, रपटन (ये भाववाचक सज्ञाएँ भी है) आदि। ४ यन्त्रवाचक (अ) धातुओसे जैसे झाडन, बेलन, लटकन आदि। (आ) सज्ञासे जैसे दाँतन (दाँतसे), दतौन भी आदि।

नवीस (फा) लिखनेवाला (कर्तावाचक) जैसे अरज़ीनवीस, अरज़ीनवीसी, चिटनीस, चिटनोस (मराठी गोत्र) स्याहनवीस आदि। मराठीके फडणीसमे द और व का लोप कर देते है और र को ड तथा न को ण बोलते है। चिटणीसमे भी व का लोप हुआ है और न को ण। यह प्रत्यय फारसी तथा अरवी शब्दोके साथ प्राय लगता है।

ना (हि०) इससे कृदन्त तथा तद्धित शब्द (क्रियाएँ, कर्मवाचक

सज्ञाएँ, विशेषण और यन्त्र आदिके नाम) बनते है। हिन्दीके आदि-कालमे सस्कृत धातुओके आगे ना प्रत्यय लगाकर हिन्दी क्रियाएँ बना ली जाती थी, जैसे नमना, प्रकाशना, भाषणा आदि। हिन्दीकी तद्भव क्रियाएँ तथा उर्दूकी बहुत-सी क्रियाए इसी तरह बनी है। पीछेसे सस्कृत-निष्ठ हिन्दी-प्रेमियोने इस पद्धतिको छोड दिया और 'करना' लगाकर सयुक्त क्रियाए बनायी जैसे नमस्कार करना, प्रकाश करना और भाषण करना या भाषण देना आदि। इस प्रतिगामितासे हिन्दोकी कितनी हानि हुई, इसका और इस पद्धतिका विशेष उल्लेख क्रियाओके परिच्छेद-में आगे आयेगा। इस प्रत्ययसे अरबी, फारसी आदि शब्दोसे बनी हिन्दी-उर्दू क्रियाओके उदाहरण यहाँ दिये गये है।

१. कर्मवाचक, जैसे खाना (भोज्य पदार्थ, उदा० मै खाना खाने जा रहा हूँ।), गाना (गीत), बोलना (बात) आदि। २ भाववाचक, जैसे चाँदसे चाँदना (चाँदनी भी) आदि। ३. यन्त्रवाचक, जैसे ओढना (ओढनेका वस्त्र, स्त्रियोका ओढना, दुपट्टा), कसना (कसनेका औजार), छन्ना, छलना (पानी छाननेका वस्त्र), झरना (दाल, अनाज आदि झारनेका), झूलना (झूला भी), पालना (बच्चोका पंगूडा), मपाना (मापनासे), मापा भी आदि। लघुतावाचकमे भी लगता है जैसे छलनी आदि। ४. लघुतावाचक, जैसे, भुतना (भूतसे), मटकना (मटकासे) आदि। ५ विशेषण, जैसे उडना (उडनेवाला), घर-घुसना, नचना, फिसलना, मोमना (मोमसे), रोना (रोनेवाला, रोना बच्चा, रोनी सूरत), हँसना आदि। ६ क्रिया, क सस्कृतसे—अनुवादना (न), चलना, नमना, प्रगटना, प्रकाशना, लिखना, सम्पादना (न), सहना। ख अरबीसे—कबूलना, दफनाना, बदलना आदि। ग फ़ारसी-से—आज़माना, खरचना, खरीदना, गुर्राना, तराशना, दाग़ना, (घोडे आदिको दाग देना) फरमाना, बख़्शना, शरमाना, अँगरेजी फिल्मसे फिल्माना आदि।

नी (हि०) १ भाववाचक, जैसे कटनी (कटना), घिसनी, चाँदनी (चाँदसे), बदनी (फाटके, सट्टेका व्यापार), बोनी, भरनी (कहावत : जैसी करनी, वैसी भरनी) आदि।

२. स्त्रीलिंग बोधक प्रत्यय, जैसे ऊँटनी, खटीकनी, जमादारनी, जाटनी, जादूगरनी, ठेकेदारनी, डॉक्टरनी, डोमनी, थानेदारनी, नटनी, भाटनी, मास्टरनी, शेरनी, हवलदारनी आदि।

३ कर्तापन बोधक विशेषण जैसे कहानी (कहने योग्य), कह मुकरनी, घर-घर झाँकनी, घर-घर फिरनी, फूलसूँघनी, रोनी (सूरत), सुननी (सुनने योग्य बात) आदि। कहनी, सुननी भा० वा० सज्ञाके रूपमें भी प्रयुक्त होता है।

४ कर्मवाचक सज्ञाएँ, ओढनी, चटनी, सुँघनी (हुलास) आदि।

५. करणवाचक सज्ञाएँ, जैसे कतनी (कातना से, चरखा कातनेका सामान रखनेका पात्र), कतरनी (कतिया, काटनेका औज़ार, कहावत . हाथमे सुमरनी, बगलमे कतरनी), करनी (राजमिस्त्रियोका चूना या गारा अथवा सीमेण्ट-मसाला आदि लगाने बनानेका औजार), कुरेदनी (दाँत खुरचनी), छलनी, झरनी, दुहनी, धौंकनी, नथसे नथनी, फूँकसे फूँकनी, मथनी (मथानी), सुमरनी आदि।

६ आवृत्ति-सूचक, जैसे दूनी (दुगनी, प्रयोग—दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करना)।

पत (हि०) भाववाचक, जैसे कुँवारपत (कुँवारपन भी), सियानपत (सियानासे, चतुराई, ओझाई) आदि।

पन (हि०) भाववाचक, जैसे अलबेलापन, पीलापन, पागलपन, बचपन, बाँकपन, भोलापन, लडकपन आदि।

पा (हि०) भाववाचक, जैसे जलापा, बहनापा, (बहनसे, सखी-भाव), बुढापा, मुटापा आदि।

पोश (फ़ा०) विशेषण पदसूचक तथा करणवाचक, जैसे ऐबपोश

(दोष ढँकनेवाला), चिलमपोश, तख्तपोश, पलँगपोश (चादर), मेजपोश, स्याहपोश (काले वस्त्र पहननेवाला, एक पद भी), सफेदपोश (सफेद वस्त्र पहननेवाला, एक पद भी) आदि ।

बन्द (फ़ा०) बाँधनेवाला, विशेषण, जैसे इज़ारबन्द, कतारबन्द, कमरबन्द, कलमबन्दी, किलाबन्दी, गूलूबन्द, चकबन्द, चकबन्दी, पाबन्द, बाजूबन्द (एक आभूषण) आदि ।

बाज (फा०) व्यसनद्योतक, कर्त्तावाचक तथा विशेषण—जैसे अकड़बाज़, अटकलबाज़, कलाबाज़, चालबाज़ (चालाक), जल्दबाज़, दगाबाज़, धाँधलेबाज़, धोखेबाज़, हुल्लड़बाज़ आदि । बाज़के अन्तमे ई प्रत्यय लगानेसे भाववाचक संज्ञा या खेलका नाम बनता है । जैसे कबूतरबाज़ी, जल्दबाज़ी, दगाबाज़ी आदि । यह प्रत्यय हिन्दी शब्दोके साथ भी बहुधा लगाया जाता है, जैसे अटकलबाज़, अण्टीबाज आदि । विदेशी शब्दोके साथ भी लगता है जैसे पार्टीबाज़ी आदि ।

म (हि०-तु०) हि०—गुणवाचक, जैसे अधम (अधस्‌मे), आदिम (आदिसे), पचम (स्वर, दक्षिणकी एक जाति भी), मध्यम (मध्यसे) सप्तम आदि । तु० १. विशेषण किन्तु संज्ञाभावमे अधिक—जैसे नीलसे नीलम (नीलमणि), (रेशा-तन्तु) रेशम आदि ।

२ स्त्रीलिंग प्रत्यय—जैसे बेगम (बेग = बडा, सम्पन्न, अध्यक्ष, नायक, भद्र पुरुष), खानम (खानकी पत्नी या स्त्री) आदि । तत्सम तुर्की शब्दका शुद्ध उच्चारण 'बेगिम' है परन्तु उर्दूमें बेगम ही चलता है ।

री (हि०) लघुतावाचक, जैसे कोठासे कोठरी (काल-कोठरी), बाँससे बाँसुरी आदि ।

ल (हि०) संज्ञा और विशेषणवाचक—घावसे घायल, पाँयसे पायल और खरसे खरल, गरसे गरल आदि ।

ला (हि०) १. विशेषण, जैसे अगला, कँगला, गँदला, धुँधला, निठल्ला (बेकाम, बेकार), निचला, परला, पिछला आदि । २ उपवासके

दिनोका परिमाण सूचक प्रत्यय जैसे, चौला (चार दिनका उपवास), तेला (तीन दिनका उपवास)। ये जैन पारिभाषिक शब्द है। इस अर्थमे इस प्रत्ययपर अधिक प्रकाश पडनेकी आवश्यकता है।

लाना (हि०) सकर्मकक्रियाबोधक खिलाना, पिलाना, जिलाना, दिलाना, धुलाना, मिलाना, रुलाना, सुलाना आदि। यह प्रत्यय लगानेपर धातुके स्वरोमे परिवर्तन (आसे इ या ओसे उ या ईसे इ आदि) हो जाता है।

ली (हि०) लघुतावाचक, जैसे गाँठसे गुठली, डफसे डफली, तकली, पिंड, पिंडासे पिंडली, पोटली आदि। तिरस्कार बोधक, जैसे रुपया से रुपल्ली आदि। भाववाचक, जैसे खुजानासे खुजली आदि।

वट (हि०) भाववाचक सज्ञा, खेनासे खेवट, बनावट, लिखावट, सजावट आदि।

वन्त (हि०) विशेषणवाचक सज्ञाओके अन्तमें लगता है, जैसे कलावन्त, कुलवन्त, गुणवन्त, जसवन्त, दयावन्त आदि। सू० स्त्रीलिंगमें इन शब्दोके आगे ई प्रत्यय लगता है, जैसे कुलवन्ती, गुणवन्ती, लाज-वन्ती आदि।

वाँ (हि०) १ क्रमवाचक विशेषण, जैसे पाँचवाँ, छठवाँ, सातवाँ, नवाँ, दसवाँ, सौवाँ आदि। सू० स्त्रीलिंगमें ई लगता है, जैसे, छठवी, दसवी, आदि। २ विशेषण, जैसे उरेबवाँ, कटवाँ, कतरवाँ, गेहुआँ, जुडवाँ आदि।

वा (हि०) १. (अ) वालाके समान कर्तावाचक जैसे खेनासे खेवा (नावखेवा, खिवैया भी), देवा (पानीदेवा), लेवा (प्रयोग . जानलेवा रोग), नामलेवा (प्रयोग उसके पीछे न कोई पानीदेवा है न नामलेवा) आदि। (आ) सज्ञासे, जैसे अगुवा, अगुवाई, पटवा (पट—रेशमसे), पेशवा (पेश—आगेसे, मराठोका प्रसिद्ध मुख्यमन्त्री-पद), आदि।

२ लघुतावाचक, बचवा (बच्चासे), बबुवा (बाबूसे, दामादके

अर्थमें भी), बिटवा (बेटासे), आदि। इस अर्थमे यह प्रत्यय पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहारकी बोलियोमें ही अधिक प्रयुक्त होता है।

३ भाववाचक क्रियाओसे, जैसे दिखलावा, दिखावा, पहनावा, पछतावा, फुसलावा, बहकावा, बहलावा, बुलावा, भुलावा आदि।

४. विशेषण, जैसे गहनवा (गहन—ग्रहणसे), पछुवा (पच्छिमसे,—हवा, पवन), पुरवा (पूर्वी पवन) आदि।

वाडा (हि०) १ मुहल्लोके सूचक, जैसे काज़ीवाडा, छिंदवाडा, जटवाडा, नाईवाडा, भीलवाडा आदि। २. दिनोकी अवधिसूचक, जैसे अठवाडा, पखवाडा आदि।

वाद (सं०) वद् धातु बोलनासे, सिद्धान्त व नामसूचक, जैसे अनीश्वरवाद, अनीश्वरवादी, अनेकान्तवाद, अवसरवाद, अवसरवादी, अहिंसावाद, अहिंसावादी, आशावाद आदि। यह अँगरेज़ी प्रत्यय इज्म (ism) का समानार्थक है।

वाना (हि०) प्रेरणात्मक क्रियासूचक, जैसे उठवाना, उडवाना, तुलवाना, धुलवाना, पिटवाना, बिकवाना, लिखवाना आदि। सू० इनसे भा० वा० सज्ञा और पारिश्रमिक सूचक सज्ञा धुलवायी, लदवायी आदि बनती है। यी की जगह 'ई' का भी प्रयोग होता है और ये शब्दरूप स्त्रीलिंग ही माने जाते हैं।

वाल (हि०) १ कर्तावाचक स० वाला अर्थमे, जैसे कोतवाल, दिवाल, बिकवाल (ली), रखवाल, लेवाल (लिवाल और लिवाली, मोल लेनेवाला) आदि। सू० बिकवाल, बिकवाली, लिवाल तथा लिवाली शब्द व्यापारियोमे खूब चलते है।

२ गोत्रसूचक, जैसे, अग्रवाल (अगरोहवाले), काशलीवाल, खण्डेलवाल, गनवाल, जायसवाल आदि।

वाला (हि०) (अ) कर्तावाचक सज्ञा, क्रियाओके अन्तमे आ को

ए से बदलनेके बाद लगता है, जैसे आनेवाला, काटनेवाला, पढनेवाला, आदि।

(आ) सज्ञाओके पीछे, जैसे आँखोवाला, खेतवाला, खोचेवाला, ज़रीवाला, झल्लीवाला, टैक्सीवाला, पैसेवाला, मतवाला, मोटरवाला आदि। कर्तावाचक सज्ञाएँ बनानेके लिए यह प्रत्यय सबसे सरल और अधिक उपयोगमें आनेवाला है। 'वाल' भी इसीका रूप है।

वास (हि०) भाववाचक, जैसे बकवास, रुँवास आदि।

वी (फा०) नगरसम्बन्ध सूचक (अकारान्त तथा ईराकान्त नगरोसे) जैसे अम्बालवी, ईसवी, गजनवी, देहलवी, बटालवी आदि।

स्तान (फ़ा०) स्थानका ही बिगडा रूप है यह—स्थान या देशके अर्थमें आता है—जैसे, अफगानिस्तान, इग्लिस्तान, कब्रिस्तान, गुलिस्तान (फुलवाडी, बाग), पाकिस्तान, रेगिस्तान, हिन्दुस्तान आदि।

स (हि०) १ (सासका सक्षिप्त) ससुरालमे वर-वधूके स्त्री सम्बन्ध-सूचक, जैसे तायस (ताया + सास), दादस, नानस, पीतस (व्यु० सदिग्ध, चचिया सास), फूफस आदि। इसका पुल्लिग 'रा' लगानेसे बनता है। जैसे, तायसरा, दादसरा (हरियानेमे ग्रामीण बहुएँ गाँवके पुरोहित, पण्डितको भी दादसरा कहती है), नानसरा, फूफसरा, आदि। इन शब्दोके पर्यायवाची शब्द इया प्रत्ययके अन्तर्गत हैं। और यह प्रत्यय भी इसी बातको सिद्ध करता है, कि प्रत्यय पहले शब्द थे, पर घिस-घिसकर बादमें (साससे स) प्रत्यय रूप बन गये।

२ भाववाचक, जैसे आपसे आपस, घमस आदि।

सरा (हि०) सख्याक्रमवाचक, जैसे तीसरा, दूसरा। स्त्रीलिंगमे ई लगानेसे तीसरी, दूसरी बनते हैं।

सा (हि०) सदृशतावाचक—कमल-सा, चाँद-सा, फूल-सा आदि।

परिमाणवाचक— थोडा-सा, बहुत-सा आदि।

प्रकारवाचक—ऐसा, जैसा, तैसा, कैसा, वैसा, आदि।

सार (हि०) १ साल–से, जैसे भण्डसार (भण्डार)। २. विशेषण, जैसे चलनसार, मिलनसार आदि।

सों-(हि०) काल (पूर्व दिन) वाचक—परसो, नरसो आदि।

हट (हि०) भाववाचक—आनासे आहट (आनेकी आवाज़), कड़-वाहट, कसकसाहट, कुलबुलाहट, खडखडाहट, गिडगिडाहट, घबराहट, चिकनाहट, जगमगाहट, झुँझलाहट, तमतमाहट, आदि।

हरा (हि०) परतसूचक विशेषण, जैसे इकहरा, दुहरा, तिहरा, चौहरा आदि। स्त्रीलिंगमे ई लगता है। जैसे इकहरी आदि इनसे क्रिया बनानेके लिए शब्दके अन्तमे 'ना' प्रत्यय लगा देते है जैसे दोहराना आदि।

हार (हि०) कर्ता-बोधक विशेषण, जैसे चलनहार, जानहार, होनहार (भावी, होनी, अच्छे गुणो तथा लक्षणोवाला) आदि।

हारा (हि०) कर्तावाचक संज्ञा, जैसे पिसनहारा, लकडहारा। सू० स्त्रीलिंगमें 'ई' लगता है जैसे पिसनहारी।

ही, हीं (हि०) निश्चयवाचक—(सर्वनाम अथवा स्थान या काल-वाचक क्रियाविशेषण जैसे—वही, यही, सही, यहीं, वहीं, नहीं, कहीं। फारसीके 'स्तान'की तरह हिन्दीमे अनेक शब्द अपने मूलरूपोमे ही प्रत्ययो-के समान अन्य शब्दोके साथ प्रयुक्त होते हैं। जैसे नगर, पुर, गढ, गाँव, नेर, येर, ताडा, कोट, अनाक आदि। नये भाषाशास्त्री ऐसे सयुक्त पदो या शब्दोको सामासिक ही मानते हैं। हमने भी उन्हे इस क्रममें यहाँ नही दिया है।

आठवाँ परिच्छेद

सामासिक शब्द

सामासिक या जुडवाँ शब्द प्राय. हर-एक भाषाके शब्द-समूहका आवश्यक तथा अनिवार्य अग है। सामासिक शब्दोके द्वारा एक तो जुडवाँ भावोको आसानीसे प्रकट किया जा सकता है और दूसरे लम्बे पदोके स्थानपर दो-तीन शब्द पास-पास रख देनेसे वही काम पूरा हो जाता है। प्रयासलाघवता या कम शब्दोमें लम्बी बात कहनेकी ओर यह एक कदम है। सस्कृतमें तो लम्बे-लम्बे सामासिक पदोकी भरमार है। अँगरेज़ी भाषामें सामासिक शब्द सहस्रोकी गिनतीमें हैं। जॉन बीम्सका कथन है, कि यद्यपि आधुनिक (भारतीय) भाषाओमें सस्कृतके समान सामासिक शब्दोकी रचनाकी अधिकता नही है, फिर भी उनमे उनकी शक्तिकी कमी नही है।[1] हिन्दीमें जुडवाँ शब्द बनानेकी योग्यता है। इसलिए उसमे सामासिक शब्दोकी कमी नही है और भविष्यमें भी ऐसे शब्द, सामान्य शब्द तथा पारिभाषिक शब्द बडी सख्यामें बनाये जायेंगे। कैलॉगका मत है कि सामासिक शब्दोके प्रयोगमें हिन्दी अत्यन्त अधिक स्वतन्त्रता मानती है।[2] हिन्दी शब्द निर्माताओको हिन्दीके इस गुणका पूरा-पूरा लाभ उठाकर सामासिक शब्दोसे हिन्दी शब्दसमूहको बढाना चाहिए। समाससम्बन्धी कुछ जरूरी बातें उदाहरणसहित बहुत सक्षेपमें, यहाँ दे रहे है जिससे इस परिच्छेदमें आये हुए जुडवाँ शब्दोको समझने, विग्रह करने तथा नये

१. कम्परेटिव ग्रामर भाग २, पृ० १२३।

२ ग्रामर ऑव हिन्दी लैंग्वेजेज़ पृ० ३६१।

सामासिक शब्द बनानेमें कठिनाई न हो।

सामासिक शब्दोका ठीक-ठीक विग्रह करना शुद्ध अर्थ समझनेके लिए बडा जरूरी है, वरना अर्थका अनर्थ होनेका डर रहता है। समास करनेकी अपेक्षा विग्रह करना अधिक कठिन है। सूरजमुखी, पनघट (पन = पानी), पनवाडी (पन = पान) तथा पनसेरी (पन = पाँच) आदि शब्दोके विग्रह करनेमे अँगरेजीके हाउसबोट तथा बोटहाउस आदि शब्दोकी तरह मालूम होगा कि इन सामासिक शब्दोमें कैसे अर्थ होता है। सूरजमुखी एक फूलका नाम है, जिसका मुख सदा सूरजकी तरफ रहता है। यों सूरजमुखी शब्द चन्द्रमुखी जैसा है, पर दोनोके अर्थमें भेद है। ऐसे ही पनघट, पनवाडी और पनसेरी शब्दोमे 'पन'का अर्थ अलग-अलग है। इसी प्रकार मच्छरदानी (मसहरी), सुरमेदानीके समान मच्छर रखनेके काम नही आती, वह तो मच्छरोको दूर रखनेके काम आती है।

सामासिक शब्दोके अर्थ भी हम दूसरे शब्दोके अर्थोके समान बिना भूल किये समझ लेते है।

सामासिक शब्दोके विग्रहमें भेद होनेसे समासका भेद भी पलट जाता है, जैसे पीताम्बर शब्दका अर्थ पीला कपडा होनेपर वह कर्मधारय समास है परन्तु यदि उनका विग्रह 'जिनका वस्त्र पीला है' करें तो वह बहुव्रीहि समास माना जायेगा।

हिन्दी शब्दोमें संस्कृत सामासिक पदोंके समान वर्तनीमे सन्धि करनेका नियम नही है, जैसे राम-आसरे, बे-ईमान आदि। पर बोलनेमें इन दोनो शब्दोको रामासरे तथा बेईमान बोलते है। छोटे-छोटे समासोमे दोनों शब्दोको मिलाकर लिखा जाता है, पर बडे-बडे शब्दोके बीचमे या जिन समासोमे उच्चारणकी कठिनाई हो, उनके बीचमे समास-चिह्न (-) लगा दिया जाता है, जैसे सास-ससुर, सजिल्द आदि।

हिन्दीमे संस्कृतके समान लम्बे-लम्बे समास करनेकी पद्धति भी रही है। महाकवियो-द्वारा बडे-बडे सामासिक पद 'जन मन मञ्जु-मुकुर-मल-हरनी

(रामायण) और 'नख दस नसेल महाद्रुमायुध'[1] प्रयुक्त हुए हैं पर इस प्रकारके समासोके लिए हिन्दीकी स्वाभाविक प्रवृत्ति नही है। प्राय दो या अधिकसे अधिक तीन शब्दोके ही समास मिलते हैं और हिन्दीके लिए ये ही पर्याप्त हैं।

सस्कृतमें समासोके भेदो-उपभेदोका बहुत सूक्ष्म वर्णन है। हिन्दीके पुराने वैयाकरणोने भी सस्कृतके ढगपर ही समासोका वर्णन किया है।

जिन दो शब्दोमे समास होता है, अर्थकी दृष्टिसे उनमें एक शब्द मुख्य या प्रधान होता है और दूसरा शब्द गौण या अप्रधान। किसी समास-मे पहला शब्द प्रधान होता है, जैसे यथासम्भव और हरसाल आदिमें पहले शब्द प्रधान हैं। कभी-कभी सामासिक पदका दूसरा या अतिम शब्द ही प्रधान होता है, जैसे डाकखाना, घुडसाल और रसोईघर आदिमे दूसरे शब्द ही प्रधान है।

जिन शब्दोमें समास होता है, उनकी प्रधानता या अप्रधानताके आधारपर ही समासोके ये चार बडे भेद किये गये है ·

१ **अव्ययीभाव समास** मे पहला शब्द प्रधान होता है, जैसे यथासम्भव, हरसाल आदि।

२. **तत्पुरुष समास** में दूसरा शब्द प्रधान होता है, जैसे राजपूत, घुडसवार आदि। तत्पुरुष समासका एक भेद कर्मधारय समास होता है। इसमें दोनो शब्दोकी एक कर्त्ताकारककी विभक्ति आती है, जैसे छुटभैया, शुभागमन आदि। कर्मधारय समासका भी एक उपभेद द्विगु समास है, जिसमे पहला पद सख्यावाचक होता है, जैसे इकतारा, दुगुना आदि। इन गिनती-सूचक शब्दोका अलगसे विस्तारके साथ वर्णन किया गया है। कर्मधारय और द्विगु समास अलग समास नही है, वरन् तत्पुरुषके ही भेद हैं।

---

१ ग्रामर ऑव हिन्दी लैंग्वेज, पृ० २७१

३. द्वन्द्व समास मे दोनो शब्द प्रधान होते है, जैसे—उतार-चढाव, चिट्ठी-पत्री, सुख-दु ख आदि ।

४ बहुव्रीहि समास मे कोई भी शब्द प्रधान नही होता, जैसे—कनफटा, पतझड, पीताम्बर, बालतोड, सप्तऋषि, हरिजन, लालकुर्ती (लाल वर्दीवाली सेना) आदि ।

द्वन्द्व तथा बहुव्रीहि समास एक सयुक्त सकल्पना (Complex Concept) प्रकट करते है ।

कभी-कभी सामासिक शब्दोको भी दूसरे शब्दो या सामासिक शब्दोके साथ जोडकर सयुक्त सामासिक पद (Complex Compound) बना दिया जाता है । ये कुछ पेचीदा और कठिन समास होते है, जैसे—नभ-जलथलवासी, पनडुब्बी-शाला तथा षट्रसभोजन । लम्बे-लम्बे समासो-को समझनेमे कठिनाई पडती है, इसलिए इनको न बनाना ही ठीक है। फिर भी आवश्यकतानुसार बनानेमें हानि नही है ।

कवितामें कभी-कभी सामासिक पदके दोनो शब्दोके स्थान बदलकर समास बना लेते है, इन्हें उलटे समास (Inverted Compounds) कहते है, जैसे मतिहीनके स्थानपर हीनमति, विवेकयुक्तके स्थानपर युक्तविवेक आदि । यह कवियोके शब्द-प्रयोगसम्बन्धी जन्मसिद्ध अधि-कारकी बात है, और ये कवितामे ही चलते है । उपसर्गोसे बने शब्दोको भी कामताप्रसाद गुरु और केलॉग साहबने समास माना है, जैसे आगमन, गैरहाजिरी, नासमझ, प्रतिवादी, बेचैन आदि । पर प्रस्तुत विषयसे इसका कोई सम्बन्ध नही है । शब्द-रचयिताको इस झझटमें नही पडना चाहिए ।

समासोंके भेद-उपभेद अनेक उदाहरणोंके साथ ऊपर दे दिये गये है । अब नीचे ऐसे समस्त पदोके कुछ और उदाहरण दूसरे ढंगसे दिये जाते है, जिनमें हिन्दी धातुएँ, क्रियाएँ या उनसे व्युत्पन्न शब्द विशेष रूपसे जुडे हुए है । इनको भी उपरोक्त भेदोमें बाँटा या वर्गीकृत किया जा सकता है । इस प्रकारके समास हिन्दी, उर्दू आदिमे बडी सख्यामें प्रचलित है, ऐसे

सुन्दर समस्त पदोको रचने तथा प्रचलित करनेवालोने भाषाकी न केवल महान् सेवा ही की है, वरन भावी शब्द-रचयिताओके लिए एक मार्ग भी निर्दिष्ट किया है।

१. संज्ञा और धातु मिलनेसे समस्त पद, कर्तावाचक विशेषण या सज्ञाका रूप धारण कर लेते है, जैसे अडीमार, कमरतोड, कीटाणुमार (न) Germıcıde, Germıcıdal जीवाणुनाशी भी, खुरपा-फाड गुड, गरदन-तोड बुखार, गिरहकट, घिया-कस, घर-फूँक तमाशा, घुटने-टेक नीति (न) जबडा तोड, डण्डी-मार, तोसमार, दादमार। (न) (दादोको मारनेवाली औषधि) दिलतोड, नकचढा, नीबू-निचोड, बत-बना, मक्खी-चूस, माँ-मार। Matrıcıde, Matrıcıdal (न) स्याही-चूस, मेज़-पोश शिशु-मार (न) rıfantıcıde (शिशुहत्या भी), सफेद-पोश आदि।

२. सज्ञा और धातुके मिलनेसे समस्त पद, कर्मवाचक, जैसे—तिलकुट आदि।

३. संज्ञा और अकर्मक क्रियाकी धातु मिलनेसे विशेषणसूचक समस्त पद बनता है मुँहफट, हथछुट आदि।

४ सज्ञा और क्रियाके भूतकालिक रूपके मिलनेसे समस्त पदमें कर्मबोधकता पैदा होती है आँखो-देखी घटना, आप-बीती, कान-पकडी बाँदी, मन-मानी बात, मुँह-आयी बात, मुँह-देखी बात, मुँह-बोली बहन, मुँह-माँगे दाम, मुँह-माँगी-मौत, हाथ-उठाया दान आदि।

५. सज्ञा और भूतकालिक क्रियाके मिलनेसे कभी-कभी कर्ता बोधकता पैदा होती है, जैसे कठ-फोडा, कन-बिधा, कम-तोला, खट-बुना, घस-खुदा, जेब-कतरा, पन-डुब्बी आदि।

६ सज्ञा और भूतकालिक क्रियाके मिलनेसे कभी-कभी समस्त पदमें विशेषणका अर्थ पैदा होता है, जैसे कनकटा, कनछिदा, कनफटा, कमर-

टूटा, कान-पड़ी आवाज़, तारों-भरी रात, दिलचला, नकचढ़ा, परकटा, सिरकटा, सिरफिरा, सिरमुँड़ा जोगी आदि।

७. दो धातुओंके समाससे कर्तावाचक संज्ञा बनती है, जैसे—लेमर, लेलोढ़ आदि।

८. दो भूतकालिक क्रियाओंके समाससे कर्मबोधक विशेषण बन जाता है, जैसे—गया-गुजरा, गयी-गुजरी बात, गयी-बीती बात, छुई-मुई, जला-भुना, टूटा-फूटा, देखा-भाला आदमी, पढ़ा-गुना, पढ़ा-लिखा, पाला-पोसा बच्चा, बना-बनाया काम, लीपा-पोती आदि।

९ संज्ञा और वर्तमानकालिक क्रिया मिलनेसे विशेषणात्मक समस्त-पद बनता है, जैसे—जग-सुहाता कपड़ा, जन-सुहाता भाषण (न), मन-भाता खाना, मुँह-बोलती मूरत आदि।

१०. दो वर्तमानकालिक क्रियाओंके मिलनेसे विशेषणसूचक समस्त पद बनता है, जैसे-आती-जाती माया या लक्ष्मी, आते-जाते आदमी, चलती-फिरती छाँव, ढलती-फिरती छाँव, आदि।

११ दिखाई पिलाई आदि रूपकी क्रियाओंके साथ कुछ विशेष संज्ञाओंके समस्त पद बनानेसे विशेष नेगों तथा पारिश्रमिकों (charges) का बोध होता है, जैसे—अनुवाद कराई (न) इंजेक्शन-लगाई (न) कान-छिदाई, घर-प्रवेश कराई, जूते-छुपाई, खाना खिलवाई, दरवाजा-रुकाई, पत्र-लिखाई, पारसल कराई (न), पैकेट बँधाई (न), बाल-कटाई, चिट्ठी पढ़ाई (न), माल-लदाई, मुँह दिखाई, शीशा-दिखाई, स्याही-उतराई, सम्पादन-कराई (न), सेहरा-बँधाई आदि।

किन्तु जग-हँसाई तथा लोग-हँसाई आदिमें किसी नेग या पारिश्रमिक-का भाव नहीं है।

१२. संज्ञाओंके साथ सामान्य धातुओंके मिलनेसे भाववाचक संज्ञा बनती है, जैसे—रपट-दान, नर-पिसनी, हेर फेर, सिर-फुटौवल आदि।

१३ दो धातुओंका समास होनेसे भाववाचक संज्ञा सामासिक पद

बनते है और ये द्वन्द्व समासके अन्तर्गत आते है, जैसे—उतार-चढाव, उछल-कूद, कतर-ब्योत, करनी-भरनी, छान-बीन, छीना-झपटी, जोड-तोड, टूट-फूट, डाँट-डपट, मार-काट, रोक-टोक, लूट-खसोट, हार-जीत आदि।

१४. संज्ञाके साथ धातुके बाद 'आऊ' प्रत्यय लगाकर कभी-कभी कर्तावाचक विशेषणसूचक समस्त पद बनाया जाता है, जैसे—काम-चलाऊ सरकार (न), पेट-भराऊ खाना, फिर-बसाऊ विभाग आदि।

१५ सज्ञाके साथ धातुके अन्तमे 'आऊ' प्रत्यय लगाकर कभी-कभी कर्मवाचक विशेषणसूचक समस्त पद बनाया जाता है, जैसे—रतन-जडाऊ हार आदि।

१६. संज्ञाके बाद धातुमें 'ऊ' प्रत्यय लगाकर कभी-कभी कर्ताबोधक समस्त पद बनाते हैं, जैसे—घर-उजाडू, पेट-पालू आदि।

१७. दो धातुओंके मेलसे समस्त पद बनाकर उसके अन्तमें 'ऊ' प्रत्यय लगानेसे ऊपर लिखा भाव पैदा होता है, जैसे—फाड-खाऊ, ले-भागू आदि।

कभी-कभी समासोमे वर्णविकार हो जाता है जिससे शब्द छोटा बन जाये और बोलनेमे आसानी हो जाये, जैसा कि इस परिच्छेदके आरम्भमे ही दिये हुए पनघट, पनवाडी तथा पनसेरी सामासिक पदोसे प्रकट है। पहले समासोमे वर्णलोप तथा वर्णविकारके इतने अधिक उदाहरण है, कि ये समास बनानेवालोको किसी अडचन, कठिनाई या झिझकका अनुभव नही होना चाहिए। यहाँ इसी प्रकारके और समास अधिक सख्यामे कुछ खोलकर दिये जाते है। इन उदाहरणोमें शब्द देकर कोष्ठकमे वर्ण-विकारके बादका रूप दिया गया है और फिर उदाहरण दिये गये है.

आगे (अग) अगला, अगवा, अगवानी, अगाऊ आदि।

ऊन (उन = एक कम) उनतालीस, उन्तीस, उनचास, उनसठ आदि।

'रानी (रन) रनवास ।

हाथ (हथ, हत), दुहत्ती, दुहत्ती पीटना, हत्ता, हथकडी, हथफेरी, हथियाना, हथेली आदि। हाथा-पाईमे वर्णका आगम और विकार विचित्र है ।

समासोमें सामासिक पुनरुक्त शब्दोका वर्णन भी ऊपर आ चुका है। पर सब पुनरुक्त शब्द सामासिक पद नही होते। उनको दोहराये या पुनरुक्त शब्द कह सकते है तथा ये यौगिक शब्दोका ही एक भेद है। इनमे सम्बन्ध-बोधक शब्दोका लोप नही होता तथा उनका विग्रह भी नही होता। ये शब्द भाषाके महत्त्वपूर्ण अग और गुण माने जाते है। इनसे भाषामें बल तथा भिन्न-भिन्न भाव पैदा होते है। कुछ पुनरुक्त शब्दोमे एक ही शब्दको दो तीन बार दुहराया जाता है जैसे—देश-देश, बोलते-बोलते, तथा जय-जय-जय। कुछ पुनरुक्त शब्दोमें एक शब्दके साथ कोई दूसरा समान सार्थक या निरर्थक शब्द होता है जैसे—अगल-बगल, अट-पटी, अनाप सनाप, अलग-थलग, आर-पार, गोल-मोल आदि। कुछ पुनरुक्त शब्दोमे पदार्थोकी असली या कल्पित ध्वनिको दो बार दे दिया जाता है, जैसे—कर-कर, चर-चर, झिलमिल आदि। कभी-कभी एक ही शब्दको दोहरानेपर बोलनेकी आसानीके लिए उनके बीचमे एकाध वर्णको जोड दिया जाता है, जैसे—हाथो-हाथ। पुनरुक्त शब्दोके बीचमे सयोजक चिह्न देकर लिखना चाहिए और प्रथम शब्दके बाद २ जैसे—धीरे २ न लिखना चाहिए, धीरे-धीरे ही उपयुक्त है।

सज्ञाओ, सर्वनामो, विशेपणो तथा क्रियाओकी पुनरुक्ति होती है। एक ही शब्दकी पुनरुक्तिसे या एक शब्दके साथ सानुप्रासिक शब्दके दोहराये जानेसे अतिशयता, आपसी सम्बन्ध, एक जाति भाव, अलगपना, ढग तथा विस्मय आदि प्रकट होते है।

समासो, सज्ञाओ, क्रियाओ और दुभापाई शब्दोके परिच्छेदोको ध्यान-पूर्वक देखनेसे नीचे लिखी बातें स्पष्ट हो जायँगी—

१ हिन्दीमें संस्कृत सामासिक पद खूब चलते है। कौन लेखक अपनी रचनाओंमे कितने सस्कृत सामासिक पदोका प्रयोग करता है, यह उसकी शिक्षा, शैली और रुचिपर निर्भर है। किसीको उससे अप्रसन्न नही होना चाहिए।

२ तद्भव शब्दोके सामासिक पद बहुत बडी सख्यामे है और भविष्यमे भी इनकी गिनती बढेगी ही।

३. विदेशी सामासिक शब्द भी हिन्दीमें मिलते है और ये हिन्दीकी पाचन-शक्तिको प्रकट करते है।

यद्यपि समासोमे आनेवाले शब्द एक ही भापाके होने चाहिए, किन्तु संकर समस्त पद प्रचलित हो जाना भी अस्वाभाविक नही है। शुद्धि-वादियोको उनपर नाक-भौं नही चढाना चाहिए। उनका स्वागत ही करना चाहिए।

४. सकर समस्त पद (हिन्दी-फारसी, हिन्दी-अँगरेजी, फारसी-अरबी, अँगरेजी-हिन्दी तथा विविध भापाओंके समस्त पद भी) हिन्दीकी शोभामें चारचाँद लगा रहे है। ये हिन्दीके बहुभाषित्व गुण तथा हिन्दीको विविध भापाओंके शब्दोसे समास बनाकर अपना भण्डार भरनेकी योग्यताको ही प्रमाणित करते है।

५ हिन्दी समासोमे वर्ण-विकार गुणके अतिरिक्त शब्दोको छुटिया (न) कर समास बनानेकी पूरी क्षमता है। शब्दोके छोटे रूप बनानेकी दृष्टिसे हिन्दीने संसारकी बडीसे बडी भाषा जैसे यूनानी लातीनी और अँगरेजीकी टक्कर ली है। हिन्दीका यह गुण वैज्ञानिक-पारिभाषिक शब्द बनानेमे बडा उपयोगी होगा।

६ हिन्दीमें पुनरुक्त शब्द बडी संख्यामें है। ये शब्द हिन्दीमें सजीवता और शक्ति पैदा करते है।

७ जब कोई शब्द छोटा होते-होते प्रत्ययका रूप धारण कर ले, तब किसी शब्दके साथ उस प्रत्ययको जोडनेसे जो नया शब्द बने उसे समास

नही मानना चाहिए, जैसे देवल, ससुराल आदि ।

८ मिलवाँ (blended) शब्दोको भी समास नही मानना चाहिए, यद्यपि यह समासका यानी शब्दोको मिलाकर छोटा करनेका अगला कदम है। इन मिलवाँ शब्दोको यौगिक शब्दोके समान ही प्रयोगमें लाना चाहिए। ऐसे शब्दोका न तो विग्रह ही आसानीसे किया जा सकता है और न उस शब्दके तत्त्व ही अलग-अलग किये जा सकते है। भला अँगोछा, दहेंडी (दही + हाँडी), भकसना तथा विसनौटी आदि शब्दोका असली रूप कितने आदमी जान सकेंगे, वह तो केवल अच्छे कोशोमें ही मिलेगा ।

द्विगु समास या गिनतीसूचक शब्द एक बहुत आवश्यक विषय होनेके कारण अगले परिच्छेदमें अलगसे दिये गये है ।

■

नवाँ परिच्छेद

संख्यावाचक या गिनती-सूचक शब्द

हिन्दीमे प्रचलित गिनती-सूचक शब्दोके भिन्न-भिन्न रूप और प्रत्ययो आदिकी सहायतासे बने अनेक नये-पुराने शब्द इस परिच्छेदमे दिये जा रहे हैं जिससे कि उस ढगके दूसरे नये शब्द बनानेमें न केवल आसानी हो हो, वरन् साथ-साथ यह भी मालूम हो जाये कि हिन्दीके लेखको तथा कवियोने इस क्षेत्रमे भी स्वतन्त्र रूपसे काफी बडी सख्यामे हर प्रकारके शब्द बनाये हैं।

हिन्दी गिनतीमे सख्यासूचक विदेशी शब्द नही मिलते पर हिन्दी सख्याओको विदेशी शब्दोसे पहले जोडकर सामासिक शब्द बनाकर हिन्दीके बहुभाषिता गुणको इस क्षेत्रमें भी बढावा मिला है जैसे तिमाही, छह-माही, दुराहा, तिराहा आदि।

सख्याओमे पूरी सख्याएँ, अधूरी सख्याएँ, क्रमवाचक सख्याएँ, तथा आवृत्तिसूचक सख्याएँ आदि शामिल है। यहाँ पहले पूरी सख्याएँ और फिर अधूरी सख्याओके शब्द दिये गये है। सस्कृतके पूर्ण सख्या-बोधक शब्द केवल तत्सम शब्दोमें आते हैं। यदि कुछ विदेशी सख्या-बोधक शब्द किसी रूपमे हिन्दीमे खूब प्रचलित हो गये है या वे हिन्दीमे रच-पचकर नये-नये शब्द बनानेमे उपयोगी सिद्ध हुए है, तो वे भी दे दिये गये है।

वास्तवमे हिन्दीके गिनती-सूचक शब्दोके वैज्ञानिक अध्ययनकी बडी आवश्यकता है।

हिन्दीके पूर्ण सख्या-सूचक शब्द एक, दो, तीन, चार, पाँच, छह,

सात, आठ, नौ तथा दस हैं। अब इन्हें क्रमश लिया जाता है।

'एक' से नये सामासिक शब्द, जैसे—एकतन्त्र शासन या राज (न) (unitary system of Government); स० प्रतिपदा, प्रा० पडिवआ और हिन्दीमें उसीके लिए परिवा, पडवा और एकम् जनता तथा ज्योतिषियोमें खूब प्रचलित है। पर यह एकम शायद मप्रत्ययान्त तद्धित ही है। एकसे अन्य सामासिक शब्द ये हैं एक-एक, एक-सा, एकाकी नाटक, एकान्त, एकान्तवाद (विपरीत प्रसिद्ध जैन पारिभाषिक शब्द अनेकान्तवाद) एकान्तवास, आदि। मुहावरोमे भी एक ही प्रयोग होता है, जैसे—एक अनार सौ बीमार, एक सो एक दो सो ग्यारह आदि।

अक (एकका सक्षिप्त रूप), जैसे—अकेला, अकेली, अकेलापन, अकेले-अकेले आदि।

इक समासो तथा व्युत्पत्तिमे एकका रूप इक हो जाता है। इससे बने कुछ शब्द ये है, जैसे इक्का (ताशका एक बूँदोका पत्ता, एक घोडेका पुराने ढगका ताँगा), इकट्ठा, इकट्ठा करना, इक्कीस, इकतरफा काररवाई (unilateral action), इकतरफा डिगरी, इकतारा, इकताल (गायन विद्यामे वह ताल जिसमें चोट बराबर अन्तरेपर पडे) इकतालीस, इकपेचा, इकरसा, इकलौता लडका, इकलौती बेटी, इकसठ, इकहत्तर, इकहरा, इकाई, इक्यावन, इकासी, इक्यानबे आदि।

एक + दससे ग्यारह होते है। इसके वर्ण परिवर्तनमें अर्थात् (इगारह, इग्यारह) ग्यारह शब्द बननेमें शताब्दियाँ लगी होगी। कुछ विद्वान् इसे एकादशका ही विवर्तन मानते हैं। पूर्वी, उत्तरी और पश्चिमी भारतीय भाषाओंमें इसके लिए जो शब्द है वे 'ग्यारह'-शब्द-निर्मितिपर कुछ ऐसा ही प्रकाश डालते है : जैसे काह (कश्मीरी), ग्यारां (पजाबी), यारहाँ (सिन्धी), अकरा (मराठी), अगियार (गुजराती), एगार (बाँग्ला तथा ओडिया), एघार (असमीया)। इसी ग्यारहसे फिर ग्यारस, ग्यारहवाँ, ग्यारहवी आदि शब्द बने हैं। स्पष्ट है कि ग्यारह शब्दपर अभी

भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे विचार होना चाहिए।

क्रमवाचक सख्यामे एकका कोई रूप नही, वरन् पहला (पहिला) चलता है। इससे बने शब्द पहल (भा० वा० स०, प्रयोग मै कभी पहल नही करता), पहली, पहले (क्रि० विशेषण, प्रयोग, पहले मारे, सो मीरी), पहिलौठा (जेठा बेटा) आदि।

दो इससे बने सामासिक शब्द। जैसे दोआबा, दोगला, दो टूक उत्तर, दोरस, दोराहा, दोलडा (एक मोटा कपडा), दोहर (दो तहका ओढनेका कपडा), दोहराना, दोहराई, दोहरी (विशेषण, जैसे दोहरी मार), दोहा आदि।

दु दोका सक्षिप्त रूप जैसे दुअन्नी, दुई, दुकेला, दुखना घर, दुखनी दुकान, दुगुन, दुगना, दुगुनाना, Double V (न) दुछत्ती, दुधारी, दुनाली बन्दूक, दुफसली, दुबारा, दुभाव, दुभापिया, दुभाषी (bilingual), दुरंगी (–चाल), दुरुखा, दुलत्ती, दुसूती (दो सूतका एक कपडा), दुहेजू आदि।

दू (दोका रूप), जैसे दूज, दूबे (दुबे) (द्विवेदोका रूप), दूसरा, दूसरी आदि।

ब हिन्दीमे दसके पश्चात् गिनतीमे दोके स्थानपर ब आता है। यह एक कटवाँ (clipped) शब्द है, और इसमें अश पूरे शब्दका अर्थ देता है। यह सस्कृत 'द्वौ' के व को काटकर फिर वका ब बना है। इस प्रकार द्वौका विभाजन होकर दो और ब बन गये पर दोनोका अर्थ एक ही रहा। एक ही बापके दो बेटे, हिन्दीमे चल रहे है, पर समझौतेके साथ। ब केवल दससे आगे गिनतीके समासोंमें आता है और दो दससे पहले और दूसरे समासोमे आता है। गुजरातमे पहुँचते-पहुँचते बका बे बन गया। वहाँ बे-आनी (दुअन्नी), बे-बापको (दो बापका) आदि अनेक शब्द वैसे ही बनते है।

इससे बने शब्द—बाराह, बारह पत्थर, बाहर (सीमा बाहर), बारह बानीका (अच्छा, स्वस्थ), बारहवाँ, बेन्सा (जैनोमें दो दिनके उपवासको कहते है।)

वाई यह व से भी विचित्र है। यह सस्कृत शब्द द्विसे वि वनकर प्राप्त हुआ है। यूनानी इसीको 'वाई' के रूपमे प्रयोग करते है और अव अँगरेज़ीमे यही दो के अर्थमे 'वाई' वन गया है जैसे—वाई नो कलर्स, वाइ-पेड (द्विपद) या वाई सिकिल, या वाई साइक्ल आदि।

तीन तीनसे कोई विशेप नये शब्द नही वनते, यो तीन लडी या तिलडी जैसे प्रयोग मिलते है। इसका प्रयोग कहावतोमे खूव हुआ है। यह सस्कृत त्रि के बहुवचन रूप 'त्रीणि' का ही विगडा रूप लगता है यद्यपि हिन्दीमे तीन (तीनि) का बहुवचन तीनो होता है।

ति तीनका सक्षिप्त रूप है। त्रि सस्कृत तत्सम शब्दोमे आता है, पर हिन्दीमें यह काम ति से लिया जाता है। इसमें यह विशेपता है, कि 'ति' न केवल तद्भव शब्दोमें ही आता है, वरन् देशज तथा विदेशी शब्दोके पहले भी प्रयुक्त होता है, जैसे तिकडी, (तिगडी भी), तिकडिया, तिकोन, तिकोना (trıangular), तिकोनी, तिकोनिया, तिखना, तिखूँटा, तिग्गी (ताशका पत्ता), तिगुना, तिगुनाना (न) (treble), तिदली (न) (= त्रिदलीय, trıhartıte) आदि।

ते तेइया (तिजारी भी, तीसरे दिन आनेवाला ज्वर), तेथन (तिथनी), तेला (तीन दिनका उपवास) आदि।

दससे आगे तीनके समाससे जो हिन्दी सख्याएँ बनती है, उनके वर्णोंकी अदला-वदलीको वताना यहाँ कठिन है, पर वे शब्द यहाँ दे दिये जाते है, जैसे तेरह, तेरहवाँ, तेईस, तैंतीस, तेतालीस, तिरपन, तिरसठ, तिहत्तर, तिरासी, तिरानवे।

तीज यह शब्द स० तृतीयका सक्षिप्त और य को ज में वदलकर वना लगता है और तीसरेके अर्थमें प्रयुक्त होता है। इससे वने शब्द भी हैं जैसे तिजिया (वह जिसका तीसरा विवाह हो), तिजहरिया (अपराह्ण) और तिजवाँसा (गर्भके तीसरे पक्षमें होनेवाला उत्सव) आदि।

चार चारदीवारी, चारपाई, चारपाया आदि।

चौं : चारके संक्षिप्त रूपमें आता है (चतुरसे चउ और फिर उससे चौ)। इसके प्रयोगसे नये शब्द और समस्त पद बनते हैं, जैसे, चौअन्नी (चवन्नी भी), चौकन्ना (चार कानवाला, सावधान), चौकोर (संज्ञा तथा विशेषण), चौखना (चारखनका मकान), चौतारा, चौथ (चतुर्थी, कौथके ढर्रेपर बना है), चौपाई (चौपई भी), चौपाया (पशु), चौपाल, चौला (चार दिनका उपवास), चौहद्दी (चारो सीमाएँ) आदि।

पंच (सं० पंच और हिन्दी पाँचका संक्षिप्त रूप)—पचोतरा (उगाहीमें नम्बरदारका पाँच प्रतिशत भाग), पचकोन, समपचकोन (सम पंचभुज भी) (regular pentagon), (न) पचकोना, पचकोनिया, पचगुना, पचघरा, पचमेल (पाँच मेलकी मिठाई), पचरंगा, पचलडी (हार), पचहरा, पचासा (पचास वस्तुओंका समुदाय), पचपन, पचहत्तर, पचानवे आदि।

पन पाली और प्राकृतके 'पण्ण' का हिन्दी रूप, जैसे पनसेरी आदि। पन्द्रह, पैंतीस, पैंतालीस, पैंसठ आदिमें वर्ण-विपर्यय होनेमें बहुत समय लगा होगा। इनका अध्ययन होना चाहिए।

छ . सं० षड् और हिन्दी छहका विवर्तित रूप, जैसे छंगा, छक्का, छक्की, छठ (तिथि), छठा, छठी (बाल जन्मसे छठे दिनका संस्कार, मुहावरा छठीका दूध याद आना), छत्तीस, छदाम, छप्पन, छब्बीस आदि। छियालीस, छियानठ और छिहत्तर आदिमें छ को छि हो गया है।

संस्कृत षोडश और प्राकृत सोलस, सोरहसे विवर्तित छ + दसका, सोलह (बोलीमें सोला) होता है। इससे सोलहवाँ तथा सोहलवी बनते हैं। सोरह, सोरही (सोलही भी—सोलह कौडियोंका खेल, सोलह अँटियो या पूलोंका बोझ) भी यहाँ कवियोंने प्रयुक्त किये हैं।

सात . सातें (सप्तमी), सातवाँ, सातवी आदि।

सत : (सातका संक्षिप्त रूप), सतकोन, सतकोनिया, सतनजा,

सतमासा (सतवाँसा भी), सतमासी, सतरगा आदि ।

आठ स० अष्ट, मा० प्रा० अट्ठसे हिन्दी रूप—आठें (तिथि), आठवाँ, आठवी आदि ।

अठ (आठका सक्षिप्त रूप), डिंगलमे भी यही प्रचलित है । अठकोन, अठकोना (ctagonal), अठकोनी, अठन्नी आदि । अडतीस, अडतालीस और अडसठमें अठ के ठ को ड हो गया है ।

नौ नौगजा, नौखना, नौघरा (नौ घरोका कूवा या गली), नौमासा, नौलखा, नौलडा आदि ।

नह (फा०) नहला (ताशका पत्ता) दससे आगे गिनतीमें नौ के स्थानपर उन लगता है । उन (ऊन) कम, यहाँ एक कम । उन उपसर्ग लगकर गिनती बनती है, जैसे उन्नीस, (एक कम बीस), उन्तीस, उन्तालीस, उन्चास, उनसठ, उनहत्तर, उनासी, निन्यानवे (पजाबीमे उनानवे) आदि ।

दस (तत्सम-दश) दसवाँ, दसवी, दस्सा (वे पुरानी हिन्दू जातियाँ जिनमे कभी करेवा हुआ था । करेवा विधवा विवाहका पुराना रूप था । शुद्ध जातियाँ बीसा कहलाती है), दसूठन (बाल जन्मसे दसवें दिनका सस्कार आदि ।

दह (फा०) स० दश । इससे बने भी कुछ शब्द हिन्दीमे चलते हैं, जैसे दहला ताशका पत्ता, (मुहावरा—नहलेपर दहला लगाना), दहाम (पहाडेमें बोलते हैं), दहाई आदि । हिन्दीमें दससे आगे बीस तककी गिनतीमें दसके द का र और स का ह बन जाता है। जैसे ग्यारह, बारह, तेरह, चौदह, पन्द्रह, सोरह (सोलह), सतरह, अठारह आदि । कुछ सख्यावाचक शब्दोंसे विशेप शब्द भी बनते है, जैसे बतीसी (दाँतोकी), पचपनिया (न) (पचपन वर्षकी आयुके कारण जो कर्मचारी अवकाश प्राप्त करने (रिटायर होने) को हो, साठा (साठ वर्षका पुरुष, कहावत, साठा सो पाठा), साठी चावल (साठ दिनमे पकनेके कारण), सठियाना

(बुढापेके कारण बुद्धि बिगडना) आदि ।

सौ सौ से, सौवाँ बनता है। सैकडा और सैकडो भी बनते हैं। इन रूपोकी निर्माण-प्रक्रिया भाषा-विज्ञान-द्वारा अभी निर्णीत नही हुई। हिन्दीमे शतकके स्थानपर 'सतसई' चलता है, जैसे बिहारी सतसई और शती और शताब्दी भी (न) ।

हिन्दीके अपूर्णांक या भिन्नवाचक शब्द और उनके रूप तथा उनसे बने साधारण तथा सामासिक शब्द बडे रोचक है। अपूर्णांकसूचक शब्द ये है . चौथाई, पाव, आधा, पौना, सवाया, डेढ, ढाई (साढे दो नही), साढे तीन, हूँठा (होठा), साढे चार, (ढौंचा), साढे पाँच (पहुँचा), साढे छह (खोचा), खौंचा, साढे सात, सतोचा आदि ।

इनमें-से वहुत-से रूप महाजनी गणितमें प्रचलित है, और पाठशालाओं-में विद्यार्थियोको ढौंचा तकके पहाडे याद करने पडते है। कुछ रूप मागधी-में और कुछ रूप मैथिलीमे प्रचलित है। पौने और साढे शब्द कभी अकेले प्रयुक्त नही होते, पर पारिभाषिक शब्दावली या मुहावरोमें इनका प्रयोग अकेले भी हो जाता है, जैसे औने-पौनेमें सौदा बेच डालना। साढे सत्यानाश एक अद्भुत प्रयोग है। भाववाचक सज्ञाको भी आधेसे वढा दिया करते है "सत्यानाश नही, साढे सत्यानाश सही।" सवा अकेला आता है। तीन और तीनसे ऊपरकी सख्याओमे आधेसे अधिकता दिखाने-के लिए साढे लगाया जाता है, जैसा कि ऊपर लिखा गया है। यह साढे सस्कृत सार्धका तद्भव लगता है।

अपूर्णाकवाचक शब्द माप-तोल बोधक शब्दोंके साथ भी प्रयुक्त होते है, जैसे पाव गज, आध सेर, सवा कोस, डेढ मील, ढाई वजे आदि ।

नीचे कुछ अपूर्णाकवाचक शब्दोसे वने सामासिक और प्रत्ययान्त शब्द दिये जाते है

पाव · पावली (चवन्नी, कभी-कभी चवन्नीके लिए तिरस्कारवाचकके रूपमें भी प्रयुक्त होता है यह शब्द) ।

पौ सामासिक या व्युत्पन्न शब्दोमें पावका रूप पौ बन जाता है, जैसे—पौसेरा, पौवा (पाव सेर दूध या अन्य द्रव पदार्थ, जैसे तेल आदिका मापक पात्र या बोतल और शीशी आदि)।

अध आधाके ही रूप 'अध' तथा 'अद' है, जैसे—अधकचरा, अधन्ना अधपई, अधपका, अद्धा (तेल या मदिरा आदिकी आधी बोतलके मापकी शीशी), अधेला (आधा पैसा), अधेली (अठन्नी) बोलते है। बोलीमे अ का लोप करके धेला, धेली भी बोलते है। साढ़ेसाती या साढसाती ज्योतिषियोकी बोलीमे साढे सात वर्षके बुरे (शनि) ग्रहको कहते है।

ढाई ढैया १ ज्योतिषियोकी भाषामे ढाई वर्षका बुरा (शनि) ग्रह, २ गुडकी ढाई सेरकी भेली, ३ ढाई सेरके तौलका बाँट आदि। अब मीट्रिक तौलमें किलोग्राम आदि वज़न प्रचलित हो जानेपर यह शब्दप्रयोग बाहर हो जायेगा, पर ज्योतिषियोंके यहाँ चलेगा ही।

अँगरेज़ी और उर्दूमे गिनतीसूचक शब्दोके सक्षिप्त रूपो, जैसे इक, दु, ति आदिको उपसर्ग या अर्द्ध उपसर्ग मानते है, पर सस्कृत तथा हिन्दीमें इनको शब्द ही मानते है और इनसे द्विगु समास होता है।

समुदायके अर्थमे हिन्दीमे कुछ सज्ञाएँ भी प्रचलित है, जैसे—जोडा, जोडी (दो, पर पाँच कपडोका समुदाय भी जोडा कहलाता है, इसे अर्थ-विस्तार कहा जा सकता है), गण्डा (चार, चार कौडोका गण्डा होता था), पजा (पाँच), दर्जन (अ०) (बारह), कोडी (री) (Score) बीसा, बीसी (बीस), बतीसी (बत्तीस, बत्तीस दाँतोका समूह), चालीसा (चालीस), सैकडा (सौ), ग्रुस (बारह दर्जन), साठी (साठ दिन, जैसे साठी चावल), साठा (साठ वर्षका पुरुष) आदि। सख्याओसे हिन्दीमे क्रियाएँ भी बनी है, जैसे—दुहराना, सठियाना आदि।

कभी-कभी बोल-चालकी भाषामें कुछ सख्याएँ खास-खास अर्थोंमे चल पडती है। दूसरे शब्दोके समान वे भी बोल-चालमे अधिक प्रचलित होकर

साहित्यिक भाषामें स्थान पा लेती है। ऐसे संख्यावाचक शब्दोंका इतिहास भी पूरे रूपसे हमारे सामने नहीं आ पाता। आजकी बोल-चालके कुछ प्रसिद्ध शब्द तथा समस्त पद देखकर उनको आरम्भ करनेवालोंकी बुद्धिकी सराहना किये बिना नहीं रहा जा सकता। नम्बर दस, दस नम्बरिया (संक्षिप्त रूप नम्बरी) पुलिसकी भाषामें बदमाश तथा अपराधीके लिए नियत है। 'चार-सौ-बीस' का अर्थ है बहुत बड़ा धोखेबाज और चालाक आदमी। यह बहुव्रीहि समास है। वास्तवमें यह भारतीय दण्ड-विधानकी उस धाराका क्रमांक है जो धोखेबाजी या धोखा देनेके अपराधका दण्ड निर्धारित करती है, इसीसे धोखेबाजोंको चार-सौ-बीसका नाम दे दिया गया है। इसी प्रकार अँगरेजी संख्या फिफ्टी-फिफ्टी (पचास-पचास, आधम-आध, ५०%) रिश्वत या नफा बाँट लेनेवालोंकी गुप्त भाषामें चालू है।

संख्याओंसे मुहावरे भी खूब बने हैं, जैसे तेरह-तीन होना, तीनमें न तेरहमें, नौ दो ग्यारह होना, उन्नीस बीसका फर्क आदि। गिनतीकी संख्याओंसे बने बहुत-से मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ भारतके भिन्न-भिन्न उद्योग-धन्धोंकी भी देन हैं, जैसे सौ चोट सुनारकी एक चोट लुहारकी, लेना एक न देने दो, नौ नकद न तेरह उधार, आदि।

गिनतीकी संख्याओंसे बने हुए बहुत-से शब्द भी मिलते हैं, जैसे [illegible] आदि। मुसलमानोंमें ७८६ (सात सौ छियासी)की संख्या बड़ी मान्य है, इसका आशय [illegible] बिस्मिल्ला-अर्-रहमान-अर्-रहीम (मैं ईश्वरके सामने प्रारम्भ करता हूँ जो बड़ा दयालु और कृपावान् है—कुरानकी एक आयत) होता है। भारतके [illegible] ऐसे [illegible] जिन संख्याओंसे शब्दोंका संकेत है, तुलनात्मक अध्ययन होना चाहिए।

शब्दों तथा वर्णोंके स्थान संख्यावाची शब्द आते हैं। संस्कृतमें इन्हें सांकेतिक अंक कहते हैं। अरबी, फारसी तथा उर्दूमें भी यह विधि [illegible] आ रही है। अरबीमें इसे [illegible] ([illegible]) कहते हैं।

संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिन्दीके पुराने कवि प्राय. इस विधिसे अपने ग्रन्थोका रचनाकाल दिया करते थे। संस्कृतमे इस विधिसे और क्या काम लेते थे, यह खोजका विषय है। हिन्दीमे इस शैलीका अब प्रयोग नहीके बराबर है।

अरबीमें पहले इस विधिसे ज्योतिष विद्यामे शब्दोके द्वारा गिनती सूचित करते थे। फिर भूगोलमे इस विधिसे देशान्तर रेखाओ और अक्षाश रेखाओंको प्रकट करने लगे थे। इसके बाद कवि तथा इतिहास-लेखक इस ढगसे ऐतिहासिक घटनाओ जैसे जन्म, मौत, विवाह, पुत्रजन्म, राजगद्दी-पर बैठने तथा काव्य-रचना आदिका समय (शेरो, छन्दो) मे देने लगे।

इस विधिके दो लाभ है। एक तो सन्-सवत् आदिको निश्चित तथा असन्दिग्ध रूपसे देना है, क्योकि अकोके मिट जाने या उनमे भूल हो जाने-का डर है। दूसरे इस विधिसे गुप्तता रखी जा सकती है। इसको गिनतीकी गुप्त भाषा (Code language) कह सकते है। सरकारी कामो, सैनिक सन्देशो तथा बैकोके गुप्त तारोमे इसी विधिसे काम लिया जा सकता है।

यहाँ सस्कृत विधिका परिचय देनेके लिए प० नेमिचन्द जैन न्याय-ज्योतिषतीर्थके एक लेख 'सस्कृतके साकेतिक अक'[1] से कुछ उदाहरण साभार दिये जा रहे है। ये और इनके पर्याय निर्दिष्ट सख्याओके लिए प्रयुक्त होते है।

शून्य गगन, ख, अभ्र, व्योमन्, वियत, अनन्त, विष्णुपद, पुष्कर, आदि।

एक निशापति, पृथ्वी, द्विजराज, क्षमा, सोम, रूप, कू० भू० अब्ज, विधु, इला, उर्वी, प्रभव आदि।

दो युग्म, यम, अश्विन, लोचन, द्वि, (द्वय भी) कर, अश्वि, कृति, पक्ष, यमल, विभव, दृग, उभौ, युगल, मिथुन, आदि।

---

१ जैन सिद्धान्त भास्कर, जून सन् १९४०।

तीन . गुण, क्रम, अग्नि, राम, त्रि, (त्रय भी) विश्व, हरनेत्र, पुर, लोक, रत्न, भुवन, आदि ।

चार चतुर्, सागर, युग, वेद, कृत, गति, कषाय आदि ।

पाँच · इन्द्रिय, विषय, वाण, अक्ष, भूत, मरुत्, अर्थ, प्रजापति, शस्त्र, व्रत, विषय, तन्तुमायक आदि ।

छह रस, ऋतु, अंग, षट्, अरि, अंगिरस्, तर्क, जीव लेश्या, द्रव्य, काय, स्वर, कुमार-वदन, पद, रिपु, द्विप, द्वेपण, दुर्हृद्, सपत्नारि आदि ।

सात . भय, अचल, मुनि, गिरि, पन्नग, द्वीप, धातु, व्यसन, तत्त्व, सप्त, अश्व, गोत्र, चक्रवाल, त्रिकूट, नरक, श्रीमुख आदि ।

आठ अष्टन्, नाग, गज, वसु, हय, तनु, कर्मन्, अनीक, स्पर्श आदि ।

नौ नव पदार्थ, केशव, नारायण, निधि, गह, दुर्ग, गो, अंक, खग, खेचर, रन्ध्र, युवा आदि ।

दश · आशा, दिक्, ककुभ्, धाता, काष्ठा, हरित्, खेन्दु, खभू, आदि जो शून्य और एकके वाचक शब्दोंके समाहारसे वनते है ।

ग्यारह . एकादश, रुद्र, शिव, ईश्वर, ईश, क्षितिभू, भीम, चन्द्राब्ज, [illegible], आदि एक और एकके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप आदि ।

बारह द्वादश, सूर्य, चक्रवर्तिन्, कामदेव, इन, नयनभू, नयनेन्दु, आदि एक और दोके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप ।

तेरह त्रयोदश, समाधिन्, गुणभू, रामभू, गुणाब्ज, एक और तीनके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप आदि ।

चौदह · इन्द्र, मनु, चतुर्दशन्, रेभ, आदि एक और चारके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप ।

पन्द्रह पंचदशन्, तिथि [illegible], [illegible], आदि एक और पाँचके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप ।

सोलह : षोडश, नृप, [illegible] आदि एक और छहके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप ।

सत्रह सप्तदश और एक सातके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

अठारह अष्टादश, धृति, जट, दक, दह, नागाब्ज, व्यालेन्दु, आदि एक और आठके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

उन्नीस पार्थिव, अकेन्दु, खगेन्दु, अकभू, तथा झक, धक, झट, घट, झप, धप, वक, वप आदि एक और नौके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

बीस विंशति तथा अभ्रलोचन, व्योमपक्ष, खपक्ष, अभ्रकृति, अर, नख, व्यय, अरव, इठ, उठ, ओफ, नफ, नठ, आदि दो तथा शून्यके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

इक्कीस एकविंशति, स्वर्ग, कठ, टख, पख, पठ, कफ, स्वर, नाक, द्यो, दिव, तथा इन्दुनेत्र, चन्द्रनयन, सर्वजित्, आदि दो और एकके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

बाईस द्वाविंशति, खठ, फख, रठ, ठख, खर, तथा द्वियम, यमलनेत्र आदि दो और तीनके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

तेईस त्रयोविंशति, गठ, डख, डर, गर, बर, बठ, बख, गफ, तथा दो और तीनके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

चौबीस जिन, सिद्ध, अवतार, घठ, ढर, भख, घफ, तथा दो और चारके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

पच्चीस पचविंशति शख, शठ, शर तथा दो और पाँचके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

छब्बीस षड्विंशति, चर, तठ, वख, पफ, रसनेत्र, अगकृति, खरपक्ष, ऋतुयम आदि दो और छहके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

सताईस सप्तविंशति, नक्षत्र, ऋक्ष, छठ, सख, घर, अश्वनेत्र, मुनिकृति, भयपक्ष, आदि दो और सातके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

अट्ठाईस अष्टाविंशति, सिन्धुरनेत्र, इभनेत्र, आदि दो और आठके वाचक शब्दोके सामासिक रूप ।

उनतीस एकोनत्रिंशत्, झर, झठ, ढफ तथा गोयम, अकपक्ष, आदि

दो और नौके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप।

तीस त्रिंशत्, तथा खरदहन एवं व्योमगण आदि तीन और शून्यके वाचक शब्दोंका सामासिक रूप।

इकतीस . एकत्रिंशत्, टग, कड, पड, कब, कल, टल, तथा रूपरत्न, एकदहन आदि तीन और एकके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप।

बत्तीस द्वात्रिंशत्, रदन, दशन, दन्त, यमगुण, युगलगुण, आदि तीन और दोके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप।

तैंतीस त्रयस्त्रिंशत्, अमर, निर्जर, देव, सुर, त्रिलोक, गड, बड, चग, लब, वल, तथा रामगुण आदि तीन और तीनके वाचक शब्दोंके सामासिक रूप।

इन संख्यावाचक सांकेतिक शब्दोंका संग्रह गणित-सार-संग्रह, सिद्धान्त-शिरोमणि-(गणिताध्याय), ग्रहलाघव, सिद्धान्त तत्त्व-विवेक, लीलावती, बीजगणित, विश्वलोचन, अमरकोष और गोलप्रकाश—इन ग्रन्थोंमें उपलब्ध है। विशेषता यह है कि अजैन ग्रन्थोंमें तत्त्व शब्दसे २५ लिया गया है तो गणितसार-संग्रहमें ७।

संस्कृतमें अक्षरों तथा शब्दोंसे संख्या बनानेकी दूसरी विधि यह है—

कटपयपुरस्थवर्णैः नवनवपञ्चाष्टकल्पितैः क्रमशः ।
स्वरनञ्शून्यं संख्यामात्रोपरिमाक्षरं त्याज्यम् ॥

अर्थात्, क्रमशः क से झ तक और ट से ध तक इन नौ-नौ अक्षरोंको एकादि संख्या बोधक जानना चाहिए। इसी प्रकार प से म तक पाँच और य से ह तक आठ अक्षरोंकी संख्या भी। स्वर, ञ न ये सब शून्यके द्योतक हैं।

संस्कृतमें सांकेतिक शब्द तथा अक्षरोंसे बननेवाले अंकोंको लिखनेकी विधि 'अंकानां वामतो गतिः' इस सूत्रसे प्रकट है, अर्थात् [illegible] [illegible] [illegible] शब्द या वर्णोंसे, [illegible] अंक [illegible] [illegible] [illegible] लिखा जाता है आदि। यदि किसी शब्द या अक्षरसे बननेवाली संख्या [illegible]

सख्यासे अधिक या कम हो, तो उचित सकेतोके (न्यून, ऊन, अधिक आदिके साथ उतनी सख्या शब्दो या वर्णोके द्वारा कम कर दी या बढा दी जाती है।

सस्कृतके साकेतिक अकोको सूचित करनेवाले कुछ छन्द भी उदाहरणार्थ यहाँ प्रस्तुत है—

प० जिनदास अपने ग्रन्थ 'होली रेणुका चरित्र' का रचना-काल जेठ सुदी दशमी, वार शुक्रवार, सवत् १६०८ नीचे लिखे श्लोकके द्वारा सूचित करते हैं[1]—

> वसुखकायशीतांशुमिते (१६०८) संवत्सरे तथा।
> ज्येष्ठमासे सिते पक्षे दशम्या शुक्रवासरे ॥ श्लो० ६१ ॥

ग्रन्थके छन्दोकी सख्यामें कभी वृद्धिकी गुजाइश न रहे, इसलिए लेखक ग्रन्थकी श्लोक सख्याका प्रमाण भी साकेतिक अकोमे छन्दके द्वारा ही देते थे।

दूसरी विधि, जिसमें शब्दोके स्थानपर वर्णोंसे सख्या दी गयी हो, भी प्राचीन साहित्यमें प्राय प्रयुक्त हुई है। सस्कृतकी यह विधि अरबी विधिसे कुछ भिन्न होते हुए भी बहुत मिलती है।

अरबीमें एकसे लेकर एक हज़ार तककी सख्याके लिए वर्ण नियत है, जिनका ब्यौरा नीचे लिखे अनुसार है—

१ अवजद (अलिफ १, बे २, जीम ३, दाल ४),
२ हव्वज़ (हे ५, वाव ६, ज़े ७),
३. हती (हे ८, तोये ९, ई १०),
४. कलमन (काफ २०, लाम ३०, मीम ४०, नून ५०),
५ सअफस (सीन ६०, ऐन ७०, फे ८०, सुवाद ९०),

---

१. जैन ग्रन्थ प्रशस्ति सग्रह प्रथम भाग, सम्पादक प० जुगलकिशोर मुख्तार, पृ० ६६।

६. करशत (काफ १००, रे २००, शीन ३००, ते ४००),

७ मख़ज (से ५००, खे ६००, ज़ाल ७००),

८ ज़ज़ग (ज़ुवाद ८००, ज़ोये ९००, गैन १०००)।

फारसी वर्णमाला और उर्दू वर्णमाला अरबी वर्णमालासे भिन्न है, इसलिए फ़ारसी तथा उर्दूवालोने अरबीसे भिन्न ध्वनिवाले अपने वर्णोकी सख्या भी निश्चित कर ली है, अर्थात् फारसी और हिन्दीके अन्य वर्णोकी सख्याएँ इनके समान-ध्वनिवाले वर्णोके बराबर होती है, जैसे प की सख्या बे की सख्याके बराबर, च की सख्या जीमकी संख्याके बराबर, डालकी सख्या दालकी सख्याके बराबर, गाफकी काफकी सख्याके बराबर, ट की रे की सख्याके बराबर, और टे की ते की सख्याके बराबर ।

जिस एक शब्द या शब्दोके वर्णोकी सख्याओसे सन् या सवत् निकलता है, उस शब्द या उन शब्दोको तारीखका माद्दा अर्थात् सवत्का मूलतत्त्व कहते है। जब पूरे सवत्-मूल तत्त्वसे सन-सवत् निकल जाये, तो उसे पूर्ण संवत् (तारीख-ए कामिल) कहते हैं और इसे पूरा या कुल सवत् कहते है। कभी ऐसा भी होता है कि सवत् मूलतत्त्वकी सख्या चाही संख्यासे बढ जाती है, तो ऐसी हालतमे उचित सकेतके साथ उतनी संख्या कम कर देते है, इसे घटानेकी क्रिया (अमल-ए-तखरजा) कहते हैं। पर यदि सख्या कम हो जाये तो इसी प्रकार उचित सकेतके साथ उतनी संख्या बढा देते है, इसे जोड-क्रिया (अमल-ए तदखला) कहते हैं।

यहाँ दो-चार ऐसे उर्दू शेर दिये जाते है, जिनसे कुछ घटनाओके सन् निकलते है। सवत् मूल तत्त्वको उद्धरण-चिह्नो (" ") मे दे दिया गया है—

१ प्रेमचन्दजीके मृत्यु-सन्के सम्बन्धमे मुन्शी इकबाल वर्मा सहर हितगामीका शेर है :[1]

[1]. ज़माना, कानपुर प्रेमचन्द अंक से।

ख़ामोश है फसाना निगारी की आज सहर
"रुख़सत हुआ फ़साना निगारी का हम कलाम।"

२ प्रसिद्ध कवि नासिख़ने मीर घसीटाकी मौतका सन् (सन् हिजरी १२३४) कितने आसान तथा हास्यपूर्ण शेरमे कहा है

जब मीर घसीटा मर गये हाय
हर एक ने अपने मुँह को पीटा
नासिख़ ने कही यह उसकी तारीख़
"अफ़सोस कि मौत ने घसीटा॥"

३ मिरजा गालिब तो उर्दूके माने हुए चोटीके कवि थे। उन्होने मिरजा जाफरके विवाहका सन् (१८५४ ई०) अपने एक शेरमे केवल एक शब्द 'महजूज़' (दोनो ज वास्तवमे जोय है) डालकर ही दे दिया। पूरा चरण नही कहा, एक शब्दसे ही सन् दे दिया! महान् कवियोकी वडाई शब्दोके ऊपर इसी अधिकार और शब्दोके इसी चुनावसे ही तो है। शेर इस प्रकार है—

खुजस्ता अंजमन-ए-तूए मिरजा जाफर
कि जिनके देखने से हुआ है सब का जी महज़ूज
हुई है ऐसे ही फरखदा साल में ग़ालिब।
न क्यो हो माद्दए साल ईस्वी "महज़ूज"[1] (१८५४ ई०)

साकेतिक अकोकी प्रणालीको हिन्दीमे तथा भारतकी दूसरी भाषाओमे, यदि उनमें न हो तो, उर्दूके समान फिरसे ज़ारी करना चाहिए। आवश्यकतानुसार इसमे उचित सुधार किया जा सकता है, पर वह सुधार साहित्य-जगत्मे सबके द्वारा मान्य होना चाहिए।

●

१, महजूज=प्रसन्न।

चुने या बनाये। आज हिन्दी तथा दूसरी आधुनिक भारतीय भाषाओके विद्वानोके सामने यह भी एक समस्या है कि किस प्रकार वे लाखो विदेशी पारिभाषिक, अर्द्ध-पारिभाषिक तथा सामान्य शब्दोका अनुवाद अपनी भाषामें करें।

इन दोनो प्रकारसे उधार लिये शब्दोके स्रोत या भण्डार ये है (अ) भारतकी प्राचीन भाषाएँ, जैसे सस्कृत, प्राकृत, पाली तथा अपभ्रश हैं। (आ) आधुनिक भारतीय भाषाएँ, जिनमें आधुनिक आर्य-भाषाएँ तथा द्राविड भाषाएँ सम्मिलित है। (इ) जनपदीय बोलियोके शब्द। (ई) जातीय शब्द। (उ) विदेशी शब्दोके हिन्दीकरणमे उपलब्ध शब्द–निधि।

आगे इन्ही विधियो एव स्रोतोपर कुछ विचार एव सुझाव दिये जा रहे हैं। विदेशी भाषाओके शब्दो तथा ऋण अनूदित शब्दोका विवेचन यथा-स्थान प्रस्तुत है।

(अ) भारतकी प्राचीन भाषाओंके ऋण शब्द

सस्कृत, प्राकृत, पाली तथा अपभ्रश भारतकी प्राचीन भाषाएँ है। हिन्दू, जैन तथा बौद्ध साहित्य इन चारोमे ही है। सस्कृतका स्थान इनमें सबसे ऊँचा है, उसका क्षेत्र विशाल है और साहित्य भी विपुल तथा महत्त्वपूर्ण है। संस्कृत परम्परा भी अबतक चली आ रही है। यही कारण है कि हिन्दी लेखक शब्दके अभावमें नया शब्द बनानेका रचनात्मक प्रयास करनेकी बजाय सस्कृतसे तद्भव शब्द बनाये बिना भी, झटसे सस्कृत तत्सम शब्द प्रयोग कर देते हैं और वह प्राय खप भी जाता है। इससे हिन्दी शब्द-रचनाका मार्ग सीमित तथा बन्द होता है, जो कदापि वाछनीय नही है। अधिकाश सस्कृतके अप्रचलित शब्दोवाली हिन्दी और जनता-द्वारा बोली और समझी जानेवाली हिन्दीमें खाई बनते देखकर आजके वरेण्य लेखक क्लिष्ट सस्कृतनिष्ठ हिन्दी नही लिखते। फिर भी हर-एककी

अपनी-अपनी शैली है, और कुछ हिन्दी लेखकोकी हिन्दीमे उतना ही अन्तर है, जितना किसी मौलवीकी अरबी-फारसीमिश्रित उर्दू तथा किसी पजाबी आर्यसमाजी विद्वान्की संस्कृत तथा हिन्दीमिश्रित उर्दूमें। जो भी हो, हिन्दीमें सस्कृतके शब्द आना अनिवार्य बन गया है, और सस्कृत ही हिन्दी-के ऋण शब्दोका सबसे बडा स्रोत बन गयी है। वैसे पाली तथा प्राकृत शब्द भी हिन्दीमें मिलेंगे। जातक शब्द जिला रोहतककी बोलीमें खूब प्रचलित है और इससे स्त्रीलिंग जातकी बनाते हैं। क को ग बनाकर जातग और जातगी भी बोलते हैं।

हमे यहाँ एक बातकी ओर फिर एक बार ध्यान दिलाना अधिक उचित तथा आवश्यक मालूम होता है। संस्कृत शब्दोसे तद्भव शब्द बनाकर फिर हिन्दी उपसर्गों तथा प्रत्ययोकी सहायतासे उनसे नये-नये शब्द बनाना हिन्दीके लिए अधिक लाभदायक तथा उसे बढ़ानेवाला होगा। जब आजसे तीन सौ वर्ष पहलेके हिन्दी लेखक तथा कवि ऐसे शब्द आसानीसे बना सकते थे, जैसे लिख धातुसे लिखना क्रिया, लिखाई, लिखावट, लिखेरा आदि। तब ऐसा कोई कारण दिखाई नही देता कि आजके विद्वान् लेखक, कवि तथा शब्द-रचयिता यह काम न कर सकें। 'जहाँ चाह वहाँ राह' वाली कहावतके अनुसार यदि हिन्दी लेखकोकी ऐसी तीव्र इच्छा हो तो यह काम विशेष कठिन नही है। हिन्दी शब्द-रचनामें सबसे बडी सेवा इस युगमे यही हो सकती है कि सस्कृत शब्दोसे नये तद्भव शब्द बनाये जाये।

(आ) आधुनिक भारतीय भाषाओंके शब्द

आधुनिक भारतीय भाषाओको दो भागोमें—१ आधुनिक आर्य भाषाएँ और २. द्राविड भाषाएँ—बाँट सकते है। आधुनिक आर्य भाषाओंमे हिन्दीके अतिरिक्त उर्दू, गुजराती, पजाबी, बँगला, मराठी आदि भाषाएँ है और द्राविड भाषाओमे समूचे दक्षिणकी भाषाएँ है, अर्थात्

तमिल, मलयालम, कन्नड और तेलुगु ।

इन भाषाओंसे भी हिन्दीमें शब्द आते रहते हैं और इनके उदाहरण विस्तारसे इकट्ठे किये जाने चाहिए। भविष्यमें जब इन भाषाओंके हिन्दी-ज्ञाता लेखक हिन्दीमें लिखेंगे, तब वे हिन्दीके ठीक शब्द न मिलनेपर स्वतन्त्रतासे अपनी भाषाके शब्दोंका प्रयोग भी अपनी हिन्दीमें कर देंगे। इस प्रकार भविष्यमें इन भाषाओंके शब्दोंकी संख्या हिन्दीमें बहुत बढ़ेगी। हिन्दी पारिभाषिक शब्द बनानेमें इन भाषाओंमें प्रचलित पारिभाषिक शब्दोंको अपनाना या उधार लेना कहीं अधिक अच्छा होगा। इन भाषाओं-से शब्द उधार लेते समय इस बातका ध्यान रखना चाहिए, कि वे हिन्दीकी प्रकृतिके अनुकूल हों और उसमें आसानीसे रच-पच सकें।

द्राविड भाषाओंका प्रभाव हिन्दीपर ही नहीं संस्कृतपर भी काफी है। संस्कृतके प्रसिद्ध विद्वान् श्री टी० बरोने अपनी पुस्तक 'दि संस्कृत लैंग्वेज'के सातवें परिच्छेदमें संस्कृतपर अनार्य भाषाओंके प्रभावका विस्तार-से वर्णन किया है और इन भाषाओंके ऐसे सैकडों शब्दोंकी सूची दी है, जो संस्कृतमें प्रचलित हैं और संस्कृतके माध्यमसे हिन्दीमें आ गये हैं जैसे कि घोडा (घोटक), मार्जार, गज, कुंजर, मातंग, कदली (केला), अगर, कज्जल, काक (कव्वा), कुटि, कुण्ड, कुदाल, कोण, खल, चन्दन, नीर, बल, मसि तथा माल आदि। हिन्दीमें काजलसे कजरौटी, कोणसे कोना, कोनिया, आदि शब्द बनाये गये हैं।

शिक्षा मन्त्रालय-द्वारा प्रकाशित पारिभाषिक शब्दसंग्रहमें दिये बहुत-से शब्द पहले भारतकी दूसरी भाषाओंमें ही प्रचलित हुए थे किन्तु अब हिन्दीमें भी अपनाये जा रहे हैं, जैसे—

Legislature	विधानांग	(कन्नड)
Executive	कार्यांग	(कन्नड)
Judiciary	न्यायांग	(कन्नड)
Brackets	बन्धनी	(बंगला)

४ चरी ज्वार आदिके हरे पौधे जो पशुओको चराये जायें (Fodder)।

५ चौपाल गांवकी पचायती बैठक (Community centre)।

६ डँगवारा खेती करनेके लिए किसानो द्वारा आपसमे एक-दो दिनके लिए बैठ माँग लेनेका रिवाज़ ।

७ दोहनी दोहनिया दूध निकालनेका बरतन ।

८ पसरचराना प्रात काल गाय-भैसोको जगलमे चरानेके लिए ले जाना । यह शब्द बिहारमे भी प्रचलित है ।

८ विलँगनी घरमें कपडा टाँगनेकी डोरी ।

१० मुकलावा गौना, द्विरागमन । इसीसे एक समस्त शब्द 'मुकलावली बहू' बना ।

हमें बिहारमें स्थान तथा, घोडेके थानके ढर्रेपर 'विथान' (cow-shed) शब्द श्री रामवृक्ष बेनीपुरीने बताया । इससे उस स्थानसे अभिप्राय है, जहाँ गाय आदि बाँधते है । वर्ण-विकारसे नया शब्द बन गया और दूसरे स्थान आदि शब्दोसे सन्दिग्धता-रहित भी है ।

शब्दोके अतिरिक्त जनपदीय बोलियोमे बहुत-से मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ भी मिलेंगी । 'घरके दूर पडौसी नेडे' इस कहावतमे नेडे शब्दका अर्थ 'पास' समीप है जो ठेठ बोगरू शब्द है । इसमें 'दूर' फारसी शब्द है । लोकोक्ति कितनी सार्थक तथा अनुभवपूर्ण है । इन्हे इकट्ठा करनेकी महान् आवश्यकता है ।

शिक्षा, पत्रो, सिनेमा तथा रेडियोके (देहाती प्रोग्राम छोडकर) साथ-साथ इन बोलियोके शब्द प्रयोगमे कम आयेंगे । इसलिए अच्छा यह है कि इन जनपदीय शब्दोकी रक्षाके लिए पहले ही योजनापूर्वक कोई ठोस कदम उठाया जाये । हर्पकी बात है कि हमारे कुछ विद्वान् जनपदीय शब्दोको हिन्दीमे प्रयुक्त करनेका बडा समर्थन कर रहे हैं । आचलिक कथा-साहित्यमें इन शब्दोका प्रयोग पर्याप्त हो रहा है ।

(ई) जातीय शब्द

छोटेसे छोटे मानव-समूह या जातिकी अपनी बोली होती है। कुटुम्ब, दफ्तर, कारखाने, सामूहिक भोजनालय अपने-अपने अद्भुत शब्द, मुहावरे, अर्थ भेद, अर्थ-छाया, सकेत और सक्षिप्त रूप विकसित कर लेते है, जो उनमे विशेष रूपसे प्रचलित होते है, पर वे शब्द बाहरवाले व्यक्तिकी समझसे बाहर होते है। इसी प्रकार बडे-बडे समूह या जातियाँ, जिनका समान काम या व्यवसाय, कारबार, पेशा, दस्तकारी, विज्ञान तथा शिल्प-विज्ञान होता है और पत्रकारिता, फौजी सेवाओ, धर्म-स्थानो, साहित्यिक गोष्ठियो और खेलोमे अपनी-अपनी विशिष्ट शब्दावलियाँ होती है, जो उनकी बातचीतमे उनके विषयोको प्रतिबिम्बित करती है। ये शब्दावलियाँ उस पेशे या व्यवसायोंके चलानेवालोके लिए आसानी पैदा करती है और बाहरके व्यक्तियोमे एक भेद या खाई पैदा करती है। बाहरके आदमी उनकी बोलीको नही समझ सकते है। जातीय बोली और चोरोकी चोर-भाषाका भी यही हाल है। क्या आपने कभी दलालो या ठगो, चोरो आदिकी बोली सुनी है? उनकी बातको वे ही समझते है, दूसरे नही। ज्योतिषियोकी बोली ज्योतिषी, डॉक्टरोकी भाषा डॉक्टर, वकीलोकी भाषा वकील, और वैज्ञानिकोकी भाषा वैज्ञानिक ही समझते है। प्रचलित भाषासे इनकी बोलीमे कुछ अन्तर अवश्य होता है। अँगरेज लेखक स्टीफन उल्मैनने ठीक ही लिखा है कि फिर भी भाषामे अलग-अलग भेद करना असम्भव है। हर-एक व्यक्ति एकसे अधिक परस्पर सम्बन्धित समुदायोका सदस्य रहता है और एक समुदायसे दूसरे समुदायमे जाते समय वह अपने साथ पहले समुदाय या व्यवसायके विशेष शब्द और मुहावरे ले जाता है। इस प्रकार विशेष पारिभाषिक शब्दावली धीरे-धीरे [illegible] बोलचाल तक पहुँच जाती है और सर्वसाधारण शब्द-भण्डारमे [illegible] विशिष्ट अर्थ [illegible] वस्तुएँ जिन्हे वे सदा [illegible]

तिक भण्डारमे रच-पच जाते हैं। इस प्रकारसे भाषामे आन्तरिक शब्द उधार लेनेका काम (Vertically), विभिन्नस्तरीय तथा समस्तरीय (Horizontally) रूपसे हर दिशामे एक समुदायसे दूसरे समुदायमे चलता रहता है। शिष्ट भाषाके शब्द बोलियोंमें तथा व्यावसायिक शब्द भाषामें पहुँचते रहते हैं।"[1] इस प्रकारसे भाषाएँ भिन्न-भिन्न व्यवसायो, समुदाय-विशेषो तथा खेलो आदिके शब्द उधार लेती रहती है। शब्दोकी ऐसी उधार प्रक्रियाको जातीय शब्द ऋण लेना (उधारना) (Social Borrowing) कहते है। ऐसे शब्दो, मुहावरो तथा लोकोक्तियोकी व्यवसायो तथा दस्तकारियोंमें कमी नही है, जैसे तेलीका बैल, पासग, मीन-मेख निकालना, तार कुतार होना, पत्तेबाजी करना, दाँवपेच चलाना, मात देना, पचायत करना, दाईसे पेट छिपाना, ढील देना (पतगबाज़ीका शब्द), नहलेपर दहला लगाना, तीन काने, पौ बारा होना, कसर रह गयी, आटेमे नमक समान, पर कैंच करना, कठपुतली और सौन-कुसौन होना आदि।

इस प्रकारके व्यावसायिक या जातीय शब्दोको सग्रह करनेका प्रशसनीय काम मौलवी जफरुल रहमान साहब देहलवीने किया, जिन्होने उर्दूमे फरहग 'इस्तलाहात-ए-पेशावरान'के आठ भागोम भारतके भिन्न भिन्न पेशोके कोई बीस हज़ार शब्द इकट्ठे किये और अंजमन तरक्की-ए-उर्दू दिल्लीने प्रकाशित किया। इनमे सग्रहीत शब्द भाषाविज्ञान तथा पारिभाषिक शब्दावलीकी दृष्टिसे अत्यन्त उपयोगी, महत्त्वपूर्ण तथा रोचक है।

इन जातीय शब्दो, मुहावरो तथा लोकोक्तियोसे भाषाको सम्पन्न करना हर-एक साहित्य प्रेमीका परम कर्तव्य है। साहित्यमे इनका प्रयोग ही इनकी सबसे अच्छी तथा स्थायी रक्षा है।

■

१. Words and their use by Stephen Ulman, पृ० ६४

वर्णन है। यहाँ इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि विदेशी भाषाओंके शब्दोंका प्रयोग न तो हिन्दीके लिए कलंक है और न हमारी पराधीनता-का सूचक है।

डॉ० धीरेन्द्र वर्माने लिखा है कि "सम्पर्कमें आनेपर भी आवश्यक विदेशी शब्दोंको अछूत-सा मानकर न अपनाना अस्वाभाविक है। समय आनेपर भी यह कभी सम्भव नहीं हो सकता है। अनावश्यक विदेशी शब्दोंका प्रयोग करना दूसरी अति है। उत्तम मार्ग यही है कि अपनी भाषाके ध्वनि-समूहके आधारपर विदेशी शब्दोंके रूपमें परिवर्तन करके उन्हें आवश्यकतानुसार सदा मिलाते रहना चाहिए। इस प्रकार शुद्धि करनेके उपरान्त लिए गये विदेशी शब्द जीवित भाषाओंके शब्द-भण्डारको बढ़ानेमें सहायक होते हैं।"

उदाहरणके लिए बैंक व्यवसाय, बीमा व्यवसाय सिनेमाका आविष्कार मुद्रण कला, रेल, मोटर, हवाई जहाज, बिजलीकी खोज है। और अब अणुशक्ति (Atomic Energy) तथा महाकाशकी खोज तथा उनके प्रयोग अपनी-अपनी शब्दावलियाँ लाये हैं। कौन-सी भाषा इन शब्दोको अपनेमे बाहर रख सकती है ?

दो या अधिक देशोके सास्कृतिक सम्पर्कके फलस्वरूप साहित्य, ललित कलाओ, नयी-पुरानी विचारधाराओ तथा दर्शनो आदिका आदान-प्रदान होता रहता है। इससे हर-एक भाषाको दूसरी भाषाओसे शब्द लेने पडते हैं। भाषाओका सम्पर्क, देशोका भौगोलिक सम्पर्क, एक ही प्रदेशमे भाषाओके सह-अस्तित्व, धार्मिक मेलो तथा उत्सवोके कारण होनेवाले मेल मिलाप आदिसे होता है। वर्तमान युगमें यातायातके साधन इतने सस्ते तथा तेज़ गतिके हैं, कि सारी दुनिया एक बन गयी है। समाचार-पत्रो, सिनेमा, रेडियो, टेलेविज़न तथा बेतारके तार आदिके द्वारा यह सम्पर्क और भी बढ गया है। अन्तरराष्ट्रीय सस्थाओका जाल तो ऐसा फैला है कि उनके कारण हर-एक भाषामे विदेशी शब्दोकी बाढ-सी आ रही है। इन सब कारणोसे कोई भाषा विदेशी शब्दोसे अछूती नही रह सकती। कभी-कभी यह सम्पर्क सीधा नही होता, किसी दूसरी भाषाके माध्यमसे होता है। उदाहरणके लिए हिन्दीमे पुर्तगाली शब्द मराठी तथा बँगलाके माध्यमसे, और यूनानी, लैटिन, फ्रेंच, इटेलियन शब्द अँगरेज़ीके माध्यमसे आये। इनके अतिरिक्त, जिन वस्तुओ, क्रियाओ, भावो तथा सस्थाओके नामोका एक भाषामे अभाव है, उस भाषाके बोलनेवालोको विवश होकर उन नामोके सूचक शब्दोको बाहरसे लेना पडता है, चाहे मूल शब्द लें, चाहे उनके अनुवाद लें।

उक्त कारणोसे हिन्दीमे भी विदेशी शब्द आये हैं, आ रहे हैं और भविष्यमे आयेंगे। हिन्दीमे विदेशी शब्दोके अशको समझानेके लिए 'हिन्दी-की बनावट या हिन्दी शब्द-समूह नामक परिच्छेदमे ऐतिहासिक कारणोका

वर्णन है। यहाँ इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि विदेशी भाषाओंके शब्दोका प्रयोग न तो हिन्दीके लिए कलक है और न हमारी पराधीनता-का सूचक है।

डॉ० धीरेन्द्र वर्माने लिखा है कि "सम्पर्कमे आनेपर भी आवश्यक विदेशी शब्दोको अछूत-सा मानकर न अपनाना अस्वाभाविक है। यत्न करनेपर भी यह कभी सम्भव नही हो सका है। अनावश्यक विदेशी शब्दोका प्रयोग करना दूसरी अति है। मध्यम मार्ग यही है कि अपनी भाषाके ध्वनि-समूहके आधारपर विदेशी शब्दोके रूपमे परिवर्तन करके उन्हें आवश्यकतानुसार सदा मिलाते रहना चाहिए। इस प्रकार शुद्धि करनेके उपरान्त लिये गये विदेशी शब्द जीवित भाषाओंके शब्द-भण्डारको बढानेमे सहायक होते हैं।[1]"

मीर इन्शाउल्लाखाँ 'इन्शा' मुगल सम्राट् शाहआलमके दरबारी कवियोमे थे। उन्होने 'दरिया ए-लताफत' नामक उर्दू भाषा-सम्बन्धी एक बडा और प्रामाणिक ग्रन्थ सन १८०२ ई० मे लिखा था। आजसे डेढ सौ वर्ष पहले उर्दूमे आनेवाले विदेशी शब्दोके बारेमें मीर इन्शा साहबने जो मत दिया था, वह इतना समय बीतनेपर भी उर्दू और हिन्दीके लिए सोलह आने ठीक लगता है। वे लिखते हैं . 'जानना चाहिए कि जो लफ्ज़ (शब्द) उर्दूमे आया, वह उर्दू हो गया। खा (चाहे) वह लफ्ज़ अरबी हो या फारसी, तुरकी हो या सरियानी, पजाबी हो या पूर्बी, असलकी रूसे गलत हो या सही, वह लफ्ज़ उर्दूका लफ्ज़ है। अगर असलके मुआ-फिक (अनुरूप) मुस्तामल (प्रयुक्त) है, तो भी सही और अगर असलके ख़िलाफ है, तो भी सही। इसकी सेहत (शुद्धि) और गलती इसके उर्दूमें रिवाज पकडनेपर मुनहसर (निर्भर) है, क्योकि जो चीज़ उर्दूके खिलाफ है, वह गलत है, जो असलमे सही हो, और जो उर्दूके मुआफिक है वही

---

१ हिन्दी भाषाका इतिहास, पृष्ठ ७४।

सही, खा असलमे सही न भी हो।'[1]

वास्तवमें अनावश्यक रूपसे अति करके विदेशी शब्दोको हिन्दीमें भरनेका कोई भी विचारशील हिन्दीवाला समर्थन नही कर सकता। अन्यथा विदेशी शब्दोको हिन्दी-द्वारा अपनाये जानेका मार्ग सदा खुला रहा है। यहाँ नमूनेके तौरपर हिन्दीमे आनेवाले कुछ विदेशी शब्द देश और भाषावार दिये गये है। अरबी, फारसी और अँगरेज़ीके शब्द तो थोडे-से ही हैं, बाकी भाषाओ या देशोके शब्द यथासम्भव अधिकसे अधिक दिये गये है।

अरबी शब्द

अरबी अरब देशोकी भाषा है। यह सेमिटिक परिवारकी जीवित, समृद्ध, साहित्यिक तथा जनभाषा है। अरब देशोके मुसलमानोके अतिरिक्त वहाँके ईसाई आदि भी अरबीमें ही अपने साहित्यकी रचना करते है। मुसलमानोका धर्म-ग्रन्थ कुरान इसी भाषामें है, इसलिए जहाँ-जहाँ इस्लाम धर्म गया, वहाँ अरबी भी पहुँच गयी। अरब लोग साहित्य, विज्ञान, दर्शन तथा व्यापारमें बहुत बढे-चढे थे। इसलिए अरबी शब्द ससारकी बहुत-सी भाषाओमें मिलते है। अँगरेजीमें अलकली, अलजबरा, अलकोहल, एडमिरल (अमीर उल-बहरसे) और साइफर आदि अनेक अरबी शब्द चालू है। हिन्दीमे भी इस्लामी पारिभाषिक शब्दोके साथ-साथ शासन, हिकमत (चिकित्सा), न्याय तथा समाज-व्यवस्था-सम्बन्धी अरबी शब्द भी काफी आ गये है। प्राचीन हिन्दीके कवियो तथा सन्तो (चन्द वरदाई, तुलसी, सूर) आदिकी कृतियोमे फारसी शब्दोके साथ-साथ बहुत-से अरबी शब्द भी मिलते हैं। भारतमें शायद ही ऐसी कोई भाषा होगी, जिसमें अरबी शब्दोने स्थान न पाया हो। कुछ बहुप्रचलित अरबी शब्द नीचे दिये जाते है—

---

१ दरिया-ए-लताफ़त, पृष्ठ ३५४।

अमीर, आम, उम्र, ऐब, ऐबी, ऐनक, (ऐन = आँख), ऐश, औजार, औलाद, औरत, कतई, कत्ल, कद, कदम, कनात, कफन, कब्ज़ा, करामात, कर्ज़, कलई, कलम, कसाई, काजी, कानून, काफिला, कैदी, कैरट (मूल किरात), (सोना तोलनेका एक वज़न), कौम, कुरान, ख़त, खज़ाना, खतरा, खदक, खबर, खमीर, खुफिया, खाली, गदर, गज़ब, गबन, गुलाम, गैर, जवाब, जवाहर, जहाज़, जामा-मसजिद, जासूस, जिल्द, जेब, जेब-कतरा, जौहरी, तकदीर, तकलीफ, तकाज़ा, तमीज़, तमाशा, तरफ, तरह, तवेला, तहसील, तहसीलदार, तिजारत, दावत, दिमाग, दुनिया, दौरा, नकद, नकल, नक्कारा, नक्शा, नखरा, नज़र, नजला, नमाज़, फकीर, फिज़ूल, वर्क, फसल, फसील, फौज, फव्वारा, बुखार, बज़ाज़, मकान, मक्कार, मतलब, मीनार, मुख्तार, मुफ्त मुफ्तखोर, मुरब्बा, मुलम्मा, रद्दी, (रद्दीकी टोकरी), रहीम, रिश्वत, रोज़ा, वकील, वजीर, हलवा, हलवाई, हुक्का आदि।

अँगरेज़ी शब्द

हिन्दीमे प्रचलित विदेशी शब्दोमें फारसी शब्दोके बाद अँगरेजी शब्दोकी सख्या बहुत बडी है। पहले ये शब्द अँगरेज़ोके सम्पर्कसे और फिर अँगरेज़ोके राजके कारण हिन्दीमें ही नही, बल्कि भारतकी सभी आधुनिक भाषाओमें रच-पच गये। इतना ही नही, सैकडो अँगरेजी शब्द गाँव-गाँव तक पहुँच गये। भारतके स्वतन्त्र होनेके बाद भी अँगरेजी शब्द, विशेषकर पारिभाषिक शब्द यहाँ बराबर आ रहे है। बहुत-से अँगरेज़ी शब्दोमे काफी वर्ण-विकार भी हुआ है, जैसे अरदली, कनस्तर, दरजन, तौलिया, पलस्तर, बम, बोतल, मेम तथा लालटेन आदि। अँगरेज़ी शब्दोके साथ साथ दूसरी युरॅपीय भाषाओके शब्द भी यहाँ आ गये हैं, जिनको मूलत अँगरेज़ीका ही मान लिया जाता है, यहाँतक कि हिन्दी कोशोमें भी यह गलती की गयी है। आशा है हिन्दीके नये कोशकार यह गलती नही दोहरायेंगे।

यहाँ कुछ युरॅपीय भाषाओके शब्दोको अलग-अलग देनेका प्रयत्न किया गया है। इनसे हिन्दीकी बहुभाषिता प्रकट होगी। अँगरेज़ी शब्दोके साथ हिन्दी शब्दोके मेलसे दोगले शब्द भी काफी बन गये है, जैसे अग्नबोट, बकसुआ आदि, जो इस बातका प्रमाण है, कि उन्हे हिन्दीका अग मान लिया गया है और शब्द-रचनामे काममे लाया गया है। हमारे कुछ अति उत्साही हिन्दी-प्रेमी इन अँगरेज़ी शब्दोको गुलामीकी निशानी मानकर इनके बहिष्कार या इनके हिन्दी अनुवादोकी बातें और प्रयत्न करते है, जिसमें सफलता तो कम होगी, पर हिन्दीवालोका मज़ाक अवश्य उडेगा। ये शब्द इतने अधिक है, कि इन्हें यहाँ देना असम्भव है। नमूनेके तौरपर यहाँ कुछ ऐसे अँगरेजी शब्द दिये जा रहे है जिनका पूर्ण हिन्दीकरण हो चुका है—

अक्तूबर, अगस्त, अर्दली, अपील, अफसर, अस्पताल, अलपका, ऑपरेशन, ऑर्डर, इच, इंजीनियर, (इ)स्कूल, (इ)स्पिरिट, (इ)स्टूल, (इ)स्टीमर, एजेण्ट एजेन्सी, ऐक्टर, ओवरकोट, ओवरसियर, औन्स, कलक्टर, कमिश्नर, कम्पनी, कैलेण्डर, कफ, कटपोस, करनैल, कमेटी, कम्पू, कान्फ्रेंस, कॉपी, कॉलर, काक, कारड, कॉंग्रेस, कॉमा, कॉलेज (कालिज), क्वार्टर, क्लिप, क्रिकिट, कूपन, कुनैन, कैच आदि 'क्रिकेट' के शब्द कोट, कोरम, कोचवान, गाटर, गार्ड, गिलास, गिलट, गैटिस, गैस, ग्रामोफोन, चाक, चाकलेट, चिमनी, चिक, चिट, चेन, जण्टलमैन, जम्पर, जज, जरनैल, जनवरी, जाकट, जून, जुलाई, जेल, जेलर, ट्रक, टन, टब, टंकी, ट्राम, टिकिट, टैक्स, टैम्प्रेचर, टिफन, टीम, टीन, ट्यूब, टायर, टैनिस, टेलीफोन, ट्रेन, तारकोल, ट्रक, डबल, डबल, डॉक्टर, ड्रामा, डायरी, डेयरी, डिप्टी, डिगरी, ड्राइवर, डिपारच, डेस्क, डयूटी, डैमनकट, तारकोल, थर्मामीटर, थर्मस, बोतल, वेटर, दरजन, दराज, दिसम्बर, नर्स, नकटाई, नम्बर, नवम्बर, नेकर, निब, नोट, नोटिस, नोटबुक, पतलून, पलटन, पलस्टर, पंचर, पप, परमिट, पॉकेट, पारसल, पॉलिश, पार्टी, पास, प्लाट, पेंसिल, प्लेट, प्लेट-

फारम, पैट्रोल, पिन, पिपरमण्ट, प्लग, पुलटिस, पुलिस, पेटीकोट, प्रेस, प्रेजीडण्ट, पाइप, पोलो, पोस्टकार्ड, पाउण्ड, पाउडर, फरमा, फलालेन, फ्रेम, फरवरी, फरलाग, फिनैल, फिटन, फ्राक, फीस, फुटबाल, फुटा, फुलबूट, फेल, फैशन, फोटो, फोटू, फोटोग्राफ, बक, बम, बराण्डी, बरामदा, बटन, बकस, बैरक, बालिस्टर, बिरजिस, बैंच, बुरूश, बूट, बैरग, बाइस्कोप, बिस्कुट, बैट, बैरा, बोतल, बोर्ड, बोर्डिंगहाउस, बाइकाट, बजट, मशीन, मजिस्ट्रेट, मनीआर्डर, मई, मफलर, मशीनगन, मनेजर, माचिस, मास्टर, मारका, मिस, मिनट, मिसमरेजियम, मर्सराइज, मील, मिशनरी, मिक्सचर, मेम्बर, मोटर, म्युनिस्पैलिटी, रगरूट, रबड, रसीद, रपट, रन, राशन, रिजिस्ट्री, रिवाल्वर, रिकार्ड, रूल, रेल, राइफिल, लम्प, लम्बर, लवण्डर, लाटरी, लाटसाहब, लालटेन, लेवल, लैम, लैमनचूस, लैमनेड, वारनिश, वास्कट, वायल, वारण्ट, वायलिन, बलटियर, वाइसराय, वी पी, वैसलीन, समन, साजन, सरज, सारजण्ट, सन्तरी, सरकस, सिगरेट, सिमण्ट, सितम्बर, सिगल, स्लीपर, स्लेट, सूटर, सूट, सूटकेस, सेट, सेफ्टीपिन, सेकिण्ड, सोडावाटर, हाकी, हाईकोर्ट, हारमोनियम, हिट, हुक, हैलो, हेडमास्टर, हैट, होलडर, होस्टल, होमियोपैथी आदि।

इसी प्रकार अफ्रीकी शब्द (गुरिल्ला, बैजो[1]—नीग्रो लोगोका बाजा), आयरिश और स्काच शब्द (ह्विस्की Water of Life . जीवन-जल) ऑस्ट्रेलियाई शब्द (कगारू यूकैलिप्टस आदि) एव इतालवी भाषाके शब्द अँगरेज़ीके माध्यमसे यहाँ आये है। इनमे कुछ शब्द फौजी है तो कुछ चित्रकला आदिसे सम्बन्धित है, जैसे, अलारम, इन्फ्लुएजा, करनैल, गजट, डेस्क, पेस्टल बस्ट, बालकनी, मलेरिया (मैल एयरया यानी बुरी वायु, आरम्भमे मलेरियासम्बन्धी अपर्याप्त खोज तथा गलत धारणाके कारण यह नाम पड गया, जो अब भी चालू है), मॉडल, रेजिमण्ट,

---

१ Romance of Words, पृ० ११८।

वायला, स्केच, स्टुडियो आदि। **जर्मनी शब्द**—ग्रुस बारह दर्जन, जर्मनी भाषामें १२० वस्तुओंके लिए आता था), डालर[१] नाजी, हाल्ट आदिके बारेमे भी यही सच है।

चीनी शब्द—चाय, पटाखा (पुर्तगाली फोगेट Foguete) इसीके माध्यमसे भारत आया और भारत तथा एशियाकी भाषाओंमें चल पडा इसे अनुकृति-मूलक (Onomatopoetic) शब्द मानते हैं। लीची, (चीनी लीचू), लोकाट, तूफान (चीनी-ताई-फूसे) तूफान अरबीके माध्यमसे हिन्दीमे आयी है[२]। तूफानी दौरा इसीसे बना है।

जापानी शब्द—जुजुत्सू, मिकाडो, रिक्शा[3] आदि। साइकल-रिक्शा और ऑटो-रिक्शा इसी रिक्शासे बने है, जो सकर शब्द है और हिन्दीमें भी चल निकले है। शहरोमें और गावोमें भो जनता इन्हें खूब बोलती है।

डच शब्द—ड्रिल, पम्प, फरलो, स्काउट आदि।

तिब्बती शब्द—लामा आदि।

तुर्की शब्द—भारतमे आनेवाले गज़नी, गौर, गुलाम और मुगल बादशाहोकी मातृ-भाषा मध्य एशियाकी तुर्की भाषा थी। तुर्की तब एक बोली (Dialect) थी, समृद्ध साहित्यिक भाषा न थी। न उसमें साहित्य था, न ज्ञान-विज्ञानकी पुस्तकें। इसलिए गुलाम वश तथा मुगल बादशाहोको फारसीको भी अपनाना पडा। इस प्रकार प्रत्यक्ष सम्पर्कके कारण बहुत-से तुर्की शब्द हिन्दीमे रच-पच गये, जैसे आका (मालिक), उज़बक उर्दू, कलगी, काबू, कुली, कुर्क, कैंची, कोरमा, ख़ातून, ख़ान, ग़लीचा,

---

१ शब्द-साधना, पृ० २८२।

२ Romance of Words, पृ० ४०।

३ जापानी शब्द 'जिन रिक्शा' है, जिसका अर्थ 'आदमीके द्वारा खंची जानेवाली गाड़ी है। डॉ० रघुवीरने इसका भी अनुवाद 'नरयान' किया है। पर अब तो इसमें साइकूल या मोटर लग गये हैं। और हम उन्हें भी रिक्शा ही कहते हैं।

चकमक, चाकू, जुर्राब, तमगा, तगार, तुरूक, तोप, दरोगा, बावरची, बहादुर (रायबहादुर), बारूद, बीबी, बेग, बेगम, बुकचा, बुलाक, मुच-लका, लाश, सौगात आदि। तुर्की प्रत्यय 'ची'से बीसियो शब्द जैसे मशालची, खज़ानची, गोलची, तोपची, मिडलची आदि बनते है।

पेरू शब्द—अल्पका (एक प्रकारका कपडा) आदि।

पुर्तगाली शब्द—हिन्दीमे पुर्तगाली शब्द मराठी तथा बगला आदिके माध्यमसे आये है। दक्षिणी भाषाओमे पुर्तगाली शब्द सहस्रोकी सख्यामे है। पुर्तगाल निवासी युरॅपसे भारत आनेवालोमे सर्वप्रथम थे। भारत-युरॅपका समस्त व्यापार इन्हीके हाथमे था। और पुर्तगीज़ पादरियो-द्वारा ही यहाँ सर्वप्रथम ईसाई धर्मका प्रचार हुआ। सतरहवी शताब्दीमें पुर्त-गाली लोग यहाँ जम चुके थे और जब अँगरेज़ लोग यहाँ आये तबतक इण्डो पुर्तगोज़ बोली ही युरॅपीय व्यापारियो तथा भारतीयोके बीच बात-चीतको माध्यम थी। महारानी एलिजाबेथका दूत सर टॉमस रोजव सम्राट् जहाँगीरके दरबारमं पेश हुआ, तो उसे एक ऐसे दुभाषियेकी आव-श्यकता हुई जो पुर्तगाली जानता हो। एशियाकी भाषाओपर, विशेषत. आधुनिक भारतीय भाषाओपर, पुर्तगाली शब्दोके प्रभावका ब्योरा जाननेके लिए एन्थनी जेवियर सोरस लिखित 'Influence of Portuguese Vocables in Asiatic Languages' प्रसिद्ध पुस्तक देखनी चाहिए। हिन्दीमें स्वीकृत और प्रचलित कुछ पुर्तगाली शब्द ये है—

अचार, ऑल्फ़ोन्सो (आमकी एक जाति जिसे बम्बईमें हापुस कहते है), अनन्नास, अल्मारी, आया, आलपीन, अलकतरा (तारकोल), इस्पात, इस्कूल, इस्त्री, कमरा, कमीज़, कप्तान, काज, कम्पास, कम्पू, कारतूस, काफी, काजू, क्रिस्तान, किरच, गमला, गारद, गिरजा, गोदाम, गोभी, चाबी, तम्बाकू, तम्बूर, तिजोरी, तौलिया, नीलाम, पगार, परात, परेक, पाउ (रोटी), पादरी, पिस्तौल, पीपा, फर्मा, फीता, फालतू, बर्गा, बपतिस्मा, बालटी, बरमा, बिस्कुट, बोतल, बोताम, बम्बा, मस्तैल,

मिस्त्री, मेज़, पशु, रतल (एक तोल), सावुन, संगतरा, सागू, साया (पेटीकोट) आदि । फिरगी शब्द भी पहले-पहल पुर्तगालियोके लिए ही यहाँ चलता था । फिर यह शब्द फ्रान्सीसियो और अँगरेज़ोके लिए भी प्रयुक्त होने लगा । अँगरेज़ लोग इसे अपमानसूचक समझते थे । वादमे यह शब्द सभी युरॅपवासियोके लिए आने लगा ।[1]

फ्रान्सीसी शब्द—फ्रान्सीसी शब्द अधिकाशमें अँगरेज़ीके माध्यमसे हिन्दीमें आये है, क्योकि उसमे फ्रान्सीसी शब्द वडी सख्यामें है । हिन्दीकी अपेक्षा दक्षिणी भाषाओमे फ्रान्सीसी शब्दोकी सख्या वहुत अधिक है। कारण, पॉण्डिचेरीमे अभी कुछ पहले तक यही राजभाषा थी । कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते है इजन, इजनीयर, कर्फ्यू, कान्स्टेबल, कारटून, गन, जज, जुरी, जाकिट, टेनिस, निकोटीन, पुलिस, पैम्फलट, पेन्सिल, बिगुल, बूचर (बूचडखाना सकर शब्द है), मीटर (एक माप), मेयर आदि ।

फ़ारसी शब्द—मुसलमानोके शासनकालमे फारसी यहाँकी राजभाषा तथा मुसलमानोकी सास्कृतिक भाषाके पदपर आसीन रही । राज्याश्रय प्राप्त करनेके लिए, शाही दरबारसे पत्र-व्यवहार तथा कार-व्यवहार करनेके लिए फारसीका ज्ञान बहुत आवश्यक था । भारतमें स्थान-स्थानपर तव मकतबो और मदरसोमे मौलवियो-द्वारा फारसी पढायी जाने लगी । फारसी कविता, काव्यो तथा साहित्यका अध्ययन हिन्दू-मुसलमानोमे एक समान होता था । वे इसमे रस लेते थे । यहाँतक कि वे फारसीमे रचना भी करते थे । फल यह हुआ कि हज़ारो फारसी शब्द हिन्दीमें[2] ही नही वरन् भारतकी सभी प्रान्तीय भाषाओमे रल-मिल गये । इन शब्दोका प्रयोग केवल सरकारी कागजोमें ही नही होता था, वरन् साहित्य तथा जनताकी दैनिक बोलीमें भी वराबर प्रयोग होता था । मराठीमें हज़ारो फारसी शब्द है । और

---

१ Indian Words in English, पृ० १३ ।

२ श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी लिखित 'हिन्दीपर फारसीका प्रभाव' देखिए ।

फारसीका मराठीपर गहरा प्रभाव पडा है।[1] सुदूर दक्षिणकी मलयालम, तेलुगु, तमिल तथा कन्नड भाषाओमे भी फारसी शब्दोकी बडी सख्या है। उनमें भी हजारो फारसी शब्द ज्योके त्यो या कुछ ध्वनि-परिवर्तनके साथ रच-पच गये है। इतना ही नही, मराठो, सिखो और अन्य हिन्दुओमें फारसी अरबी शब्द धर्म और समाजके मान्य पुरुषोके वशोके नाम बन गये, जैसे दरबार साहब, गुरु ग्रन्थ साहब, खालसा, पेशवा, फडनवीस, चिटणीस, मुन्शी, दीवान, जौहरी, दफ्तरी, मलिक, नहरू, कानूनगो, सरकार, बजाज, मौजमदार आदि। आज मुन्शी और दफ्तरी बहुत छोटे पद हैं, पर मुसलिम शासन कालमें ये बहुत बडे पद थे।

कुछ फारसी शब्द देखिए अनार, उम्मेद, उस्तरा, खून, खूनी, खूब, गन्दगी, चन्दा, चपरासी, चरखा, चरबी, चश्मा, चाकर, चापलूसी, चालाक, चिलम, चीज, चुगलखोर, चुगली, चोबदार, चिलगोजा, चुस्त, जग, जनाना, जबरदस्ती, जमीदार, जहाज, जागीरदार, जादू, जान, जोश, तख्त, तीर, तेज, तोशक, दगल, दफ्तर, दरबार, दीवान, दुकान, दुशाला, दोगला, नगीना, नमक, नमूना, निशानी, नेक, प्याला, पेचक, पोदीना, फासला, बादाम, बीमा, बीमार, बाजार, बर्फ, बाग, बलवा, बलवाई, बहाना, बिरादरी, बेगार, मजेदार, मस्ती, मुरदा, मेज (इस शब्दको एन्थनी जेवियर सोरस पुर्तगाली मेजो शब्दसे बना हुआ और मोलसवर्थ फारसी मानते है।[2]) रगीन, रसीद, राह, रूमाल, रोजी, रोशनदान, लगाम, शादी, शानदार, शिकार, शेर, सगतराश आदि।

ब्राजील शब्द—अनन्नास (पुर्तगालीके माध्यमसे भारतमे आया), तम्बाकू आदि।

मलयी शब्द—गटा परचा, पिरच (रिकाबी, प्लेट, प्याला) यह

---

१ इसके लिए देखिए, डॉ० अब्दुलहक लिखित 'मराठी जबानपर फारसीका असर।'

२ Influence of Portuguese in Asiatic Languages

शब्द पुर्तगालीके माध्यमसे भारतमे आया। मूल शब्द पिरस (Pirs) है।[1] पिरच, प्याला, सका समस्त पद चलता है सागू आदि।

मिस्री शब्द—मिसरी (खाण्डसे बनी), यह शब्द मिसरके नामपर रखा गया है।

मक्सिको शब्द—कोको, चाकलेट, टमाटर (टोमेटो) आदि।

यूनानी शब्द—यूनानका सम्बन्ध भारतमें चन्द्रगुप्त मौर्यके समयसे भी पहलेसे है। यूनान भी सभ्यता तथा ज्ञान-विज्ञानमे भारतके समान ही बढा-चढा था। प्राचीन कालमे ही दोनो देशोमे सास्कृतिक आदान-प्रदान होने लगा था। केन्द्र, होरा आदि ज्योतिषके शब्द यूनानियोसे भारत-वासियोने लिये। सस्कृत 'होडा चक्र' इस होरासे ही बना है। कुछ यूनानी शब्दोका अनुवाद भी सस्कृतमें किया गया।[2] अँगरेज़ी शासन-कालमें यूनानी शब्द अँगरेज़ीके माध्यमसे ही आये, चूँकि अँगरेज़ी भाषामे प्रचलित बहुत-से वैज्ञानिक, पारिभाषिक शब्द यूनानी ही है। भविष्यमे भी यूनानी शब्दोके अधिक आनेकी सम्भावना है। नमूनेके तौरपर कुछ प्रचलित यूनानी शब्द यहाँ दिये जाते है—एकेडमी (अकादमी भी), ऐटम, एटलस, टेलीग्राफ, टेलीफोन, ग्रामोफोन, डेल्टा, बाइबल आदि।

रूसी शब्द—चन्द रूसी शब्द भी शायद अँगरेज़ीके माध्यमसे ही हमारे यहाँ आये है। भारत-रूसके बढते हुए सास्कृतिक तथा औद्योगिक सम्बन्धोको देखते हुए यह कहा जा सकता है कि भविष्यमे रूसी शब्द हिन्दीमे अधिक बढेंगे। कुछ रूसी शब्द नीचे दिये जाते है ज़ार, बोल-शेविक, स्पुतनिक, सोवियत, रूब्ल आदि।

रोमन शब्द—रोमन शब्द हिन्दीमें अँगरेज़ीके माध्यमसे आये है। अँगरेज़ी राजकी कानूनी भाषामें रोमन शब्द पर्याप्त है। कुछ साधारण

---

१ Story of Language पृ० २२५

२ शास्त्रीय परिभाषा कोश, सम्पादक वी० आर० दाते तथा सी० जी० कोर्वे : भूमिका।

चलित शब्दो जैसे . ग्रेगेरियन कैलेण्डरके महीनोके नाम है, अगस्त, जुलाई, दिसम्बर, फरवरी आदि ।

लैटिन या लातीनी शब्द—अँगरेज़ीमे लातीनी शब्दोकी बहुत बडी सख्या है और उसीके माध्यमसे लातीनी शब्द हमारे देशमे आये है। जैसे अक्तूबर, इच, ऐजण्डा, केतली, कोटा, कोरम, जनवरी, नवम्बर, पार्लियामेण्ट, पैन्शन, पैन्शनर, पौण्ड, प्रीमियम, वोनस, मशीन, मिल, मील, राशन, रेडियो, शोफर, स्कूल, हस्पताल आदि ।

स्पेनिश शब्द—नीग्रो (हब्शी) आदि ।

ऊपर कुछ ऐसे विदेशी शब्द दिये गये है जो बोलचाल और साहित्य-में बरावर आते हैं। इनके अतिरिक्त सैकडो ऐसे विदेशी शब्द है, जो अलग-अलग व्यवसायो, शिल्पो, विज्ञानो और काम-धन्धोमे प्रयोगमे आते है, जैसे, छापेखाना, डॉक्टरी, रेलवे, मोटर, हवाई जहाज़, इजनियरी । सेना और बीमा तथा वैक-व्यवसाय आदिमे सैकडो विदेशी शब्द दिन-प्रतिदिन प्रयुक्त होते है। जिन आदमियोका उन शब्दोसे बरावर काम पडता है, वे उन्हें जानते हैं। पर जिनका उनसे काम नही पडता, उनके वारेमे अशिक्षित वर्ग ही नही, वडे-वडे शिक्षित आदमी भी यही कहेंगे, कि उन्होने वे शब्द कभी नही सुने। पर किसीने वे शब्द सुने हो या न सुने हो, वे उनके अर्थ जानते हो या न जानते हो, या चाहे उन्हें वे शब्द कितने ही अटपटे लगते हो, वस्तुस्थिति यह है कि ऐसे शब्द प्रयुक्त होते है। सब शब्दोको जाननेका दावा तो कोई नही कर सकता है। कौन आदमी अपनी ही भाषाके सब शब्द जानता है।

अभी हालमे भारत सरकार और हिन्दीके प्रचार-प्रसारमे निरत सस्थाओकी ओरसे कुछ विज्ञानोके सगृहीत हिन्दी पारिभाषिक कोश या शब्दावलियाँ प्रकाशित हुई है। इनमें भी बहुत-से अँगरेजी, यूनानी आदि शब्द अपने मूल या तत्सम रूपमे अपनाये गये है। इस वारेमें युनिवर्सिटी कमीशन और केन्द्रीय शिक्षा परामर्श वोर्डका विचार है कि हिन्दी तथा

भारतकी "दूसरी भाषाओमे अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दोका प्रयोग किया जाये और वैज्ञानिक शब्दावली कोश तैयार करनेमें अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दोका नागरी रूप किया जाये। सरकारी तथा गैर-सरकारी कोशोमे इसी परामर्शके अनुसार बहुत-से विदेशी शब्द दिये गये है। यहाँ कई सरकारी शब्दावलियोमें-से केवल गणित और सामाजिक विज्ञानकी शब्दावलियोमे सग्रहीत विदेशी शब्दोके उदाहरण नीचे दिये जाते है

गणित शब्दावलीसे : पौण्ड, एकड, क्राउन, फुट, सेकण्ड, मीटर, दशमीटर, मील, चेन, स्टाक और शेयर, कमीशन, प्रीमियम, प्रिज्म, ग्राफ-पेपर, स्क्वेयर, कोन, कम्पस, सिलेण्डर, लिटर आदि।

सामाजिक विज्ञान · (समाजशास्त्र, कानून, राजनीति, इतिहास तथा सम्बन्धित भूगोल) सोसाइटी, स्पेशल ऍक्ट, एजन्सी, एजेण्डा, एजण्ट, असेम्बली, बैलट, पर्ची बक्स, बिल, बजट, ब्यूरो, सेसर, सेंसरा, चेयरमैन, चान्सलर, कमसरियत, कमीशन, कम्पनी, कान्फ्रेन्स, कारपोरेशन, गजट, गारण्टी, हाई कमिश्नर, जज, लाइसेन्स, आर्डिनेन्स, पैरोल, पासपोर्ट, पोलिग एजण्ट, प्रेसीडेन्सी, कोरम, कोटा, रीजेन्सी, रीजेण्ट, रेजीडेन्सी, टैक्स, टैकनोलोजी, ट्रेड यूनियन, ट्रेनिंग, वोट, वार्ड, वार्डन, वारण्ट, वाटर-वर्कस आदि।

स्पष्ट है कि निकट भविष्यमे और बादमे भी न केवल हायर सेकेण्डरी विद्यालयोके ही लिए बल्कि कॉलेजो और विश्वविद्यालयके छात्रोके लिए भी मातृभाषाके माध्यमसे शिक्षा देनेके लिए विदेशी शब्दोको भी अधिकाधिक लेना और पचाना पडेगा। सब विज्ञानो, शिल्पो और व्यवसायोमे तो ऐसे शब्दोकी सख्या सहस्रो तक पहुँचेगी और अनेकानेक पारिभाषिक शब्द हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषाओके स्थायी अग बनकर उनके कोशोमे स्थान पायेंगे। इस प्रक्रियामे सुविधाके लिए हिन्दीमें प्रयुक्त विदेशी शब्दोका भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे अध्ययन होना चाहिए।

हिन्दीमें आनेवाले विदेशी शब्दोमे-से बहुत-से शब्दोका रूप पलट गया है, जैसे तूफान, गदर, टमाटर, लालटेन, बोतल, वास्कट, सिकन्दर, अफलातून आदि। स्थानो तथा व्यक्तियोके नामोमे भी यही बात रही है। ये सब परिवर्तन स्वाभाविक रीतिसे प्रयास-लाघवके कारण ही होते हैं। पर कुछ शब्द तत्सम रूपमें आये हैं, जैसे मसजिद, गुलाब, सुलतान, वटन, रेल, महीन तथा स्कूल आदि। यह भी स्वाभाविक ही है। विदेशी शब्दोको हिन्दीमे लिखनेवाले तथा बोलनेवाले सभी स्त्री-पुरुष तो उन शब्दोके ठीक और शुद्ध उच्चारणको नही जानते, पर जो जानते है वे शुद्ध प्रयोग ही करते हैं। जनता वही रूप अपनाती है जिसमे उसे रवानगी महसूस होती है और पीढी-दर-पीढी और एक क्षेत्रसे दूसरे क्षेत्र तक पहुँचते-पहुँचते उनके उच्चारणोमें परिवर्तन भी होते रहते है।

दिल्ली, आगरा, मेरठ और लखनऊ आदि नगरोमे उर्दू-फारसीका वडा प्रचलन तथा पठन-पाठन रहा है। इसलिए वहांके शिक्षित स्त्री-पुरुष अरवी-फारसी शब्दोका उच्चारण शुद्ध करते है, पर देहातोमे तथा पूर्वी उत्तरप्रदेश तथा बिहार आदिमें अरवी-फारसीके इन्ही शब्दोका उच्चारण अशुद्ध होता है। मद्रास, कलकत्ता, वम्बई, इलाहाबाद तथा दिल्ली आदिके स्त्री-पुरुप अँगरेजी शब्दोको जितना शुद्ध बोल सकते है, उतना ही छोटे शहरो तथा गाँवके स्त्री पुरुप नही वोल सकते। शब्दोका उच्चारण वदलनेमें समय भी एक वडा कारण है। आरम्भमें मुसलमान शासकोके सम्पर्कमे आनेवाले हिन्दू-फारसी-अरबी शब्दोको सुनकर गलत-सलत, जैसा वनता, बोलते और लिखते थे, पर ज्यो-ज्यो फारसीका और वादमे उर्दूका प्रचार हुआ त्यो-त्यो उनका उच्चारण शुद्ध होने लगा।

यही हाल अँगरेजी शब्दोका भी हुआ। इगलैण्डमे हमारे हिन्दुस्तानी शब्दोकी भी यही गत वनी, उन्हें भी समय-समयपर भिन्न-भिन्न उच्चारणोमे से गुज़रना पडा। वास्तवमे ठीक तो यही है, कि मातृभाषामे अपनाये शब्दोका तद्भव रूप सुविधापूर्ण होता है। तत्सम रूप बोलना

फैशन है, अपनी विद्वत्ताका परिचय देना है। भिन्न-भिन्न कालोमे लिखे गये साहित्यमे अपनाय विदेशी शव्दोके रूप एवं उच्चारण आदिमे हुए 'परिवर्तन' इसके साक्षी है। सक्षेपमे यही कहा जा सकता है कि हिन्दीमें विदेशी शव्दोका इतिहास एक प्रकारसे दो सघर्षपूर्ण तथा विरोधी प्रवृ-तियोका लेखा है। एक प्रवृत्ति तो विदेशी शव्दोको हिन्दी हिज्जे और उच्चारणके ढाँचेमे पूर्ण रूपसे ढालकर पचाती है और दूसरी प्रवृत्ति उनके विदेशी हिज्जे, आकृति तथा उच्चारणको सुरक्षित रखती है। दोनोका यह सघर्ष आज भी चल रहा है, और शायद चलता ही रहेगा।

उचित यही है कि जहाँतक हो सके हिन्दी विदेशी शव्दोके वर्ण-विन्यास तथा उच्चारण आदिमे हिन्दीकी प्रकृतिके अनुसार परिवर्तन कर उन्हे अपने ढाँचेमे ढालकर पचाये जाये जनत-द्वारा वे ही शव्द हिन्दीके नागरिक (naturals) माने जायेंगे। पर जो विदेशी शव्द हिन्दीमे बहुत प्रयोगमे आते हुए भी पूर्ण रूपसे न पचकर अपने मूल रूप और उच्चारण आदिको बनाये रखें अर्थात् तत्सम रहे, उन्हें नागरिक या विदेशी (Denizens या aliens) ही मानना चाहिए, यो है वे भी हिन्दी-के सहायक ही। कभी-कभी हिन्दीमे आनेवाले ये विदेशी शव्द आकस्मिक यात्री (Casual visitors) ही रहेगे। ऐसे शव्द समाचारपत्रोमें तो आते रहते हैं, पर देशकी भाषा और साहित्यमे वे स्थान नही पाते।

कुछ विदेशी शव्दोके उच्चारणपर जन-भाषा व्युत्पत्ति (Folk Etymology) भी बडा प्रभाव डालती है। साधारण जनता विदेशी शव्दोका उच्चारण विचित्र ढगसे किसी पूर्व परिचित शव्दके उच्चारणके ढर्रेपर ही करती है। इसके कुछ उदाहरण बडे मनोरजक है, जैसे करनैलके ढर्रेपर जनरल (General)को जरनैल बना लिया, और उसीसे कलकत्तेसे लाहौर तक जानेवाली वडी सडकको 'जरनैली सडक' कहा जाने लगा। जनता लॉर्डको लाट (ठ) साहव पुकारने लगी और कमाण्डर-इन-चीफको जगी लाट (ठ) कहने लगी। होटलके वेअरको 'बैरा' वोलनेवालोने ही

बनाया। फौजोंके आगे-आगे चलनेवाली पलटन 'सफरमैना' कहलाती है, जो अँगरेज़ी सैपर्स एण्ड माइनर्ज (Sappers and miners) का चलता रूप है। बैरिस्टरको 'बालिश्टर साहब' कहा जाता है, क्योंकि सफर, मैना और बालिश्तसे जनता पहले ही परिचित थी। अँगरेज़ी बक्लज्को बकसुआ कहना भी इसीकी मिसाल है। डॉ० बाबूराम सक्सेनाने भी कुछ उदाहरण इसी ढगके दिये है। वे लिखते है "हिन्दू विश्वविद्यालयका आर्ट्स कॉलेज इक्के-ताँगेवालोके मुखसे आठ कालेज हो गया और बादको जो सायन्सका कॉलेज बना, उसका नाम उच्चारणकी शुद्धता स्वरूप 'आठ कॉलेजके' वजनपर 'नौ कॉलेज' बन गया। प्रयागमे यूनिवर्सिटीको प्राय ताँगेवाले 'अनवरसीटी' कहते हैं। प्रयागमें कोई-कोई समझदार भिखमगे आशीर्वाद देते समय 'बाबू लाट कमण्डल होइजा' कहते है। कमण्डल शब्द स्पष्ट ही विदेशी कमाण्डरका स्वदेशी रूप है, जिससे भिखारी पहलेसे ही परिचित है[1]।" अँगरेज़ोने भी बहुत-से हिन्दुस्तानी नामोका उच्चारण इसी ढगमे तोडफोड कर किया, जिनमे-से एक उदाहरण शाहशुजा उल-मुल्कका नाम 'चा शुगर एण्ड मिल्क (चाय चीनी और दूध) है।[2]

यह जनभाषा विदेशी शब्दोके उच्चारणको अपने अनुकूल ही नही बनाती, वरन् पुराने सस्कृत शब्दोको भी अपने ढाँचेमें ढालती रहती है। जैनोके भादो सुदि पचमीको मनाये जानेवाले सवत्सरि पर्वको जैनी जनता 'छमाछमी कहती है। ऐसे और शब्दोकी भी खोज होनी चाहिए।

हिन्दीमे आनेवाले विदेशी शब्दोके अध्ययनमें दूसरी बात उनके वचन तथा लिंगका' विचार है। इन शब्दोके लिंग और वचन हिन्दी व्याकरणके नियमोके अनुसार निश्चित होने चाहिए, न कि उन शब्दोकी मूल भाषाओके व्याकरणके अनुसार। किसी भाषामें पचे हुए शब्दोका अपना व्यक्तित्व सर्वथा

---

१ सामान्य भाषाविज्ञान, पृ० ३६।

२ Indian Words in English, पृ० ४८।

उस भाषामे विलीन हो जाता है। अरबी अखबार शब्द खबरका बहुवचन है। पर वह समाचारपत्रके अर्थमें एकवचनमें आता है, अँगरेज़ी शब्द 'फुट' एकवचन है, पर हिन्दीमे वही दोनो वचनोमें आता है। कभी-कभी फुटोका भी प्रयोग होता है। पर 'फीट'का कभी नही होता। हिन्दीमे दर्जन अर्थात् डजन (Dozen)का प्रयोग भी दोनो वचनोमे होता है। यही नियम अँगरेज़ो माईल (mile)के हिन्दी रूप मीलके वारेमे है। अँगरेज़ी मैचेस शब्द दियासलाई और उसकी डिबिया दोनोके लिए 'माचिस'रूपमें चलता है। तुर्की बेगमका बहुवचन 'वेगमात' नही 'वेगमे' होता है। विदेशी शब्दोके स्त्रीलिंग रूप भी हिन्दीके ढगपर ही बनाये जाते है, जैसे तहसीलदारनी, डॉक्टरनी, पठानी, मास्टरनी, मुगलानी, सैयदानी, तथा वकीलनी आदि।

यहाँ विदेशी शब्दोके अर्थ-विस्तार एव परिवर्तनका विषय भी विचारणीय है। अँगरेज़ीमें टिकिट और स्टाम्प शब्दोके अर्थ अलग-अलग हैं, पर हमारे यहाँ टिकिट शब्द ही दोनो अर्थोमे चलता है। ऐसे ही मोटर शब्द प्राय मोटरकार, टैक्सी, लॉरी, बस और ट्रक सबके स्थानपर वैसे ही काम आता है, जैसे अँगरेज़ी बुलक कार्ट (Bullock Cart) हिस्दुस्तानी बैलगाडी, छकडा, लड्डा, रेहड् तथा मँझोली आदि सबके लिए आता है। कभी-कभी एक ही विदेशी शब्दके दो अर्थोका भेद स्पष्ट रूपसे करनेके लिए वर्ण-विकारसे उसी शब्दके दो रूप कर दिये गये हैं, जिससे सन्दिग्धताकी गुजाइश न रहे, जैसे अँगरेज़ी शब्द गार्डके दो रूप 'गार्ड' और 'गारद' प्रचलित हो गये हैं। इनमे गार्ड रेलके गार्डके लिए और गारद पुलिसकी टुकडीके लिए प्रयुक्त होता है।

हिन्दी भाषाके नियमोके अनुसार विदेशी शब्दोसे अनेक नये शब्द बनाये गये है, जिनमें सज्ञाएँ, क्रियाएँ, विशेषण तथा समास आदि सभी प्रकारके शब्द है। हर-एक जीवित और प्रगतिशील भाषाकी यही विशेषता है कि जो शब्द उसमे आ गये वे उसीका अग बन गये। आगे उसी

भापाके नियमोके अनुसार उन शब्दोसे नये शब्द बनाये जाते है। जैसे १ सज्ञाएँ–डॉक्टरी, इजीनियरी, तहसीलदारी आदि, २ क्रियाएँ–दफनाना, तराशना, गिलाफना, फिल्माना, टाइप करना (टकण), पालिश करना आदि, ३ विशेषण—सरकारी काम, फौजी राज, जरनैली सडक, और ४ समस्त पद–बूचडखाना, टिकिटघर आदि।

हिन्दीमे आनेवाले विदेशी शब्दोका भिन्न-भिन्न दृष्टियोसे विस्तारके साथ अध्ययन आवश्यक है। उनसे नये पारिभाषिक शब्द बनानेमे सीमाके अन्दर रहते हुए सहायता लेनी चाहिए, क्योकि वे अब विदेशी न रहकर हिन्दीका अग बन गये है।

दुभाषाई या विमिश्र शब्द

हर-एक भाषामें विदेशी शब्दोके अतिरिक्त बहुत-से ऐसे शब्द और समस्त पद होते है, जो भिन्न-भिन्न भाषाओके तत्त्वोसे मिलकर बनते है। किसी भाषामें विदेशी शब्दोके अस्तित्वका यह परिणाम अनिवार्य होता है। हिन्दी इस नियमका अपवाद नही है। इसमे भी ऐसे बहुत-से शब्द और समस्त पद मौजूद है, जैसे खेल-तमाशा, धन-दौलत, धूपदानी, अगनबोट, साइकिल-रिक्शा, मेमसाहब, नीलामघर, सजिल्द और सलेटी रग आदि।

ऐसे शब्दोको भाषा-विज्ञानी तिरस्कारसे सकर (दोगले) शब्द कहते है। वास्तवमें ऐसे शब्दोको दुभाषाई या विमिश्र शब्द कहना ही अधिक ठीक तथा न्यायपूर्ण होगा। ये दुभाषाई शब्द कलमी आमो, फलो और फूलोके समान विशिष्ट गुण-सम्पन्न होते है। भाषामे बहुभाषिता पैदा करके ये उसका रस बढाते है, उसे बलवती बनाते है।

यह बहुभाषिता दो या कई भाषाओके सह-अस्तित्वका स्वाभाविक फल है। एक अँगरेज लेखक ऐरिक पारट्रिज अँगरेज़ीमें ऐसे शब्दोके अस्तित्वकी चर्चा करते हुए लिखते है But whereas such hybrids

as these my be found in large numbers in most Indo-European languages, the less obvious hybrids comporsed of a native root or stem and a foreign ending or suffix are much more frequent in English than elsewhere. Befor such hybrids could be formed, there must have been already in the language so great a number of foreign words with the same ending that the formation—this foreign ending (a suffix) tacked on to an English root—would be felt to be perfectly transparent[१]

अर्थात्, "ऐसे दोगले शब्द बहुत-सी भारोपीय भाषाओमे बडी सख्यामे मिल सकते हैं। पर कम प्रकट 'दोगले' शब्द, जिनमे देशी धातुओसे विदेशी प्रत्यय जुडे हो, दूसरी भाषाओकी अपेक्षा अँगरेजीमें ही अधिक है। ऐसे शब्दोके बननेसे पहले, वैसे ही प्रत्ययोवाले बहुत-से विदेशी शब्द भाषामें अत्यधिक सख्यामें मौजूद रहे होगे, तभी तो अँगरेजी शब्दोमें विदेशी प्रत्यय लगाकर बने ये शब्द भी साफ समझमें आ जाते है।"

बहुभाषी शब्द बननेसे पहले जनताका शिक्षित वर्ग विदेशी शब्दोसे परिचित हो जाता है, तभी तो वे एक कुशल कलाकार या रासायनिकके समान विदेशी शब्दो, विदेशी उपसर्गोको तथा प्रत्ययोको अपनी भाषाके तत्त्वोके साथ आसानीसे कलापूर्ण ढगसे मिलाकर नये शब्द या समस्त पद बना पाते है। बहुभाषी शब्द बनानेवालोकी मातृभाषाओकी यह शब्दराशि बहुत बडी देन होती है। विभिन्न जातियो तथा देशोके बीच सास्कृतिक सम्बन्धको बढाने तथा उनमे आपसी मेल-जोल बढानेका यह महान् तथा प्रशसनीय कार्य तो कुछ उदारमना, समदृष्टि, मानव-प्रेमी व्यक्ति ही कर पाते है।

---

१ The World of Words, पृ० २७।

डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्याने अपने एक लेख 'भारतीय आर्य भाषामे बहुभाषिता'[1] में इस विषयकी चर्चा विद्वत्ता तथा खोजपूर्ण ढगसे उदाहरण-सहित करते हुए बगलामे चलनेवाले ऐसे ही कुछ शब्द और समस्त पद सविस्तार व्याख्या-सहित दिये हैं। वे लिखते हैं "जब पूर्व वैदिक कालमें आर्यों और अनार्योंका सम्मिलन प्रारम्भ हो गया था, तब यह अपरिहार्य था, कि अनेक अनार्य शब्द तथा अनार्योंके कुछ बोल-चाल तथा रीति-रिवाज़के शब्द यदि प्रत्यक्ष नही तो परोक्ष या गुप्त रूपसे, आर्यभाषाओंमें मिल जायें। आद्य तथा मध्य भारतीय आर्यभाषाओ तथा भारतीय आर्य-भाषाओमे अनार्य शब्दोकी उत्पत्ति इसी प्रकार हुई।

इन विदेशी भाषा-भाषियोसे, जो भारतमें विजेताके रूपमे आकर बस गये, यहाँके निवासियोका मेल-जोल होनेके कारण पारस्परिक सास्कृतिक सम्पर्क बढा, और इसके परिणामस्वरूप भारतीय भाषाओंमें अनेक विदेशी शब्दोका प्रादुर्भाव हो गया।[2]

"जो शब्द भाषामें किसी कमीकी पूर्ति करता है, वह प्राकृतिक रूपसे शीघ्र ही उस भाषाका अग बन जाता है। जहाँ दो भाषा-भाषियोका सम्पर्क घनिष्ठ हो जाता है, वहाँ उस सम्पर्कके प्रभावसे एक-दूसरेकी भाषाके कुछ शब्दोसे परिचित हो जाना स्वाभाविक ही है। इस प्रकारके भाषा-सम्बन्धी पारस्परिक प्रभावके आरम्भमे यह आवश्यक या अपरि-हार्य है, कि एक भाषाका प्रयोग करनेवालेके लिए दूसरी भाषाके शब्दोंके सम्बन्धमें कुछ व्याख्या दी जाये, जिससे वह उन शब्दोको भली प्रकार समझ सके। मान लीजिए कि किसी देशी भाषा-भाषीको कोई ऐसा विदेशी शब्द समझना है जिसे केवल उस विदेशी शब्दके उच्चारण-

---

१ प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ६५–७३।

२ डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या अनार्य शब्दों (ठेठ देशी रूप), विदेशी भाषाओंके शब्दों और अज्ञात मूल शब्दोंको बाहरी बोलियोंके शब्द मानते हैं, देखिए, प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ६५।

मात्रसे वह नही समझ सकता, तब यह आवश्यक हो जाता है कि उस विदेशी शब्दका अनुवाद देशी भाषामे इस प्रकार दिया जाये कि देशी भाषा-भाषी उसे समझ सकें। इस प्रकारके अनुवादमूलक समास (Translation-Compounds) सभी भाषाओमे मिलते है, जो किसी जीवित भाषाके सम्पर्कमे उनसे प्रभावित हुई हैं।

"भारतीय आर्यभाषाओमें विदेशी शब्दोको किसी देशी या अन्य ज्ञात शब्दके द्वारा स्पष्ट करनेकी प्रथा मिलती है। इनमे अनेक समस्त पद (Compounds) पाये जाते है, जिनमे दो शब्द होते है, और दोनो प्राय एक ही अर्थके सूचक होते है। नव्य भारतीय आर्यभाषाके अनुवादमूलक शब्दोमे वे पद स्पष्ट रूपसे दृष्टिगोचर होते है, जिनमे एक शब्द विदेशी होता है, या एक ऐसा नया विदेशी शब्द होता है जिसकी व्याख्या एक प्राचीन या प्रचलित शब्दके द्वारा होती है (इनके उदाहरण आगे दिये गये है)। इन अनुवादमूलक समस्त पदोमें बडी शक्ति होती है और कभी-कभी वे किसी बातको विशिष्ट रूपसे प्रकट कर देते है। विदेशी या नये शब्द किसी अभिप्रायके नवीन दृष्टिकोणको सूचित करते है।"[१]

डॉ० चाटुर्ज्याने ऐसे दुभाषाई शब्दोके जो उदाहरण दिये है, उनमें-से यहाँ कुछ ऐसे सस्कृत और प्राकृत शब्दोके उदाहरण दिये जाते है, जो वास्तवमे अनुवादमूलक समस्त पद है और जो आजसे १५००, २०००, या २५०० वर्ष पहले प्रचलित थे—

१ **संस्कृत शब्द कार्षापण** कार्ष और पणसे बना है। कार्प कर्षसे बना है और वह ईरानी शब्द है। उसका अर्थ एक नाप या तोल है। पण शब्द आस्ट्रिक (कोल) भाषाका है और इसका अर्थ सख्यासूचक है। इस प्रकार यह एक व्याख्यात्मक समस्त पद है।

२. **शालिहोत्र** शब्द सस्कृतका है और प्राचीन कालमें अश्वका

---

१. प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० ६६।

द्योतक था। अश्वको शालिहोत्रन भी कहा जाता है। पशु रोगोके सम्बन्धमे एक ऋषिने एक ग्रन्थ लिखा था, उन ऋषिका नाम भी शालि-होत्र मिलता है। इस अर्थमे यह शब्द भारतीय सेनामे अव भी चालू है, जिसमे घुडसवार सेनाके घोडोका चिकित्सक 'सोलत्री' कहलाता है। हिन्दुस्तानीमे यही शब्द शरोतरी या सालोतरी बन गया है। शालिहोत्र शब्द द्वन्द्व है और इसके दोनो शब्द भिन्न-भिन्न वोलियोके होते हुए भी एक ही अर्थके सूचक है। शालि कोल शब्द है, जिसका अर्थ अश्व है और होत्री या होत्र शब्दके अर्थ भी सम्भवत यही होगा। यह शायद एक ऐसा शब्द है, जिसे हम द्राविडोसे सम्वन्धित कह सकते है।

३ मुण्ड स्वामिनी : मुण्डका अर्थ शक भापामे राजा है और यह भी समानार्थक समासपदका एक उदाहरण है।

४ महावस्तुमें इक्षु-गण्ड नामक शब्द ईख या गन्नेके लिए प्रयुक्त हुआ है। इक्षु सस्कृत है और गण्ड शब्दका नव्य भारतीय आर्यभापामें (हिन्दुस्तानीमे) गन्ना या गण्डा या गण्डेरी रूप है।

अन्तमे डॉ० चाटुर्ज्या महोदय लिखते है, "आद्य भारतीय आर्य भापा (सस्कृत) तथा मध्य भारतीय आर्य (प्राकृत) भापाओके जिन थोडे-से शब्दोका विवेचन ऊपर किया गया है उससे हम इस उपपत्तिपर पहुँच सकते है, कि प्राचीन भारतमे विभिन्न भापाओके वीच आदान-प्रदान जारी था। अनार्य वोलियाँ भी प्रचलित थी और उनकी शक्ति दो सहस्र वर्ष पूर्व तथा उनके वाद तक वहुत प्रवल थी और भारतीय आर्यभापाओके ब्राह्मण, जैन तथा वौद्ध धर्मसम्वन्धी साहित्यमे उनका प्रभाव आज भी दृष्टिगोचर है यद्यपि इस ओर अभीतक विद्वानोका ध्यान नही गया है।"

प्रो० वहीद-उद्दीन सलीमने भी उर्दूमें आनेवाले ऐसे शब्दोको एक सूची देनेसे पहले लिखा है, 'वे मिसालें (उदाहरण) जो ज़ैलमे (नीचे) दी गयी है, उनमें इस वातको वगौर देखना चाहिए कि अहले ज़ुवान (भापा-विशेपज्ञो)ने आजादीके साथ कभी हिन्दी लफ्ज़ोका फ़ारसी लफ्ज़ोंके

साथ, कभी हिन्दी लफ्ज़ोको अरबी लफ्ज़ोके साथ और कभी फारसी लफ्ज़ोको अरबी लफ्ज़ोके साथ मिलाया है और तुर्की और अँगरेज़ी लफ्ज़ोके साथ भी यही रविश (ढग) अख्तियार की है।'[1] उनके द्वारा दिये शब्दोकी सूची भी सक्षिप्त है।

हिन्दीमे चालू दुभाषी शब्द भाषावार नीचे दिये जाते है। इनमें अनुवादमूलक समस्त पदोके अतिरिक्त दूसरे समस्त पद भी है

१. **हिन्दी-फारसी समस्त पद :** काम-काज, काम-धन्धा, खाक-धूल, काला-सियाह, खेल-तमाशा, गयी-गुजरी बात, गली-कूचा, गली-मुहल्ला, गुलाब जामुन, घुडसवार, चीज़-वस्तु, चोर-दरवाज़ा, चोर-बाज़ार, चोली-दामनका साथ, छमाही, जादू-टोना, जादू-मन्तर, तन-बदन, तिमाही, तेजी-मन्दी, दरियाई घोडा, दाना-पानी, दुख-दर्द, धन-दौलत, नेकचलन, नौकर-चाकर, बगल-गन्ध, ब्याह-शादी, बागवाडी, बाल-बच्चे, मोमबत्ती, भाई-बन्द, मुँह-जोर, रग-ढग, रग-रूप, राजदरबार, सब्ज़ीमण्डी, सवारी गाडी, स्वाग-तमाशा, सीधा-सादा, हाथ-चालाक, हुण्डी-परचा आदि।

२ **हिन्दी-अरबी समस्त पद :** अजायबघर, इकतरफा डिगरी (डिगरी अँगरेज़ी), इमामबाडा, उम्र-पट्टा, कफन-चोर, कूढमगज, खत-पत्तर, गण्डा-ताबीज, चोर-महळ, जमापूँजी, जेब-कतरा, ढोल-ताशे, दवा-दारू, नकदी चिट्ठा, पच फैसला, ब्याही-निकाही, बोल-कबूल, मोतीमहल, रीति-रिवाज, सफाचट, हलवा-माँडा, हँसी-मज़ाक, हाट हवेली, हुक्का-पानी आदि।

३ **फारसी-अरबी समस्त पद :** कानूनगो (अ० फा०), कम-ज्यादह (फा० अ०), किरायेदार (अ० फा०), गर्म मसाला (फा० अ०), गाव-तकिया (फा० अ०), जेबखर्च (अ० फा०), ताल्लुकेदार (अ० फा०), दस्तख़त (फा० अ०), नमक हराम (फा० अ०), नमकहलाल

---

१ वज़ा इस्तलाहात, पृ० २१६।

(फा॰ अ॰), फाकामस्त (अ॰ फा॰), बे-मौत (फा॰ अ॰), फाका-मस्ती, फिजूलखर्च (अ॰ फा॰) रगमहल, (फा॰ अ॰), शीशमहल (फा॰ अ॰), सफर-खर्च (अ॰ फा॰), सब्जकदम (फा॰ अ॰), हवा-दार (अ॰ फा॰), हवालदार (अ॰ फा॰) आदि ।

४ **अँगरेजी हिन्दी आदि शब्दोंके समस्त पद** . अगनबोट, गोल मारकेट, जेलखाना, (अ॰–फा॰), टिकिटघर, टिकिट बाबू, डबल रोटी, पॉकेटमार, पोपलीला, मेमसाहब, रेलगाडी, वोटदाता, साइकिल सवार आदि ।

५. **विविध भाषाओंके समस्त पद** · कुछ ऐसे शब्द भी नीचे दिये जाते है जो ऊपर दी हुई भाषाओके समस्त पदोसे भिन्न है । भाषाओका सकेत कोष्ठकोमें कर दिया गया है । ऐसे शब्दोकी सख्या कम मालूम होती है, पर खोज करनेसे ये भी काफी सख्यामे मिल सकते हैं औटोरिक्शा (अ॰–जा॰), कुर्क अमीन (तु॰–अ॰), कोचवान (अ॰–फा॰) खुफिया-पुलिस (अ॰–अ॰), डिगरीदार (अ॰–फा॰), जिय जजीर (अ॰–फा॰), जरकिन-कमरो (अ॰–फा॰), नम्बरदार (अ॰–फा॰), पावरोटी (पु॰–हि॰), पैदल पलटन (फा॰–अ॰), फौज पलटन (अ॰–अ॰), साइकिल रिक्शा (अ॰–जा॰), नीलाम घर (पु॰–हि॰) आदि । इसी प्रकार हिन्दी तथा दक्षिणी भाषाओके शब्दोके समस्त पदोकी खोज तथा सग्रह भी होना चाहिए ।

उपसर्गो तथा प्रत्ययोके परिच्छेदोको देखनेसे स्पष्ट हो जायेगा कि सस्कृत, हिन्दी, फारसी, और अरबीके उपसर्ग तथा प्रत्ययोको बडी आसानी और स्वतन्त्रताके साथ भिन्न भाषाओके शब्दोसे पहले या अन्तमे जोडकर नये-नये शब्द बनाकर बोलचालकी भाषाको ही नही वरन् साहित्यिक भाषाको भी समृद्ध बनाया जाता रहा है । इस प्रकार बने शब्द उपसर्ग 'ना', बे (फा॰), 'ला' (अ॰), 'स' (स), और प्रत्यय 'ई', 'अ', 'ईला', 'करना', 'गर' (फा॰), 'चा' (तु॰), 'दान' (फा॰),

'दार' (फा०) 'ना', 'बन्द' (फा०) और 'बाज़', (फा०) आदिके अन्तर्गत बडी सख्यामें मिलेंगे। उनमे-से कुछ उदाहरण नमूनेके तौरपर यहाँ दिये जाते है, जैसे अजिल्द, बेचैन, लापता, सजिल्द, स्लेटी, ज़हरीला, मिडलची, अफीमची, पानदान, धूपदान, झालरदार, नम्बरदार, डिगरीदार, बख़्शना, लठबन्द तथा पार्टीबाज़ी आदि। यह सब उसी स्वाभाविक प्रवृत्ति-के कारण हुआ है जिसकी कि अँगरेज़ लेखक ऐरिक पार्ट्रिजने अपनी पुस्तकमें संकेत किया है।

ऐसे शब्द हिन्दीमे आज भी बन रहे है, जैसा कि एक दैनिक पत्रके शीर्षक "भारत 'स'-शर्त युद्ध की घोषणा स्वीकार नही करेगा"[1] से प्रकट होता है। इसमे संस्कृत उपसर्ग 'स' को फारसी शब्द शर्तसे पहले लगाया गया है। हिन्दीके बडेमे बडे प्रकाशक भी अरबी शब्द जिल्दसे पहले सस्कृत उपसर्ग 'अ' या 'स' लगाकर अजिल्द और सजिल्द शब्दोका प्रयोग करते है। सभी प्रकाशक तथा समालोचक 'अठपेजी, सोलहपेजी, समस्त पदोका प्रयोग करते है। केवल साहसी, परम्परा तोड और प्रगति-शील कवि तथा लेखक ही दुभाषी शब्दोका निर्माण कर सकते है, या जनता अपनी सुविधाके अनुसार यह काम करती है, दूसरे नही। अँग-रेज़ी तथा फारसी आदि जीवित भाषाओके समान हिन्दीको भी यही विशेषता है। यही कारण है कि हिन्दीके विशाल उद्यानमें दुभाषी शब्द-पुष्प खिल रहे है। सुरुचिके साथ सुन्दर तथा अर्थपूर्ण ऐसे दुभाषी शब्द बनानेसे हिन्दी समृद्ध ही हो रही है, कोई क्षति नही हुई।

•

१. नवभारत टाइम्स, दिल्ली, ता० २३ मार्च, १९५६।

बारहवाँ परिच्छेद

शब्दोंके अनुवादकी समस्या

अनुवादक एक भाषा-द्रोही (Traitor) है।

—इटलीकी एक कहावत

उलथा करना हर एक आदमीका काम नहीं है।

—लूथर

अनुवाद एक कला है।

—खलील जिब्रान

अनुवादमें ठीक शब्दोंको जोडना अपने-आपमें एक कला है।

—मोरियोपाई

हर-एक भाषा जहाँ दूसरी भाषाओं—विदेशी तथा प्रान्तीय भाषाओं-से ज्योंके त्यों शब्द ग्रहण करती रहती है, वहाँ वह दूसरी भाषाओंके शब्दोंके अनुवाद भी ग्रहण करती रहती है। इस प्रकार अनूदित शब्द भी किसी भाषाके शब्द-समूहका एक बहुत बडा अंग बन जाते हैं। ऐसे शब्दोंको अनूदित ऋण-शब्द (Translation Loans) कहते हैं।

साधारण रूपसे भाषाओंमें अनूदित शब्द धीरे-धीरे आते रहते हैं, और किसीको उसका आना न तो मालूम ही होता है और न खटकता ही है। वे चर्चाका विषय भी नहीं बनते। पर जातियोंके जीवनमें या दूसरे शब्दोंमें भाषाओंके जीवनमें कभी-कभी अनेक कारणोंसे ऐसे अवसर आते हैं, जब कि अनूदित शब्द बहुत बड़ी संख्यामें उसके साहित्यमें आ जाते हैं। इंगलैण्डके इतिहासमें ऐसा एक अवसर उस समय आया था,

जब वहाँके विद्वान् पादरियोने हिब्रू भाषासे बाइबिलका अनुवाद अँगरेज़ीमे किया। इसी प्रकार नवी शताब्दीमे खलीफाओके शामनकालमे यूनानी ग्रन्थोका अरबी अनुवाद करते समय भी वहाँके लेखको तथा अनुवादकोको इसी कठिनाईका सामना करना पडा था। उन विद्वानोकी कठिनाईका अनुमान आजके हिन्दी विद्वान् अपने अनुभवसे लगा सकते है। ऐसा एक अवसर हमारे यहाँ भी अबसे चार-पाँच सौ वर्ष पहले आया था जब कि हिन्दीके विद्वानोने सस्कृत तथा प्राकृत धर्म ग्रन्थोका अनुवाद अपने युगकी हिन्दीमें किया था। उनको भी इस काममे कठिनाई पेश आयी थी, पर कम, क्योकि उन्होने सस्कृत या प्राकृतके शब्द तत्सम रूपमे हिन्दीमे प्रयोग करके या उनमें वर्ण-विकार करके तद्भव शब्द बनाकर अपना काम चला लिया। मुसलिम तथा अँगरेज़ी कालमे विद्वानोने अरबी-फारसी तथा अँगरेज़ी पुस्तकोका हिन्दीमे अनुवाद अपना सुविधानुसार किया और अनुवादकी कठिनाईने किसी समस्याका रूप धारण नही किया। पर आज स्वतन्त्र भारतमे हिन्दी-भाषियोके लिए ही नही, बल्कि भारतकी दूसरी आधुनिक भाषाओके विद्वानोके लिए भिन्न-भिन्न भाषाओके शब्दोका अपनी भाषाओमे अनुवाद करना साधारण तौरसे तथा अँगरेज़ी पारिभाषिक शब्दोका अनुवाद करना विशेष तौरसे एक विकट समस्या बन गयी है। पिछले पाँच-सात वर्षोमे हुए शब्दोके अनुवाद-कार्यने हमारे विद्वानो तथा राजनेताओके समक्ष ये चार बातें स्पष्ट कर दी हैं

१ शब्द अनुवाद काम उतना आसान नही है, जितना कि पहले दिखाई देता था।

२ अनूदित शब्दोकी भाषा तथा उपयोगिताके बारेमे तीव्र मतभेद रहता है।

३ बहुत-से अनूदित शब्दोसे मूल शब्दोका अर्थ प्रकट नही होता, नये गढे शब्द अटपटे और अति कटु लगते है। ये मूल शब्दोके निश्चित (Precise) अर्थको प्रकट करनेमें असमर्थ होते है, इनमें पारिभाषिक

शब्दोके गुणोका अभाव रहता है। कभी-कभी इनमे सुरुचिका अभाव भी खटकता है।

४ हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषाओमें उपलब्ध शब्द-सामग्री-का शब्द-अनुवादके काममे पूरी तरह उपयोग कर नये-नये शब्द गढनेका प्रयत्न किया जाता है। इसका मुख्य कारण यही है कि देशकी भिन्न-भिन्न भाषाओ तथा बोलियोमे प्रयुक्त शब्दोका पूर्ण सग्रह अभीतक नही किया जा सका है। इस ओर हमारे शब्द-रचयिताओका उपेक्षा भाव भी है।

शब्दोके अनुवादकी कठिनाईका अनुभव हिन्दीके अनुवादको, पत्रकारो, आकाशवाणी विभाग (ब्राडकास्टिग विभाग) और हमारे दुभाषियोको प्रतिदिन होता है। समारके जिन दूसरे देशोकी सभ्यता और सस्कृति हमारी सभ्यता और सस्कृतिके समान महान् और प्राचीन है, उन्हे भी इस शब्द-अनुवाद काममें हमारे समान ही कठिनाईका सामना करना पडता है, और वे अपनी इस कठिनाईको परिश्रमसे हल करते है। हिन्दीके पाठकोको दूसरे देशोकी इस कठिनाईका कुछ अनुमान नीचे लिखे उद्धरणसे मिल जायेगा।

श्री मोरियोपाई लिखते है जिन शब्दोके लिए दूसरी भाषाओमे समानक (समानार्थी–equivalents) शब्द नही है, उन शब्दोका प्रश्न यू० एन० ओ० (सयुक्त राष्ट्र सघ) के विवादोमें प्रबल तथा प्रामाणिक रूपसे सामने लाया गया था। रूसी अनुवादक अँगरेजी शब्द ज्यूरिस्डिक्शन (Jurisdiction) की टक्करका रूसी शब्द न दे सका और अन्तमे उसे छह शब्दोके गोलमोल, वक्रोक्तिपूर्ण या टालमटोलवाली बातसे सन्तुष्ट होना पडा। चीनी अनुवादकको सान फ्रान्सिस्को सभामे एक हजारसे भी अधिक नये समानक शब्द गढने पडे[१]।" हिन्दीमे भी 'ज्जुरिस्डिक्शन'के

१ Story of Language, पृष्ठ ४३०।

लिए अधिक्षेत्र, अधिकार, न्यायक्षेत्र, वैध अधिकार और क्षेत्राधिकार आदि शब्द रचे गये है।

इसी प्रकार यू० एन० ओ०में यह पता चला कि फ्रान्सीसी भापामें ट्रस्टीशिप (Trusteeship) के लिए कोई समानक (तुल्यार्थी या समानार्थी) शब्द नही है। चीनी भापामे स्टीयरिंग कमेटी (Steering Committee) के भावको बतानेका कोई साधन नही है और स्पेनी भापामें चेयरमैन (Chairman) और प्रेजीडेण्ट (President) मे भेद बतानेके लिए शब्द नही है[1]। हिन्दीमे भी इनके लिए कोई शब्द नही थे पर अब क्रमश न्यासधरता, (न्यासिता), कर्णधार या मार्गनिर्देशिका समिति, सभापति या अध्यक्ष और राष्ट्रपति, सभापति या दलपति तथा अध्यक्ष शब्द रचे गये हैं।

अँगरेजो-जैसी पाँच लाख शब्दोवाली भापामें कई सस्कृत शब्दोके सन्तोषजनक समानक नही मिलते, फलत अँगरेज़ीवालोने अवतार, ब्रह्म, श्राद्ध, सती, तन्त्र, अमृत, स्तूप, गायत्री, मठ, सहिता, समार, सस्कार, स्वस्तिक, वेदान्त आदिके तत्सम ही अपना लिये है[2]। अँगरेज़ोमे 'कर्म' तथा 'माया' के भी सन्तोपजनक समानार्थक नही बनाये जा सके सो ये भी अपने तत्सम रूपमें ही लिये गये हैं[3]। यो इनके अनुवाद-प्रयत्न भी कम नही हुए और कुछ तो सफल भी माने जाते हैं।

सस्कृतके जिस अहिसा शब्दको हमारा बच्चा-बच्चा समझता है, उसका अँगरेजी समानक नॉन-वायलन्स ठीक वही अर्थ कहाँ देता है? हमारे अपरिग्रह शब्दका नॉन-पजेशन शब्दसे क्या अर्थ निकलता है? पर किया क्या जाये? शब्द बना दिये, प्रचलनसे अर्थ जड पकड लेगा।

---

१ Story of Language, पृ० ४२७।

२ Indain Words in English, पृ० २५।

३. Indian Words in English, पृ० २६।

कोशोमे मूल शब्दोकी पारिभाषिक धारणाओका निर्देश अर्थ समझनेमें सहायता करेगा।

हम भी ईसाइयो तथा मुसलमानोके खास-खास धर्म-भाव (Concept) सूचक शब्दोके हिन्दीमें इसी प्रकार अनुवाद कर सकते है ? और किसी प्रकार काम चला सकते हैं।

कुछ ऐसे शब्दोकी समस्या सदा सामने आती है जिन्हें अननुवाद्य या अनअनुवाद योग्य (Untranslatable) कहा जा सकता है। धार्मिक तथा वैज्ञानिक शब्दोकी बात छोड दीजिए, क्या हम सिगरेट या सिगार-जैसे अन्तर्राष्ट्रीय शब्दोका हिन्दीमे अनुवाद कर सकते है ? इसीलिए तो हमने उन्हे ज्योका त्यो हिन्दीमें अपना लिया हैं। पर रूसियोने सिगरेटका भी अनुवाद पेपिरोसो (Papiroso) और जापानियोने सिगरेट शब्दका अनुवाद मोकी टबाकू (Moki-tabako) कर ही डाला।[1]

मोरियोपाईका कथन है कि कुछ भाषाएँ विदेशी शब्दोको अपनानेमें विरोध दिखाती है। उदाहरणके तौरपर जर्मन भाषावाले अनूदित शब्द अपनाना अधिक अच्छा समझते है, अर्थात विदेशी शब्दोका भाव अपनी धातुओसे लगाकर अपनाते है।

शायद डॉ० रघुवीर भी हिन्दीमें यही रीति चलाना चाहते थे कि हर विदेशी शब्दका संस्कृतमे अनुवाद करके ही हिन्दीमे चलाया जाये। पर हिन्दीवाले सदा ही बीचके रास्तेपर चलते रहे है, यानी जिन विदेशी शब्दोका अनुवाद हिन्दीमे हो सका है या जिनके हिन्दी समानक मिल सके हैं उनके हिन्दी अनुवाद भाषामें चला दिये है, पर जिन विदेशी शब्दोके अनुवाद नही हो सके या समानक नही मिले, उन्हें मूल रूपमें प्रचलित कर दिया है। इसलिए हिन्दीमें बहुत-से विदेशी शब्द और बहुत-से दूसरे विदेशी शब्दोके हिन्दी अनुवाद मिलते है। दूसरी भाषाओके

१. Story of Language, पृ० ४५०।

समान यह हिन्दीका स्वभाव या प्रकृति बन गयी है और इसे बदलना कठिन ही नही, असम्भव है।

कभी-कभी भाषाओमे विदेशी शब्दोंके सम्बन्धमे एक और रीति भी चलती है। विदेशी शब्दोके साथ ही उन शब्दोके अनुवादोको भी चलाया जाता है। एक दो उदाहरणोसे यह बात और भी स्पष्ट हो जायेगी। लाउडस्पीकर, प्रेस, थर्मामीटर, पार्लियामेण्ट और बिल आदि अनेक शब्द हिन्दीमे चलते है, इनके लिए कुछ नये-पुराने शब्द ध्वनि-प्रसारक यन्त्र, मुद्रणालय या छापाखाना, तापमापक यन्त्र, ससद् और विधेयक शब्द भी हिन्दीमें चल रहे है।

हिन्दीके समान अँगरेज़ी भी शब्दोके अनुवादोकी प्रक्रियाको काममे लाती है, जैसे कि शार्टहैण्ड (Shorthand) शब्द स्टेनोग्राफी (Stenography यूनानी शब्द) या तग लिखावटका अनुवाद है, पर दोनो शब्द साथ-साथ चलते है। पर स्टेनोग्राफरकी जगह एकरूपताकी लचर दलीलके आधारपर शार्टहैण्ड राइटर (Shorthand writer) बोलने या लिखनेके लिए कोई आग्रह नही करता। वहाँ तो स्टेनोग्राफरका भी कटवाँ रूप (Clipped form) स्टैनो (Steno) लिखा-बोला जाता है, कारण, यह छोटा है, बोलनेमें कम समय और कम श्रम लेता है, और लिखनेमे कम स्थान। अँगरेज़ीकी प्रकृतिका यह एक विशेष गुण है। मोरियोपाईके शब्दोमें "अँगरेज़ी निश्चित रूपसे उन भाषाओमे है, जो कि विदेशोसे आनेवाले शब्दोका स्वागत करती है।"[1] हिन्दीवालोको भी यह मान ही लेना चाहिए कि शब्दोके सम्बन्धमे हिन्दीको एक नियम-म जकडी हुई या 'लकीरकी फकीर' भाषा न बनायें बल्कि आवश्यकता, सुविधा, उपयोगिता, अर्थ-स्पष्टता, चलन, शब्द छुटाई आदि अनेक बातोको ध्यानमें रखते हुए विदेशी शब्द और उनके अनुवाद लेकर और

---

१ Story of Language, पृ० १५०।

दोनो रूपोसे हिन्दीका शब्द-भण्डार बढाये। फिर यह लिखने बोलने-वालेकी इच्छा है, कि वह किस शब्दका प्रयोग कहाँ करे। भाषामें एक-रूपता या एक-नियमता नही चलती, प्रयोग करनेवालेकी रुचि ही प्रधान होती है, इसे हमे कभी नही भूलना चाहिए।

शब्दोके अनुवादसे कभी-कभी अपनी भाषाके शब्दोके अर्थ भी बदल जाते है और धीरे-धीरे वे अर्थ पक्के हो जाते है। यह काम भी बडे अनजान रूपसे और धीरे-धीरे होता है। उदाहरणार्थ, सिलवर जुबिली, (रजत जयन्ती), गोल्डन जुबिली (स्वर्ण जयन्ती), डायमण्ड जुबिली (हीरक जयन्ती) शब्दोके अनुवादोमे पहले शब्दोके अर्थ क्रमश पच्चीस, पचास और साठ वर्ष चल पडे है, इसी तरह सुनहरा अवसर समस्त पदमे 'सुनहरा' का अर्थ मूल्यवान्, महान्, हो गया है। अर्थोका यह हेर-फेर अनुवादकी कृपासे होता है।

सस्कृत, हिन्दी और दूसरी भाषाओमें एक-एक भावको प्रकट करने-वाले कई-कई शब्द है। यह भाषाका बडा गुण है। शब्दोके सम्बन्धमें यह गुण हमारी समन्वय-प्रवृत्ति (अपनाने और अपनाकर उनसे काम लेनेकी इच्छा और आदत) को प्रकट करता है। इससे लेखक, कवि, वक्ता और जनताको काममें लानेके लिए अनेक शब्द मिल जाते है। इस विविधतासे भाषामें पुनरुक्ति दोषसे बचा जा सकता है। इससे भाषामें न केवल जान और रगीनी ही आती है, बल्कि उनसे सुविधा अनुसार अनेक नये-नये शब्द और मुहावरे बनानेमे आसानी होती है तथा गति-रोध नही होने पाता। उदाहरणार्थ, जल, पानी या आब (फा०) को ही लें। इन सभीसे बने शब्द और मुहावरे हम एक दूसरेकी जगह बोलते और लिखते है गगाजल, जलपान, जलथल, जलमार्ग, पनियाला, पनघट, पनचक्की, हवा-पानी, पानीदार, पानी उतर गया, आबहवा, आबदार, आबरू, मोतीकी आब आदि।

ये सभी अच्छी हिन्दीमें चलते है। इसीका नाम समन्वय है। भाषा-

मे एक-नियमता कट्टर-पन्थीपन उतना ही हानिकारक है, जितना कि वह धर्म और आचारमे होता है ।

यह बात नही है कि पारिभाषिक शब्दो तथा दूसरे शब्दोके जो अनुवाद या समानक हिन्दीमे स्थिर हुए है, वे सब अटपटे और बेतुके ही है । ऐसा कहना भूल ही न होगी, बल्कि उनको नियत करनेवालोके प्रति अन्याय भी होगा । जो विद्वान्, पत्रकार, प्रसार-विभागवाले या सरकारी विभाग शब्द-रचनाके काममे लगे हुए है, वे भाषाके क्षेत्रमे एक महान् रचनात्मक काम कर रहे है और भाषा तथा देशकी बडी सेवा कर रहे है ।

शब्दोके अनुवादमे हमारी वर्तमान कठिनाइयोके अतिरिक्त एक बाधा और है—वह है अनुवादोंके प्रति हमारी उपेक्षा या निरादर भाव । हम अनूदित पुस्तकोको मौलिक पुस्तकोसे घटिया या कम महत्त्वकी समझते है । दोनो प्रकारके साहित्यका अपना स्थान है, दोनोका अलग-अलग महत्त्व है । ससारकी हर भाषामें अच्छेसे अच्छे ग्रन्थरत्न हैं, महान् और जीवनदायी विचार है । ससारकी सभी समुन्नत भाषाओमें उन्नत भाषाओके पुरानेसे पुराने और नयेसे नये श्रेष्ठ ग्रन्थो और पुस्तकोके अनुवाद शीघ्रमे शीघ्र प्रकाशित होते रहते है । और वे भी मूल-भाषासे । पर हमारे यहाँ हिन्दीमें तथा दूसरी आधुनिक भारतीय भाषाओमें ससारकी श्रेष्ठ कृतियोके अनुवाद बीस-पच्चीस वर्ष या उससे भी पीछे होते है और वह भी उनके अनुवादोसे युरॅपीय मूल भाषामें-से तो बहुत ही कम अनुवाद हुए है हिन्दोमें अभीतक । हर्ष है कि यूनेस्को और साहित्य अकादमो इस कार्यकी ओर अब अग्रसर है । बुकट्रस्ट भी इस दिशामें कुछ ठोस काम करेगा, ऐसी आशा है ।

शब्दोके अनुवाद करने या समानक स्थिर करनेमे नीचे लिखी कुछ बातें ध्यानमे रखने योग्य है—

१ दूसरी भाषाओके शब्दोका हिन्दी अनुवाद करने या समानक

स्थिर करनेका काम वे विद्वान् ही करें जो हिन्दीके साथ-साथ उस भाषा-के भी अधिकारी विद्वान् हो, अर्थात् उनका दोनो भाषाओपर पूरा अधिकार हो ।

२ दोनो भाषाओपर अधिकार होते हुए भी उस विद्वान्को उस विषयका भी विद्वान् होना चाहिए जिस विषयके ग्रन्थका अनुवाद वह कर रहा है । किसी भाषाका अच्छा ज्ञान होना एक बात है और किसी विषयका ज्ञान होना बिलकुल दूसरी बात है । अर्थात् अँगरेज़ीसे रसायन विज्ञान, गणित आदिके शब्दोके अनुवाद करने या समानक स्थिर करनेका काम वे विद्वान् ही हाथमे लें जो रसायन विज्ञान, गणित आदिके विद्वान् होनेके साथ हिन्दीके भी विद्वान् हो ।

३ आम तौरपर विदेशी साधारण (General) पारिभाषिक शब्दका अनुवाद भी साधारण हिन्दी पारिभाषिक शब्दमे अनुवाद करना काफी होगा । इस नियमका उल्लघन केवल चार हालतोमें ही किया जा सकता है (अ) मूल विदेशी शब्दके अर्थकी झलक साधारण हिन्दी पारिभाषिक शब्दसे स्पष्ट न हो, (आ) उस वस्तु या भावका गलत गुण प्रकट किया गया हो जैसे, मलेरिया (Malaria) का शब्दानुवाद दूषित हवा ठीक न होगा अथवा रेड इण्डियन (Red Indian) का अनुवाद लाल भारतीय या हिन्दुस्तानी करना बिलकुल गलत होगा, (इ), विदेशके, पौराणिक शब्दो या रीति-रिवाजसम्बन्धी विशेष शब्दोका अनुवाद करना कठिन ही नही असम्भव भी है । जैसे, अँगरेजोका बेपटाइज (Baptise) और अरबो कलमा पढना आदिके अनुवादका प्रयत्न बेकार ही होगा, (ई), जब कि विदेशी साधारण पारिभाषिक शब्दोंके मुकाबलेपर हिन्दीमें कोई साधारण पारिभाषिक शब्द न बन सके, जैसे अल्यूमिनियम, रेडियम, प्लैटिनियम आदि ।

४ शब्दोके रूप और अर्थ बदलते रहते है । एक शब्दका कई तरहसे विकास होता है और एक ही शब्दके समय-समयपर अर्थ बदलते रहते

है, या एक ही शब्दके कई-कई अर्थ होते है, या भिन्न-भिन्न विषयोमे वह शब्द भिन्न-भिन्न पारिभाषिक अर्थोमे प्रयुक्त होता है। हिन्दीमें ऐसे शब्दो-का अनुवाद बडी सावधानीसे करना चाहिए। अँगरेजी शब्द (सख्या वाचक) ग्रुसके लिए एक सौ चौवालीस शाब्दिक अर्थ या प्रद्वादशक (बारह दर्जन) नया शब्द न देकर लोक प्रचलित 'ग्रुस' ही देना अच्छा है। इसी प्रकार कान्स्टेब्ल (Constable) मार्शल (Marshal) और 'बजट' एव फीसके शब्दार्थोकी जगह उन्हीको अपना लेना समीचीन है। अमेजन नदीका अनुवाद 'वीरागना नदी' करना उतना ही गलत है, जितना कि हिन्दी 'आचार्य'का प्रोफेसर। आजके पाखण्डीका अनुवाद भी इसके पुराने शब्दार्थके आधारपर करना गलत होगा। विदेशी भाषाओके एक शब्दके अनेक अर्थोको भी हिन्दीके एक ही शब्दके द्वारा प्रकट करना असम्भव है। इसलिए अलग-अलग अर्थोके लिए अलग-अलग शब्द स्थिर करना चाहिए। अनूदित शब्दोमे विदेशी शब्दोके भावार्थोकी रक्षा पूरी तरह होनी चाहिए।

५ समानक स्थिर करनेमे एक और बातका ध्यान रखनेकी आवश्य-कता है। हमे शब्दोकी सहायतासे शब्द नही ढूँढना चाहिए, बल्कि विदेशी शब्दोके अर्थों धारणाओ या भावो (ideas, concepts) की सहायतासे हिन्दीमे उन्ही अर्थो या भावोको बतानेवाले शब्दसे ढूँढना चाहिए। उससे शब्द मिलनेमे आसानी होगी।

६ शब्दोका अनुवाद करने या समानक स्थिर करनेमें पहला स्थान हिन्दीके प्रचलित शब्दोको देना चाहिए, दूसरा स्थान आधुनिक भारतीय भाषाओके शब्दोको, तीसरा स्थान जनपदीय बोलियोके शब्दोको और अन्तिम स्थान सस्कृतको।

७ साधारण शब्दका अनुवाद जहाँतक हो सके, साधारण शब्दसे और समस्त पदका अनुवाद समस्त पदसे ही किया जाना चाहिए। एक साधारण शब्दके लिए हिन्दीमे तीन-चार शब्दोका समस्त पदसे अनुवाद

करना ठीक नही है। हो यही रहा है, जैसे कि थर्मामीटरका तापमापक यन्त्र, कम्पासका दिशासूचक यन्त्र आदि। यदि इनमें-से 'यन्त्र' शब्द निकाल दिये जायें तब भी शब्द छोटे बन जायेंगे। इससे हिन्दी शब्दो-को बोलने-लिखने और छापनेमें अधिक समय, श्रम और कागज़ आदि न लगेंगे।

८ अन्तर्राष्ट्रीय सस्थाओ, नामो या भिन्न-भिन्न देशोके सिक्को और फौज़ी, धार्मिक या सरकारी पदोका अनुवाद बहुत सोच-समझकर करना चाहिए। जहाँ अनुवाद करना अनुचित हो, वहाँ वह नाम ज्योका त्यो या कुछ वर्ण-विकासके साथ दे देना चाहिए। यू० एन० ओ०, यूनेस्को, पौण्ड, रुबल, लिरा, फ्रांक (सिक्कोके नाम) आदि ज्योके त्यो ही रहने चाहिए। ज़ार (रूस), मिकाडो (जापान)। शाह (ईरान) आदि पदवी बोधक शब्द भी यो ही रहने चाहिए। सयुक्त राज्य अमेरिकाके प्रेजीडेण्टको हम 'राष्ट्रपति' नही कह सकते, क्योकि राष्ट्रपति भारतके राष्ट्रप्रधानके लिए हिन्दी शब्द स्थिर किया गया है। शब्दोके समानक स्थिर करनेमें ऊपर लिखी बातोका ध्यान रखनेसे वे गलतियाँ न होगी, जो आजकल हो रही है।

●

तेरहवाँ परिच्छेद

वर्णोंके उलट-फेरसे नये शब्द

नये-नये शब्द बनानेकी एक बडी विधि पुरानी या दूसरी भाषाओंके शब्दोके वर्णों (स्वरो, व्यजनो या अक्षरो) मे विपर्यय, उलट-फेर, अदला-बदली या विकार होना है। किसी शब्दमें नये वर्णके आ जाने, पुराने वर्णके स्थान बदल लेने या लोप हो जाने या दो वर्णोंका एक-सा रूप या विषम रूप धारण कर लेनेको ही *वर्ण-विपर्यय* (*Metathesis*) कहते है। नाटकोकी भाषामे शब्दोके इस रूप-परिवर्तनको वहुरूपियापन कहा जा सकता है।

यह वर्ण-विपर्यय भाषाके विकासमे बहुत महत्त्वपूर्ण काम करता है। वर्णोंके हेर-फेरके कारण शब्दोंके रूप बदल जाते है, एक-एक शब्दके कई-कई दो-दो, तीन-तीन, चार-चार आदि रूप हो जाते है, और फलस्वरूप उनके अर्थ भी बदल जाते है। और फिर उन अनेक रूपोसे शब्दरचनाके नियमोके अनुसार आगे बहुत-से शब्द बनते है। यदि यह वर्ण-विपर्यय न हो, तो भाषाकी गति रुक जाये, शब्दोंके अर्थमे सन्देह पड जाये, सहस्रो नये शब्द बनानेका झझट करना पडे, और कठिन हो जाये। एक भाषाके शब्दोका दूसरी भाषामे रच-पचकर उसका अग बनना तथा उस भाषाकी वृद्धिमे सक्रिय सहयोग देना। नयी, प्रगतिशील, उदीयमान और विकास-शील भाषाएँ इसी वर्ण-विपर्ययसे अपने शब्द-समूहको बढाती है। प्राचीन भाषाओंने भी ऐसा ही किया। सस्कृतने सहस्रो प्राकृत शब्दोका सस्कार करके अपना शब्द-कोश बढाया। प्राकृतोंने भी यही किया। अपभ्रश-

वालोने सस्कृत शब्दोका रूप वदलकर ही एक साहित्यिक भाषा बना दी। अँगरेजी, फ्रेंच, फारसी, अरबी और चीनी आदिमे ऐसा हुआ। स्वय सस्कृत शब्द, अँगरेज़ीमे ऐंग्लीसाइज्ड (Anglicised) शब्द और अरबीमे मुअर्रब शब्द यही बताते है कि हम रूप बदले हुए या दीक्षित शब्द है। आदि हिन्दीवालोने भी ऐसा ही किया था, हिन्दीमे अब भी ऐसा हो हो रहा है और आगे भी ऐसा बहुत अधिक करना पडेगा।

इसी प्रसगमें वर्णसे स्वर, व्यजन और अक्षर (Syllable) लिए जाते है, न कि केवल स्वर और व्यजन। इस प्रक्रियामे वर्णोके आने (वर्णागम), निकल जाने (वर्णलोप), उलटने (वर्ण-विपर्यय) और बदलने (वर्ण-विकार) से चार भेद होते है।

वर्णागममें स्वर और व्यजनके आगम मुख्य है। ये तीन ढगसे होते हैं। १ शब्दमें पहले, २ बीचमें, या ३. आगे। ४ स्वरागम — (क) शब्दके पहले स्वर आना, जैसे—अस्कूल, अस्टूलमे या स्नानको असनान कहना। यूनानके प्रसिद्ध दार्शनिक प्लैटोका नाम अरबोके माध्यम-से इसी प्रकार अफलातून बनकर हिन्दीमे आया है। हम बोलते भी है, 'आप क्या अफलातून है'? इसमे स्वर 'अ' पहले आनेके अतिरिक्त और भी वर्ण-विकार हुआ है। (ख) शब्दके बीचमे स्वर आना, जैसे—ट्रामको टराम, धर्मको धरम, पर्वको परब, प्रसादको परसाद कहना। कितने आदमी है जो प्रमादको परसाद नही बोलते, पर लिखनेमे प्राय प्रमाद ही लिखा जा रहा है। (ग) शब्दके आगे स्वर आना हिन्दीमे सब शब्दोंके अन्तमे स्वर होता है। सब हलन्त सस्कृत तत्सम शब्दोके आगे पहले ही प्राय अ स्वर जोड दिया जाता है। इसलिए हिन्दीमे शब्दोके अन्तमे स्वर आनेका प्रश्न नही उठता। यद्यपि बोलनेमे सुविधाके लिए अन्तिम अकारको प्राय नही बोला जाता। अँगरेज़ीमे जब ऐसे शब्दोका उच्चारण स्वरान्त किया जाता है तो वह दीर्घ हो जाते है जैसे, रामा,

कृष्णा, शुक्ला, मिश्रा आदि। यह गलती अन्तमे a जोडनेसे होती है। हिन्दीमें भी यह भूल होती है, जैसे—अँगरेज़ी 'मार्क' (Mark) का हिन्दीकरण 'मारका' (छाप)। २ व्यजनागम (क) शब्दके पहले व्यजनका आना जैसे, औरगाबादका नौरगाबाद हो जाना। (ख) शब्दके बीचमें नया व्यजन आ जाना जैसे, अँगरेज़ी डजन (Dozen) को 'दरजन' बना लिया गया। (ग) शब्दके आगे व्यजन जुडना जैसे, दक्षिणी भाषाओंमें राधाकृष्णका राधाकृष्णन, रामका रामन् तथा सुन्दरका सुन्दरम् बन जाता है। अँगरेजी बन (bun) शब्द हिन्दीमे बन्द बन गया है। यह एक छोटी-सी रोटी होती है और दूध चायके साथ खायी जाती है।

वर्णोंमें अदला-बदली :

(वर्ण-विपर्यय) यह भी शब्दोके स्वरो तथा व्यजनोमे होता है।

१. स्वरोमें अदला-बदली (अ) यह पासके स्वरोंमे होती है—जैसे 'कुँअरजी'को कँउरजी, कुछका कछु, जानवरका जनावर आदि, (आ) शब्दके दूरके स्वरोंमें उलट-फेर, जैसे अँगुलीका उँगली, जनरल (General) को जरनैल, पागलका पगला, बिन्दूका बूँदी (बूँद भी) आदि।

२. व्यजनोंमें अदला-बदली यह भी दो तरह होती है—'(अ) पासके व्यजनोका आपसमे बदल जाना, जैसे चिह्नसे चिन्ह, डेस्कसे डेक्स, मतलबसे मतबल, सिगनलसे सिगल आदि। (आ) दूरके व्यजनोका आपसमे बदल जाना, जैसे लखनऊको नखलौ।

३ अक्षर-विपर्ययका सबसे बडा उदाहरण काशीके पहले नाम वाराणसीका बनारस होना है। यह नाम खूब चला और चल रहा था पर अब उत्तर प्रदेश सरकारने अपनी आज्ञासे बनारसकी शुद्धि करके फिरसे 'वाराणसी' जारी कर दिया है। अब काशी, बनारस और वाराणसी तीन नाम हो गये है।

वर्णलोप

किसी शब्दमे-से स्वर या व्यजनके निकल जानेको वर्ण-लोप कहते है। प्राय कुछ शब्दोके पहले, बीचके या अन्तके स्वर या व्यजनका लोप हो जाता है और शब्दके नये रूप चालू हो जाते है या बोलचालमें स्थान पा लेते है।

१ स्वरलोप : (अ) शब्दके आरम्भके स्वरका निकल जाना, जैसे अबेलाका बेला, अनाजका नाज, अफीमका फोम, अमावसका मावस, आसाढका साढ तथा फारसी आबखोरा (गिलास) का बखोरा आदि। (आ) बीचके स्वरका लोप, जैसे फारसी ज़ियाद का ज्यादह् (ज्यादा भी) आदि। (इ) शब्दोके अन्तिम स्वरका लोप, जैसे रीतिसे रीत, दयालुसे दयाल, भानुसे भान (सूरजभान, चन्द्रभान) आदि।

२ व्यजनलोप (अ) शब्दके आरम्भके व्यजनका निकल जाना, जैसे स्थलसे थल, (प्रयोग वर्षाके कारण जल-थल एक हो गया है), स्थानका थान, हृषीकेशका ऋषिकेश आदि (थान अब प्राय थान –घोडा बाँधनेके स्थानके लिए आता है।) (आ) बीचके व्यजनोका लोप, जैसे कायस्थसे कायथ, कोकिलसे कोइल, दुगनासे दूना, पचसेरी पनसेरी (च का लोप और अनुस्वारका सस्वर नकार होना, ब्राह्मणसे बाह्मण, मातासे मा (माँ भी) आदि। (इ) शब्दके अन्तके व्यजनका उड जाना, जैसे अँगरेज़ी रस्क (Rusk) शब्द 'क' के लोपके पश्चात् 'रस' बनकर हमारे यहाँ चलता है। और रेस्तोरॉमे ही नही, सडकोपर भी चायके साथ लोग 'रस' खाते है। साहित्यके छह रसो, गन्ने आदिके रसके साथ यह एक और 'रस' शब्द हिन्दीमे आ गया, जो भिन्नार्थक शब्दका एक अच्छा उदाहरण है। अँगरेजी बॉम्ब (Bomb) का हिन्दीमे बम रह गया है।

उपसर्गो तथा प्रत्ययोके विकासमे भी वर्णलोपने बडा काम किया है।

वर्णोंमें विकार या विगाड़

इसे वर्ण-विकार (डिस्सिमिलेशन) कहते हैं। यह भी स्वरो तथा व्यजनोका होता है। पर हिन्दीमे सस्कृत तत्सम शब्दोसे तद्भव शब्द बनने या बनानेमे व्यजनोका रूप वदल लेना वडे महत्त्वकी क्रिया है। इससे हिन्दीमे सस्कृत शब्दोके दो-दो, तीन-तीन और चार-चार रूप चालू हो गये हैं, और मजा यह है कि उनके अर्थ भी अलग-अलग है। कभी-कभी सस्कृत शब्द एक अर्थमे आता है तो हिन्दी शब्द दूसरे अर्थमें आता है ? जैसे स्तन (स्त्रीका) और थन (पशुका), सम्बन्धित (सामान्य शब्द) और इससे बना समधी जो वर-वधूके पिताओके आपसी नातेको प्रकट करता है इसी समधीसे वनते है समधिन और समधियाना। वर्ण-विकारके और भी बहुत से उदाहरण आगे दिये जायेंगे।

शब्दोके वर्णोकी उलट-फेर, अदला-बदली और रूप-परिवर्तनके अनेक कारण हैं, जैसे शब्दमें वर्णोंके स्थानोकी समानता, बोलनेके प्रयत्नकी समानता, शब्दोको छोटा करके बोलनेका प्रयत्न, भिन्न-भिन्न देशोकी जनताके गले और कण्ठ आदिकी बनावटमें भेद, शब्दोको बोलने या सुननेमें जाने-अनजाने भूल हो जाना या अनाडीपन, हर-एक भाषाको अपनी वर्णमाला अलग होना, शब्द बोलनेमें पण्डिताई दिखाना और दूसरी भाषाओके शब्दोको अपनी भाषाके साँचेमे ढालनेकी इच्छा, तथा किसी शब्दको मनोरजन या चिढके कारण विगाडकर बोलना आदि अनेक कारण है। अरनैस्ट वीक्लीका मत है—"जनताके प्रयोगमे सब शब्दोकी प्रवृत्ति सिकुडनेकी ओर होती है"।[1] एक और प्रसगमें जान बीम्सने लिखा है—"आदमीका मस्तिष्क भाषाको औज़ार या साधन बनाकर अपने लिए ऐसी ध्वनियाँ बना लेता है जो कि उसकी आवश्यकताओको व्याकरण तथा निरुक्तका ध्यान दिये विना पूरी कर देती है। इसलिए, उनके ऐसा

[1] Romance of Words, पृ० ५२।

करनेका कारण ढूँढनेका प्रयत्न करनेकी अपेक्षा यह बताना अधिक लाभ-दायक और रोचक होगा कि भाषाएँ क्या-क्या रूप बना लेती है।"[1]

शब्दोका यह रूप-परिवर्तन कौन करता है? साहित्यकार या जनता? इस प्रश्नके उत्तरमे श्री किशोरीदास वाजपेयी लिखते है—"शब्द विकास साधारण जनतामे हुआ करता है, पढे-लिखे लोग तो ज्योका त्यो उच्चारण किया करते है।"[2] जब जनतामे शब्दोके बदले हुए रूप खूब चल पडते है, तब पढे-लिखे आदमियोंको भी बेबस होकर जनतासे बातचीत करनेके लिए उनकी ही भाषामे यानी विकसित शब्दोमे बातचीत करनी पडती है या लिखकर समझाना पडता है। इस प्रकार वे शब्द विद्वानोकी भाषामे स्थान पा लेते है। फिर कोशकार उन्हे व्याकरणकी छलनीमे छानते है और उनको नियमोमे बाँधकर तथा वर्गीकृत करके कोशोमे स्थान देते है।

वर्ण-विपर्ययसे बने हुए शब्द प्रचलनकी कसौटीपर घिस, मँज और सुधरकर निखरा हुआ रूप धारण करते है, तब कही वे टकसाली शब्द बनकर भाषामे स्थान पाते है। शब्दोको जनताकी कठोर अग्नि-परीक्षामे-से गुजरनेमे बहुत समय लगता है। इस काममे दस-बीस वर्ष बीतना तो साधारण बात है। नये शब्दोके रूपो और उनके अर्थ-भेदोको जनताके मनमें बसने या उन्हें समाजके मनोवैज्ञानिक ढाँचेमे स्थान पानेके लिए समय चाहिए। विद्वानोके द्वारा चालू किये हुए नये शब्दोको भी जनता इसी प्रकार अपनाती है। यदि देखा जाये तो भाषाके क्षेत्रमे ही सच्चा जनतन्त्र है, जनताका राज है, जनताकी इच्छा प्रधान है।

हिन्दीमे वर्णोके उलट-फेरसे जो नये शब्द बने है, उनके अर्थ सदा असन्दिग्ध रहते है, चाहे एक शब्द कितने ही रूपोमे पलटा हो। संस्कृत क्षीर (दूध) से तद्भव खीर शब्द बनाया गया, पर वह दूधमे चावल डालकर पकाये हुए प्रसिद्ध भोजनका ही नाम है। संस्कृत सौभाग्यसे

---

१ कम्पेरेटिव ग्रामर भाग २, पृ० ११५।

२ हिन्दी निरुक्त, पृ० ५६।

सुहाग, दुर्भाग्यसे दुहाग, मेघसे मेह तथा मुखसे मुँह बने। इनके अर्थ अलग-अलग है। सुहागसे सुहागिन, सुहागी तथा दुहागसे दुहागिन (विधवा, सुहागिनका उलटा) भी बन गये। सुहागी विवाहमें सुहागके लिए जाने-वाली वस्तुओंको कहते है।

हिन्दीमें परसो शब्द भूतकालमे गत कलसे पहले दिन और भविष्य कालमे आगामी कलसे अगले दिनके लिए प्रयुक्त होता है। यह 'परसो' शब्द सस्कृत 'परश्व' शब्दके 'श' को 'स' और 'व' को 'ओ' बननेसे प्राप्त हुआ है। परन्तु सस्कृतमे 'परश्व' केवल आगामी परसोके अर्थमें ही आता था किन्तु हिन्दीमे 'परसो'को ही भूत तथा भविष्यत् दोनो कालोमे प्रयोग होता है। हिन्दीके शब्दोके अर्थोंकी असन्दिग्धताके सामान्य-नियमका अपवाद-स्वरूप है यह पर इस एक ही शब्दको दो अर्थोंमें प्रयोग करनेसे कोई कठिनाई या सन्दिग्धता भी अनुभव नही होती, सन्दर्भ या प्रसंगसे अभिप्रेत अर्थ समझनेमें किसीको तनिक भी कठिनाई मालूम नही होती। आगे चलकर इसी 'परसो' शब्दके ढर्रेपर 'तरसो' तथा 'नरसो' बन गये। जो दोनो कालोके लिए क्रमसे चौथे और पाँचवें दिनोंके लिए प्रयुक्त होते है। इससे एक ही शब्दमें वर्ण-विपर्यय तथा अर्थ-विस्तार और फिर उसकी सदृशतापर बने शब्द हिन्दीमें चलते है। निस्सन्देह इस समस्त प्रक्रियामें पर्याप्त समय लगा होगा। साधुसे साहु बना जो सेठके अर्थमे प्रयुक्त होता है, परन्तु जैनोमें साहु शब्द साधुके अर्थमे उनके नमस्कार मन्त्रमें आता है, जैसे 'नमो लोए सव्व साहूनाम्' मे। महात्मा बुद्धकी मूर्ति ईरानमे जाकर 'बुत' कहलाने लगी और वहीसे सस्कृत बुद्धका फारसी 'बुत' बनकर मूर्तिके अर्थमे यहाँ आया, न कि बुद्धके अर्थमे। हमारा अपना ही शब्द केवल बाहरकी हवा लगनेमे उसके मूल देशमे विदेशी बन गया। अँगरेज़ीमें गार्ड शब्दका अर्थ 'रेलका गार्ड' और 'चौकसी करने या पहरा देनेवाला।' हिन्दीमे इसके दो रूप चलते हैं, गार्ड और गारद। गार्ड रेलका होता है, और गारद पाँच-सात सिपाहियोकी टुकडो होती

है, जो पहरेके लिए कही भी बिठायी जा सकती है। जान वीम्सने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'कम्परेटिव ग्रामर'के पहले खण्डमें और श्री किशोरीदास वाजपेयीने अपनी 'हिन्दी निरुक्त'मे शब्दोमें वर्ण-विपर्ययके बहुत-से उदाहरण दिये है।

स्वरोके विपर्ययके कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण ये भी है —विभूतिसे बभूत, वायुको वाई, विन्दुको बिन्दी और बूँद, उपाध्यायसे ओझा और फिर ओझासे ओ का लोप होकर झा ही रह गया। गावोमे इमीको 'पाधा' भी कहते है। इसी तरह चामरसे चमर (चँवर और चाँरी भी) और देवालयसे देवल बन गये। ऋ का रि बनाकर हिन्दीमे प्रचलन हुआ है जैसे, ऋतुसे रितु और रुत, ऋपभको रिपभ। जॉन वीम्सने लिखा है कि जिन भाषाओकी वर्णमालाएँ पण्डितो-द्वारा दोबारा नही बनायी गयी है, उनमे सस्कृत 'ऋ' का कोई स्थान नही है। शब्दोके साथ जुडी ऋ के भी अनेक रूप हो गये हैं जैसे घृतका घी शृगका सीग, वृक्षका रूख, कृष्णका किसन (कान्ह, कन्हाई और कन्हैया और कनु) के वर्ण-विपर्ययकी प्रक्रिया दूसरी ही जान-पडती है)।

व्यजनोमे भी वर्ण-विपर्यय खूब होता है। तत्सम और तद्भव शब्दोमे आदि व्यजन ज्योके त्यो रहते हैं, पर वाष्पसे भाप आदि कुछ शब्द अपवाद रूपसे आते है। वर्गोके पहले अक्षरको उसी वर्गका तीसरा अक्षर बन जानेके बहुत-से उदाहरण हैं, जैसे—काक-से काग, विकारसे बिगाड, शाकसे साग, कीटसे कीडा, घटसे घडा आदि, प का व बनता है, जैसे—तापसे ताव, कपाटसे किवाड, य का ज होता है, जैसे आश्चर्यसे अचरज, आचार्यसे अचारज, योगीसे जोगी, कार्यसे काज, यमुनासे जमुना, यन्त्रसे जन्तर। स को प्राय ह होता है, जैसे मसजिदसे महजिद, सिन्धुसे हिन्द, प का ख बनता है, जैसे वर्षासे बरखा, विपसे विख, क्ष के ख, छ और च्छ बन जाते है, जैसे इक्षुसे ईख, क्षत्रीसे खतरी (खतरी हिन्दुओकी एक जाति भी है), क्षेत्रसे खेत, सस्कृत पक्षके पख (पन्द्रह दिन) और पख दो

रूप बने और उनके अर्थ भी अलग-अलग है। पखमे पखवाडा और पखसे पखी और पछी बने हैं। पर पाखा चरखेका होता है और पँखडी फूलोकी होती है। इस प्रकार पक्ष शब्दका कई प्रकारसे विकास हुआ, पख, पख, पखी, पँखुडी, पाखा आदि, इसी प्रकार क्षमासे छमा, क्षोभसे छोह, लक्ष्मणसे लछमन तथा लखन, लक्षणसे लच्छन बने है।

बोलियोमे भी व्यजनोका विकास अपने ढगसे हुआ है। हरियानेकी बोलीमे त्र को ड होता है, अडै (अत्र), कडै, (कुत्र), उडै (उत्र)। वहाँ बोलते है—कडै गया था ? उडै गया था। अेडे ही था, आदि।

विसर्गोको हिन्दीवालोने उडा दिया है। इने-गिने सस्कृत पढे व्यक्ति ही इनका प्रयोग करते हैं, पर यह हिन्दोकी प्रकृति और सघटनके अनुरूप नही हैं। इसो प्रकार 'ङ' और 'ञ' 'ण' और 'न' का काम भी हिन्दीमे अनुस्वारसे लिया जाता है। 'ण' आधुनिक हिन्दीमे और मराठी आदि भारतीय भाषाओ तथा राजस्थानी आदि बोलियोमे चलता है, पर उसके स्थानपर 'न' का प्रयोग पुरानी हिन्दीमें अशुद्ध नही माना जाता था।

हिन्दीके समासोमे हुए वर्ण-विपर्ययके उदाहरण समासोवाले परिच्छेदमे दिये जा चुके है। कुछ उदाहरण प्रसगवश यहाँ दिये जाते हैं, जैसे अधमरा (आधासे), कनकटा (कानसे), खटमिट्ठा (खट्टासे), घसखुदा, छुटभैया (छोटासे), नकटा (नाक + कटासे), पनचक्की (पानी), पनसेरा, हडताल (हट + ताल) आदि ।

हिन्दीमें विदेशी शब्द सस्कृत शब्दोके समान या तो अपने मूल रूपमें आये है, या वर्णोंके उलट-फेर तथा लोप आदिके साथ आये है। इसके बहुत-से उदाहरण विदेशी शब्दोके प्रसगमे दे दिये गये है। अरबी, फारसी तथा अँगरेज़ी आदि शब्दोको हिन्दी वर्णमालाकी ध्वनियोके साँचेमें ढालकर उन शब्दोका अनेक तरह विकास किया गया है। हिन्दीके उपसर्गों तथा प्रत्ययोकी सहायतासे और समासोसे अनेक शब्द बनाकर भाषाको समृद्ध बनाया है। जनता और विद्वानोने इस विषयमें एक ही नीतिसे

काम लिया है। उन्होंने अस्पताल, अरदली, इस्तरी, कनस्तरी, कप्तान, गरीब, गारद, गोदाम, जरनैल, टमाटर, बोतल, मसीत या महजद, वास्कट आदि अनेक शब्द बनाये हैं। विदेशी शब्दोंका इस दृष्टिसे और भी अधिक अध्ययन होना चाहिए।

वर्णोंके उलट फेरसे बन नये शब्दोंके प्रति शिक्षित समाजका कुछ अनादर भाव रहा है। इस मनोवृत्तिका उल्लेख अचारज, थन, जोगी आदि शब्दोंके प्रसंगमें किया जा चुका है। इनके तत्सम रूप आचार्य, स्तन तथा योगी ही समादृत माने जाते हैं। केलाग महोदयने भी इस मनोवृत्तिकी ओर संकेत करते हुए कहा है "बातचीतमें जब विशेष समादर प्रकट करनेकी इच्छा हो या कवितामें उच्च शब्दावलीका प्रयोग करना इष्ट हो तो साधारण हिन्दी क्रियाओंकी अपेक्षा संस्कृत संज्ञाओं या कृदन्त शब्दोंके पीछे होना, करना आदि प्रत्यय लगाकर प्रयोग करना चाहिए, जैसे देखना, खाना, जाना, चला जानाके स्थानपर दर्शन करना, भोजन करना, गायन करना और प्रस्थान करना आदि।"[1] हम देवालयोंमें या बड़े आदमियोंके दर्शन करने जाते हैं, और छोटे आदमियों या रोगियोंको देखने जाते हैं। यह मनोवृत्ति उस समय पैदा होती है, जब कि समृद्ध या बड़ी भाषाके सामने नयी भाषा जन्म ले रही हो या नयी भाषा और उसके शब्दोंको अनादर भावमें देखा तथा पुकारा जाता हो। पर क्या आज भी हिन्दी शब्दोंके साथ वही व्यवहार किया जायेगा या होगा जो पहले हुआ था। क्या यह हिन्दीके प्रति अश्रद्धा और गैर वफादारी और अनादरका व्यवहार नहीं है? आजकी आवश्यकता यह है, कि वर्ण विपर्ययमें बने हिन्दी शब्दोंको मूल शब्दोंसे किसी प्रकार भी नीचा या अनादरणीय न समझा जाये।

---

१. ग्रामर ऑव हिन्दी, लैंग्वेज, पृ० २७१।

आज जब कि देशको सहस्रों नये शब्दोंकी आवश्यकता है और बडे-बडे विद्वान् तरह-तरहके शब्द बना रहे हैं, तब हम वर्ण-परिवर्तनकी विधिसे नये शब्द क्यों न बनायें? वास्तवमें, संस्कृत तथा हिन्दीके पारगत बीस तीस विद्वानोंको लगकर संस्कृत शब्दोंके तद्भव रूपोंके कोश तैयार करने चाहिए। जनपदीय शब्दोंसे भी इसी ढंगसे नये शब्द तैयार किये जा सकते हैं। संस्कृत शब्दोंको ज्योंका त्यों अपनाया जाये तो अपढ और अल्पशिक्षित जनता उनसे अधिक लाभ न उठा सकेगी, और हिन्दी शब्द-रचनाका मार्ग भी रुक जायेगा। तद्भव शब्दोंके साथ उपसर्गों, प्रत्ययों और समासों या वर्णविकारसे नये शब्द बनाये जा सकेंगे जो हिन्दीकी वास्तविक अभिवृद्धिके सूचक होंगे। काम कठिन अवश्य है, पर करने-का है। हिन्दीवालोंकी सफलताका मापदण्ड यही होगा कि वे कितने संस्कृत, पाली, प्राकृत, जनपदीय तथा विदेशी शब्दोंको हिन्दिया कर पचा सकते हैं।

•

चौदहवाँ परिच्छेद

अर्थ-परिवर्तनसे नये शब्द

भाषा सदा बदलती रहती है और इसके साथ शब्दोंके अर्थ भी बदलते रहते हैं।

—मोरियोपाई

भाषाके विकासमे पुराने शब्दोंके अर्थमे विकास होना अर्थात् उनके अर्थमे फैलाव, संकुचाव, ऊँचता, नीचता तथा विशिष्टता आदि होना भी एक बडे महत्त्वकी बात है। पुराने शब्दोंका रूप बदलकर उन्हे नया अर्थ देना तो वर्ण-विपर्ययके अन्तर्गत आ जाता है, पर जब पुराने शब्दोंके अर्थ, वर्ण-विकारके बिना ही कुछ या सर्वथा बदल जाते है, तब वे नये शब्द ही माने जाते है। इस विधिमे नये शब्द तो नही बनते, पर पुराने शब्दोंके अर्थोंमें विकास हो जाता है। कभी-कभी एक ही आदमी-से कई काम लिये जाते है, तब वह आदमी तो एक ही रहता है, पर काम अलग-अलग देता है। शब्दो का भी ऐसा ही हाल होता है। बस इसी अर्थ-परिवर्तनका नाम अर्थ-विकास है।

भाषा वैज्ञानिकोंके मनमे शब्दोंके अर्थके सम्बन्धमे अनेक प्रश्न उठे। शब्द क्या है? शब्द कितने प्रकारके होते है? अर्थका भी अर्थ क्या (meaning cf meaning) होता है? यह अर्थ कैसे बनता है और कैसे पक्का होता है? शब्दोंके अर्थमे किन-किन ढगोंसे तथा किन-किन कारणोंसे हेर-फेर होता है? इस अर्थ-विकासका आधार क्या है? भाषा-पर इस अर्थ-विकासका क्या प्रभाव पडता है? जनता साहित्यकार,

कवि, लेखक, वक्ता, अनुवादक तथा श्रोताके लिए इस अर्थ-विकासका ज्ञान क्यो आवश्यक है ? इन तथा इन-जैसे ही प्रश्नोका उत्तर भी भाषा विज्ञानकी एक शाखा सविस्तार, युक्तिपूर्ण, तार्किक तथा दार्शनिक ढगसे उदाहरण सहित देती है। भाषाविज्ञानकी इस शाखाका नाम अर्थ-विज्ञान (Sematology) है। यद्यपि अर्थ विज्ञान नया है, पर युरॅपके विचारकोने जी-जान लगाकर पिछले कुछ वर्षोमे इस विज्ञानकी बडी उन्नति की है।

हिन्दीमे अर्थ-विज्ञानसम्बन्धी साहित्य न होनेके बराबर है, फिर हिन्दीमे आनेवाले शब्दोके अर्थपर वैज्ञानिक दृष्टिसे विचार करनेवाले साहित्यका होना तो बहुत बडी बात है। हमारे यहाँ इस कामके लिए इतनी सामग्री और इतना बडा क्षेत्र है, कि सैकडो विद्वान् भी इस कामको करें तो बीसियो वर्षमे भी यह काम पूरा न हो।

यहाँ अर्थ-विकाससे सम्बन्ध रखनेवाली कुछ बातो, अर्थ-विकासके भेदोको उदाहरण सहित और नये शब्द बनानेमें इस विषयका उपयोग आदि बताना ही इष्ट है।

लिखित सकेत, हाथ-मुँह आदिके इशारे और लिखे या बोले हुए शब्द सभीका अर्थ होता है, जो इनसे अलग नही होता। सकेतो, इशारो तथा शब्दोको देख, सुन तथा पढकर ही हम उनके अर्थ समझ लेते है। विज्ञानो तथा गणितके सकेतोका अर्थ तो निश्चित होता है, पर शब्दोके अर्थ अनिश्चित होते है। सकेतो तथा शब्दोका अर्थ हम बुद्धिसे झटपट समझ लेते है। यह मनोविज्ञानका विषय है। पर हम उन्ही शब्दो तथा सकेतोका अर्थ समझते है जिनसे हम परिचित होते है, दूसरे सकेत तथा शब्द तो हमारे लिए 'काले अक्षर भैस बराबर' होते है।

एक ही पदार्थके अनेक लक्षणोके कारण अनेक नाम भी होते है। साधु, मुनि, योगी, तपस्वी, फकीर, महात्मा, भिक्षु, सन्त, आचार्य, परमहस तथा सिद्ध आदि साधुओके भिन्न-भिन्न प्रधान लक्षणोसे भिन्न-भिन्न नाम चल पडे है। परमात्माके भिन्न-भिन्न गुणोके कारण उसके भी

सहस्रो नाम वोलते है। शिक्षक, अध्यापक, उपाध्याय, आचार्य, व्याख्याता, प्रोफेसर, रीडर आदि एक पढानेवाले व्यक्तिके भिन्न-भिन्न कारणोसे अनेक नाम है। हम हवाई जहाज या वायुयान कहकर सभी वायुयानो-का वोध कराना चाहते है, पर वायुयानोके भी अनेक भेद है। यही हाल पशु-पक्षियोका है। हमारे यहाँ मछलीके दो-चार भेद जानते है, पर इग्लैण्ड आदिमे उसके सैकडो भेद है। साँपोकी ही तेईस सौ जातियोके नाम है। हमारे कोशकार इनका अर्थ एक प्रकारकी मछली या साँपके सिवा और क्या देंगे ? उनका अनुवाद वे अपनी भाषामे कैसे करें ? सिलाईके अनेक भेदोमें-से वखिया करना, तुरपना, टाँका भरना, निगन्दे डालना, रफू करना, कच्ची सिलाई आदि अनेक भेद है। एक ही आदमी उसके अनेक कौटुम्बिक सम्बन्धोके कारण अनेक नामोसे पुकारा जाता है, जैसे वेटा, भाई, वाप, चाचा, ताया, दादा, मामा, नाना, पति, देवर, जेठ, ससुर, जमाई, नन्दोई, जीजा आदि। कहनेका तात्पर्य यह है कि एक ही पदार्थके अनेक कारणोसे अनेक नाम होते है। यह तो भाषा-का उत्थान तथा गुण है कि हमारे पास एक पदार्थको उसके गुणो तथा लक्षणोके कारण भेद करके अनेक नामोसे वोलनेके लिए शब्द है। शब्दोके अनेक अर्थोका अध्ययन भी एक विज्ञान है, जिसे वहु अर्थ विज्ञान (Polyonymy) कहते है। सुविधा तथा गुणके अनुसार हम किसी भी शब्दसे विविध ढगोसे कितने ही शब्द वना सकते है। इनसे तो हमारे लिए शब्द वनानेकी सामग्री वढती है। इस सामग्रीका उपयोग बुद्धिमानी-से सुरुचिपूर्ण ढगसे किया जाना चाहिए। फिर भी अधिक प्रचलित शब्दो-को ही प्रधानता देनी चाहिए।

एक शब्दके वहुत अर्थ होते है, यह पतंजलिका मत है।[1] ब्र० ब्रजमोहन दत्तात्रेय कैफीने 'गहरा' शब्दके निम्नलिखित अर्थ दिये है[2]—

---

१ एकश्च शब्दो बह्वर्थः. महा० १, २, ४५।

२. कैफिया, पृ० १३६–१३७।

१ गहरा रग गाढा रंग । २ गहरी नदी जिसमे नीचे वहुत दूर तक पानी हो । ५. गहरा नशा जो नशा इन्द्रियोपर कावू कर ले । ४ गहरी मित्रता पक्की मित्रता । ५ गहरा परदा सख्त परदा । ६ गहरा विचार दूर पहुँचनेवाला विचार । ७ गहरा घूँट वडा लम्बा घूँट । ८ गहरा हाथ घातक घात्र लगाना । ९ गहरी वात दूरकी वात जो एकको न सूझे । १० गहरी छानना और 'अव तो गहरे हैं' मे गहराईके अर्थ दूसरे हो है । इसो प्रकार डाकखानेका स्टाम्प, रेलका टिकिट, कचहरोका स्टाम्प सवके लिए हमारे यहाँ टिकिट प्रयोगमे आता है । डाकखानेकी रजिस्ट्रीमे और रजिस्ट्रारके यहाँ करवायी हुई रजिस्ट्रोमें अन्तर है । झूठा आदमी, झूठी वात, झूठा वरतन, झूठा हाथ, हाथ झूठा पडना, झूठ-मूठ, झूठा गोटा या झूठा काम आदिमे झूठाके अर्थ अलग-अलग है, पर वे अर्थ एक ही अर्थ 'मिथ्या, असत्य' के इर्द-गिर्द घूमते है । यह तो गहरा शब्द और झूठ शब्दको प्रयोग करनेवालोकी वुद्धिमानी और सूझवूझ है कि उन्होने गहरा और झूठा शव्दोको अनेक प्रयोगोमें लाकर उनके अर्थोमें भेद कर दिया । इसीलिए कहा जाता है, कि शब्दका अर्थ प्रकरण, प्रसग या प्रयोगसे जाना जाता है, वैसे नही । इसी वातको धनजयने यू कहा है, कि शब्दोके प्रयोगकी परिपाटी विचित्र है ।

शब्दोंके अर्थ वदलते रहते है । शब्दोके अर्थोमें यह अदला-वदली क्यो तथा कैसे होती है इसका वर्णन अभी आगे दिया जायेगा । शब्दोका अर्थ निकालना सुनने तथा पढनेवालेको बुद्धि और सूझ वूझपर भी निर्भर है, क्योकि कभी-कभी तो सुनने-पढनेवाले किसी शब्दका अर्थ वोलने या लिखनेवालेको इच्छा या भावनाके अनुसार समझ लेते है, पर कभी-कभी ये अनेक कारणोसे वोलनेवालेकी इच्छासे अलग अर्थ ही समझते है । कभी-कभी टोकाकार, भाष्यकार, वकील, न्यायाधीश तथा कूटनीतिज्ञ अपने बुद्धि-वलसे शब्दोके ऐसे-ऐसे अनोखे, नये या अपने अनुकूल अर्थ निकालते है, जो शायद उन शब्दोको कहने या लिखनेवालेकी कल्पनामें भी न थे ।

न्यायालयोका सारा वाद-विवाद शब्दोके अर्थोपर ही तो चलता है। ये पण्डित लोग अपने बुद्धि-बलसे कभी तो अर्थको चारचाँद लगा देते हैं। पर कभी-कभी अधकचरे पण्डित नासमझीके कारण तथा शब्दके प्रयोगके समय, स्थान तथा अवसर आदिका ध्यान न रखनेके कारण अर्थका अनर्थ कर देते हैं। पुराने ग्रन्थो या विदेशी साहित्यके अनुवादमें अर्थका अनर्थ इसी कारणसे होता है। कभी अर्थका यह अनर्थ जान-बूझकर भी किया जाता है, जैसा कि खण्डन-मण्डन तथा वाद-विवाद आदिमें विपक्षीको नीचा दिखानेके लिए किया जाता है। पर अर्थमें चारचाँद लगना या अर्थका अनर्थ होनेका कारण तो यही है, कि शब्दोके अर्थोमें ऐसा होनेकी गुजाइश होती है। अर्थ-विज्ञान शब्दोका ठीक-ठीक अर्थ समझानेमे हमारी सहायता करता है।

भाषा कभी स्थिर नही रहती, चाहे उसकी उन्नति कितनी ही मन्द गतिवाली मालूम क्यो न हो। भाषामें ध्वनियो, वाक्य-रचना, व्याकरणके तत्त्वो, शब्दोके रूपो तथा शब्दोके अर्थो आदि सबमे परिवर्तनकी सम्भावना है। केवल परिवर्तन क्रियाकी गति ही में समय-समयपर अन्तर होता है या भाषाके भिन्न-भिन्न अगोमे होनेवाले परिवर्तनमे अन्तर होता है।

शब्दोके अर्थोमे परिवर्तन प्राय इतना धीरे-धीरे तथा क्रमश. होता है, कि इस प्रक्रियाकी भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ आज खोजी नही जा सकती। इसमे बडा समय लगता है। हमारे सामने या तो शब्दोके केवल मूल या पहले अर्थ होते है या सबसे अन्तिम अर्थ, पर बीचके अर्थ या अवस्थाएँ हमारे सामने नही होती। आरम्भमे मृग शब्द वनके सभी पशुओके लिए प्रयुक्त होता था, पर धीरे-धीरे उसका अर्थ सँकुचते-सँकुचते हिरन मात्र रह गया। इसी प्रकार पापोका खण्डन करनेवाले क्षपणक महात्माओको भी 'पाखण्डी' कहते थे, पर धीरे-धीरे पाखण्डीका अर्थ ठगी, दम्भी ही रह गया। कारण वह वेदत्रयी धर्मोके विरोधी थे और वैदिक धर्मवालोने निन्दित होते थे। इस अर्थ-परिवर्तनमे सैकडो वर्ष लगे है किन्तु इतना

न कोई लेखा-जोखा है, न साक्षी।

फ्रान्सीसी भाषा-विज्ञानी अन्तोइन मिलेने इस शताब्दीके शुरूमे सुझाया था, कि तीन प्रकारके कारण शब्दोके अर्थोमे परिवर्तनके लिए उत्तरदायी होते है[1]—१ भाषाई, २ ऐतिहासिक, और ३ सामाजिक। भाषाई कारणोमे व्याकरणसम्बन्धी, वर्णविकारसम्बन्धी और एक भाषाके शब्दोका दूसरी भाषामे आना-जाना आदि है, जैसे भारतका बुद्ध फारसमे बुत बन गया, कुछ उच्चारण भी बदला और अर्थ दूसरा हो हो गया। ऐतिहासिक कारणोमें भी मुख्य बात यही है कि हम पुराने शब्दोसे ही नयी वस्तुओके नाम रख देते है, जैसे कि बहुत ढगोसे सर्वथा भिन्न होते हुए भी आजके जहाज़को पुराने शब्द जहाजसे ही पुकारा जाता है। यही बात पार्लियामेण्टकी है। क्या हमारे आजके मन्त्री और प्रधान मन्त्री अधिकार तथा नियुक्तिकी विधि आदिको अपेक्षा पुराने कालके मन्त्रियोंके समान है? फिर भी हम इन्हे पुराने मन्त्री शब्दसे ही पुकारते है। सामाजिक कारणोसे भी अर्थोमें परिवर्तन होता रहता है, उद्योग धन्धोंके पारिभाषिक शब्द भाषामें आते रहते है और इसका विपरीत भी होता रहता है यानी भाषाके शब्द पारिभाषिक शब्द बनते रहते है।

इनके अतिरिक्त शब्दोके अर्थ बदलनेके मनोवैज्ञानिक कारण भी है। इसका सम्बन्ध शब्दको नये अर्थ देनेकी अपेक्षा नये अर्थके प्रचारसे अधिक है। युद्ध कालमें ससारका बहुत बडा भाग युद्धके प्रभावके अधीन होता है। इसलिए भाषामे बहुत-से युद्धसम्बन्धी शब्द आ जाते है। इसी प्रकार जहाज़ शब्दसे नये जहाजको पुकारनेमे कोई नयापन नही लाया गया। वैज्ञानिक उन्नतिकी अपेक्षा भाषा अधिक स्थिति-पालक और लकीरकी फकीर रही है। जहाज़के पूर्ण रूपसे बदल जानेपर भी उसका नाम वही रहा है।

---

१ Words and Their Use, पृ० ७० ।

शब्दोके नये अर्थोके विकासके जो अनेक कारण कहे जाते है, उनमें अत्यन्त प्रवल कारण है प्रगतिशील विज्ञानो तथा उनकी अनेक शाखाओ और मानव अभिलाषाओको व्यक्त करनेके लिए भाषासे की जानेवाली नये-नये शब्दोकी माँग। भाषा नये-नये शब्द बनानेकी माँगको अनेक विधियोसे नये शब्द बनाकर पूरा करती है, पर बहुत बार भाषा पुराने शब्दोको ही नये-नये अर्थ देकर इस माँगको पूरा कर देती है। उदाहरणके तौरपर ग्रामोफोनके रेकॉर्डके लिए ही हिन्दी शब्द 'तवा' लीजिए। रेकॉर्ड रग तथा आकारमें तवेसे मिलता-जुलता था, इसलिए हिन्दीमे रेकॉर्डको भी तवा कहने लगे। घडी आदिमे हम चाभी देते है। ये सब क्या है? पुराने शब्दोके ही अर्थोमें नानार्थता लाना है।

अवतक इस वातपर वल दिया जाता रहा है कि शब्दका अर्थ वाक्यमे प्रसगसे ही जाना जाता है। पर जव यह कहा जाता है, कि किसी शब्द-के अर्थमे परिवर्तन हो गया है, तव वाक्योके प्रसगानुसार अर्थ-परिवर्तन-की वात नही की जाती, वरन् शब्दोके वँधे हुए निश्चित अर्थमे अदला-वदलीकी वात कही जाती है, जैसे मृग शब्द तथा पाखण्डी शब्दोके अर्थ ही वदल गये है। आज उन्हे किसी भी प्रसगमे प्रयोगमें लायें, वही वदले हुए अर्थ लगाये जायेंगे।

शब्दोके अर्थोमें कई प्रकारके परिवर्तन होते है। भाषा-विज्ञानियोने उनको अलग-अलग भेदोमे बाँटा है। अर्थ-विज्ञानके प्रमुख विद्वान् ब्रीलने भाषाके बुद्धिसम्बन्धी नियमोको तीन भेदोमे बाँटा है—१ अर्थ-विस्तार या अर्थका फैलाव, २ अर्थ-सकोच या अर्थका सिमटना, तथा ३ अर्था-देश या अर्थ वदलना।

डॉ० स्टीफन उलमैनने लिखा है "इस तर्कानुसार योजनाका सबसे बडा लाभ इसकी पूर्णता है। कोई चौथी श्रेणी या भेद हो ही नही सकता। यह सरल है और इसे प्रयोगमे लाना आसान है। हर-एक अर्थ-परिवर्तनको तुरन्त किसी श्रेणीमे रखा जा सकता है। परन्तु यह एक

है। जाडे, गरमी, वसन्त ऋतुके साहचर्यके कारण उस कालको ही जाडे, गरमी और वसन्त कह दिया जाता है।

असलमे भोजन न बनाते हुए भी, केवल भोजन सामग्री जुटाने, आटा गूँथने, आग सुलगाने आदिके काम करता हुआ भी आदमी कहता है कि भोजन बना रहा हूँ। कुम्हार गुँदी मिट्टीके एक टुकडेको बननेवाली वस्तुका नाम दे देता है, जैसे यह मटका है, यह सिपाही है। इसी प्रकार एक कलाकार भी कह देता है। एक कवि केवल बैठते ही कह देता है कि कविता लिख रहा हूँ, चाहे उसने अभी एक पंक्ति भी न लिखी हो। डॉक्टरी पढनेवाले छात्रको ही भावी लक्षणके आधारपर डॉक्टर साहब कह देते है। यह नयी और तर्ककी बातें है, पर शब्दोके अर्थसे पूरा सम्बन्ध रखती है।

२ अर्थ-संकोच या अर्थका सिमटना

भाषामे बहुत-से ऐसे शब्द है, जो पहले किसी एक ढगकी वस्तुओ या प्राणियो या कामोके लिए आते थे। पर अब उनका अर्थ सिमटकर उन वस्तुओ, प्राणियो या कामोमे-से किसी एकके लिए आता है। धेनु शब्द हर-एक दूध देनेवाले पशुके लिए आता था, परन्तु अब उसका अर्थ-सकोच होनेके कारण गाय अर्थमें शेष रह गया। वेदमें पशु शब्दका अर्थ बहुत व्यापक है। शतपथ ब्राह्मण[1] में पाँच पशुओमे मनुष्यका भी उल्लेख किया है, परन्तु अब इसका अर्थ केवल गाय आदि पशु ही रह गया है।

हिन्दीमें सीधे-सादे आदमीको गाय, मूर्ख या पशु या जानवर कह देते है। नागेशने 'लघुमजूषा'में लिखा है कि मातृ शब्दके दो अर्थ माता और तोलनेवाला है, परन्तु प्रसिद्धिके आधारपर अर्थ-सकोच हो जानेसे मातृ शब्दसे मॉका ही अर्थ लिया जाता है[2]। इसी प्रकार यास्कने लिखा

---

१ शत० ६, २, १, २, देखिए, अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन, पृ० १००।

२ वही, पृ० १०१।

है, कि वेदमें 'न' शब्द निषेध और उपमा दोनो अर्थोमें आता है, परन्तु अब वह अर्थ-सकोचसे केवल निषेध अर्थमे ही आता है[1]। अँगरेजी हाउण्ड शब्द सभी कुत्तोके लिए आता था, पर अब शिकारी कुत्तोके लिए ही आता है[2]। स्तन शब्द पहले स्त्रियो तथा पशुओके स्तनोके लिए आता था, पर अब स्तन स्त्रीके स्तनके लिए और थन पशुओके स्तनके लिए आने लगा। इसी प्रकार गर्भिणी शब्द स्त्री और मादा पशुओंकी गर्भावस्था बतानेके लिए आता था, पर अब वह सकुचित होकर केवल स्त्रियोंके लिए आता है, मादा पशुओके वास्ते हिन्दीमें 'गाभिन' आता है। मूलसे बना 'मूली' शब्द अब हर-एक छोटी जडके लिए नही आता, पर एक विशेष पौधेके लिए आता है।

स्थानभेदसे भी शब्दोका अर्थ-सकोच हो जाता है, जैसे अमेरिकीमे सयुक्त राज्य अमेरिका (U S A) का निवासी या उसका विशेषण लेते है, न कि सारे महाद्वीपका।

शब्दोका अर्थ सकुचित करनेकी कुछ विधियाँ हमारे पुराने भाषा-विज्ञानियो या वैयाकरणोने भी बतायी है। ये विधियाँ और उदाहरण डॉ० कपिलदेव मालवीय लिखित 'अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन' से साभार दी जा रही है।

१ समाससे अर्थ-सकोच, जैसे पश्यतोहर (देखते-देखते चुरानेवाला) शब्द सुनारके लिए आता है।
२ उपसर्ग लगानेसे अर्थ-सकोच जैसे भू धातुके पहले कई उपसर्ग लगानेसे प्रभाव, अनुभव, सम्भव आदि बनते है।
३ सज्ञाओंसे पहले विशेषण लगानेसे अर्थमे सकोच जैसे श्यामपट, हवाई जहाज आदि। लोक-प्रसिद्धिके आधारपर

---

१ अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन, पृ० १०२।
२ भाषा लोचन, पृ० ४२४।

भी अर्थ-सकोच होता है और उस शब्दका वह अर्थ खास-खास स्थानोपर होता है, हर स्थानपर नही ।

४ व्याकरण, साहित्य, विज्ञानो, दर्शनशास्त्रो, कलाकौशल, उद्योग-धन्धो तथा भिन्न-भिन्न धर्मोके पारिभाषिक शब्द एक प्रकारसे अर्थ-सकोचके ही उदाहरण होते है। महत्त्वपूर्ण विषय होनेके कारण पारिभाषिक शब्दोका वर्णन तो एक अलग परिच्छेदमे दे दिया गया है ।

५. सब तरहके नाम भी अर्थ-सकोचके उदाहरण है । जैसे गाडी एक आम शब्द है, पर घोडागाडी, ऊँटगाडी, रेलगाडी, मोटरगाडी, चीलगाडी, बग्घी, ठेला, छकडा, रेहडू, मँझोली, रथ आदि । शब्दोके अर्थोमें भेद या फर्कको बतानेको भेदीकरण या differentiation कहते है । भेदीकरण और विशेष अर्थ पैदा करने (Specialisation) का वर्णन इसी परिच्छेदमें आगे दिया जा रहा है ।

६ पाणिनि और पतजलिने तद्धित और कृदन्तके प्रकरणमे कुछ उदाहरण देकर बताया है, कि इनसे भी शब्द किसी विशेष अर्थमे रूढ हो जाते है । धातुओके अर्थ सामान्य रूपसे लिखे गये है, पर कुछ प्रत्ययोके जोडसे उनका अर्थ नियत हो जाता है, और फिर वे शब्द किसी नियत अर्थमे ही आते है, जैसे घृतका अर्थ घी होता है । मन् (मनन करना) धातुसे मति, मान, मनन, मनस्, मत आदि शब्द बनते है । ये उदाहरण सस्कृतके है और हिन्दीमे अध्ययनकी दिशाका सकेत करते है । छात्र शब्दके अर्थका प्राचीन-कालमे गुरु छात्रके आपसी गहरे सम्बन्धोपर प्रकाश डालता है । डॉ० कपिलदेव मालवीय लिखते है 'छत्र' शब्दसे पतजलिने छात्रकी व्युत्पत्ति बतायी है, यह विद्यार्थियोके अर्थमे रूढ हो गया है । पतजलि-

ने इसकी व्याख्या करते हुए बताया है कि गुरु छात्र है, क्योंकि वह शिष्यको आच्छादित करता है (ढँकता है) अर्थात् शिष्यके अज्ञानको दूर करता है। जिस प्रकार छत्र उष्णता आदिसे दूर करता है, उसी प्रकार वह अज्ञानको दूर करता है। छात्र छत्रवत् गुरुकी सेवा करता है, अत विद्यार्थी भी छात्र है।'[1]

पाणिनि और पतंजलिने अर्थ-सकोचवाले कितने ही शब्दोंके उदाहरण दिये हैं, जो विशेष-विशेष अर्थोंमें ही रूढ हो गये हैं, जैसे आस्तिक, नास्तिक, साक्षी आदि।

२ अर्थ बदलना

इसे अर्थादेश, या अर्थ-परिवर्तन (ट्रांस्फरेन्स ऑव मीनिंग) भी कहते हैं। कभी-कभी शब्द अपना मुख्य और स्वाभाविक अर्थ छोडकर दूसरे अर्थमे प्रयुक्त होने लगता है। इसमें शब्दका मौलिक या पहला अर्थ समाप्त हो जाता है और दूसरा ही अर्थ उसका स्थान ले लेता है। ऋग्वेद-के कुछ पुराने भागोंमे असुर शब्द देवतावाचक है और इसी अर्थमे ईरानीमे भी (अहुर) है, किन्तु बादकी संस्कृतमे यही शब्द राक्षस, दैत्य आदिको बताने लगा और 'अ' को निषेधात्मक उपसर्ग मानकर 'सुर' शब्द देवता-वाचक माना गया है[2]। इसी प्रकार गृह-वाटिका (घरका बाग) शब्द साथ-साथ चलते थे। इनमे-से गृह निकल गया, वाटिकाका वाडी बना जिसका अर्थ है बगिया (फुलवाडी), पर बगलामे उसका अर्थ हो गया है घर[3]।

संस्कृतमे रूप्य शब्दके तीन अर्थ सुंदर, चाँदी, चाँदी या सोनेका मुहर लगा सिक्का या मुद्रा थे। हिन्दीमे सुन्दर और चाँदी अर्थ तो नहीं

---

१. देखिए 'अर्थ विज्ञान तथा व्याकरण दर्शन', पृ० १०५।

२ सामान्य भाषा विज्ञान, पृ० ६७।

३. भाषा रहस्य, पृ० ४२५।

गया। बौद्ध या बुद्धसे यहाँ बुद्धू बन गया जिसका आशय मूर्ख है। क्षपणक साधुके लिए प्रयुक्त पाषण्ड (पाखण्ड) सम्राट् खारवेलके एक शिलालेखमें ('सव्वपासड पूजको') मिलता है। आज उसका रूढ अर्थ धूर्त, दम्भी, कपटी है, जो कि खारवेलके शासनमें और उससे पहले भी न रहा होगा। यह महत्त्वपूर्ण खोज जैन-साहित्यके वयोवृद्ध विद्वान् आचार्य जुगलकिशोर मुख्तारने की है[२]। इसी प्रसगमे उन्होने प्राचीन ग्रन्थोके अनुवादकोको जो चेतावनो दी है, उसे अक्षरश यहाँ देना अनुपयुक्त न होगा ? "मेरी यह धारणा है कि किसी भी ग्रन्थका यथार्थ अनुवाद प्रस्तुत करनेके लिए यह जरूरी है कि उस ग्रन्थके जिस शब्दका जो अर्थ स्वय ग्रन्थकारने अन्यत्र ग्रहण किया हो उसे प्रकरणानुसार प्रथम ग्रहण करना चाहिए, बादको अथवा उसकी अनुपस्थितिमे वह अर्थ लेना चाहिए जो उस ग्रन्थकारके निकटतया—पूर्ववर्ती अथवा उत्तरवर्ती आचार्यादिके द्वारा गृहीत हुआ हो। ऐसी सावधानी रखनेपर हम अनुवादको यथार्थ रूपमे अथवा यथार्थताके बहुत ही निकट प्रस्तुत करनेके लिए समर्थ हो सकते है। अन्यथा (उक्त सावधानी न रखनेपर) अनुवादमे ग्रन्थकारके प्रति अन्यायका होना सम्भव है, क्योंकि अनेक शब्दोके अर्थ द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव अथवा देश-कालादिकी परिस्थितियोके अनुसार बदलते रहते है, और इसलिए सर्वथा यह नही कहा जा सकता, कि जिस शब्दका जो अर्थ आज रूढ है, हजार दो-हजार वर्ष पहले भी उसका वही अर्थ था[३]"। यह बात सभी भाषाओंके पुराने ग्रन्थोके अनुवादपर लागू होती है। इसी प्रकार नग्न और लुंचित (केश लोच किये हुए) शब्द जैन साधुओंके लिए आरम्भमे काम आते थे, पर अब उनका बिगडा रूप नंगा-लुच्चा बुरे अर्थमे

---

१ Our Language by Simeon Potter, पृष्ठ ११३।

२ समीचीन-धर्मशास्त्र, पृष्ठ ६।

३ समीचीन-धर्मशास्त्र, पृ० ८६।

आता है[1]। अब तो ये गाली देनेमे काम आते है।

मुसलिम शासनकालमे दीवान, मोदी, भण्डारी, तीस हज़ारी आदिके समान मुन्शी और दफ्तरी सरकारके बडे मान्य अधिकारी थे। लिखे-पढे सभी ब्राह्मण या कायस्थ अपने नामसे पहले मुन्शी शब्द लगाते थे, जैसे मुन्शी प्रेमचन्द तथा मुन्शी दयानारायन निगम, सम्पादक 'ज़माना', कानपुर, श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी आदि। पर आज गाँवका पटवारी और शिक्षक भी अपने-आपको मुन्शी कहलवानेको तैयार नही। केवल वकीलोके क्लर्क और अरजी-पत्री लिखनेवाले 'मुन्शी' कहलाते है। उनका पारिश्रमिक (फीस) मुन्शियाना कहलाता है। इसी प्रकार ज़िले या दरबारके सारे कागज़ो-फाइलोके अधिकारीको दफ्तरी कहते थे, जैसा कि कई वशोके दफ्तरी नाममे प्रकट है, पर अब दफ्तरी या तो छापे-खानोमे जिल्द बाँधनेवाले कहलाते है या सरकारी दफ्तरोंमें फाइलोको रखनेवाले छोटे कर्मचारी होते हैं, जो चपरासियोसे कुछ ही ऊँचे होते है। यही हाल महाराज शब्दका हुआ है। डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं "पाणिनिने महाराजको देवता कहा हैं। यक्षोके राजा होनेके कारण कुबेर महाराज कहलाये"[2]। राजे-महाराजे, महाराज-प्रमुख, आचार्य महा-राज आदिमे महाराज अपने ऊँचे अर्थका बोधक है। पर अब प्याऊपर पानी पिलानेवाले या ढाबोमे खाना बनानेवाले ब्राह्मणोको भी प्राय महा-राज कहा जाता है। यद्यपि महाराज शब्द अच्छे अर्थोंमें भी आता है, पर हम महाराज शब्दका अपकर्ष भी देखते है। सम्भव है यह बीचकी अवस्था हो। इसी प्रकार तेरहवी, बरसी, चहलम (चालीसा) तिथियाँ हिन्दू-मुसलमानोमें मरनेके सस्कारोके दिनोके लिए आती है। उठावनी, सुनावनी शब्द भी मृत्यु-सम्बन्धी क्रियाओके लिए आते है। तेरह और तीन गिनतीके शब्द बुरे या अशुभ समझे जाते है। हमारे यहाँ अँगरेज़ी

---

१ भाषा लोचन, पृ० ४२२।

२ पाणिनि कालीन भारत, पृ० ३५५।

शब्द मास्टर आज अपकर्षकी ओर जा रहा है, क्योंकि नाई, दरजी और दूसरे आदमी सभी एक-दूसरेको मास्टर कहने लगे हैं। अँगरेजी जेण्टिलमैन हमारे यहाँ 'जण्टरमैन' बन गया जो कि अर्द्ध-शिक्षित हैट-कोट-पतलून-धारी शौकीन आदमीको कहते है।

अँगरेजीमें भी कुछ हिन्दुस्तानी शब्दोका अपकर्ष हुआ है। उदाहरणार्थ बाबू और बीबी लें। बगाल तथा बिहारमे बडेसे बडे आदमियोके नामसे पहले बाबू शब्द आता है, जैसे रविबाबू, शरत बाबू तथा सुभाष बाबू आदि। पर अँगरेजीमे बाबू शब्द साधारण अँगरेजी पढे-लिखे हिन्दुस्तानी, विशेष रूपसे बगालीके लिए आता है और उससे इंग्लैण्डमें 'बाबूइम' (बाबू लीला, बाबू राज्य), बाबूइज्म शब्द भी बनकर प्रचलित हो गये।

यह राजनैतिक दलोका युग है। देशमे अनेक राजनैतिक दल है। कभी-कभी इन दलोंके नाम जनतामे आदरसे लिये जाते है, पर जब अनेक कारणोसे कोई राजनैतिक दल जनताकी दृष्टिमे गिर जाता है, तो उसके नाममे गिरावट आ जाती है। और तब उस राजनैतिक दलके नामके अर्थमें गिरावट आ जाती है। अँगरेज लेखक पार्ट्रिजने शब्दोंके पतनका वर्णन करते हुए दूसरे लेखक मैक्नाइटका सन् १९२२ या २३ में लिखित उद्धरण दिया है "आजकलकी भाषामे समाजवादी (Socialist) शब्द अराजकताके साथ कल्पित सम्बन्धके प्रभावके कारण पतनकी ओर जा रहा है। पर यदि सन् १९२८ तकके लगभग नही, तो १९३० तक समाजवादी शब्द साम्यवादी (Communist) शब्दके मुकाबलेमे एक आदरका शब्द था।"[1]

५ शब्दके अर्थका बुरेसे अच्छा हो जाना

इसे अर्थोत्कर्ष (एलिवेशन ऑव मीनिंग) भी कहते हैं। कभी-कभी

1. World of Words, पृ० ६२।

बुरे या तिरस्कृत अर्थोमे चलनेवाला शब्द ऊँचे या अच्छे अर्थमे प्रचलित हो जाता है। इसे सुसगतिका या शब्दोके द्वारा 'पारसके स्पर्श'का प्रभाव कह सकते है। अँगरेज़ी शब्द कान्स्टेबल अस्तबलमें काम करनेवालेको कहते थे। मार्शलका भी कुछ ऐसा ही अर्थ था। पर अब कान्स्टेबल पुलिसमैनको भी कहते है, और मार्शल तो सेनाके जनरलसे भी बडे अधिकारीको कहते है, जैसे मार्शल टीटो आदि। सस्कृतके साहसिक शब्दका अर्थ पहले डाकू, हत्यारा, चोर, जार और बुरा काम करनेवाला था, पर अब इसका अर्थ हो गया है बहुत वीरता और सकट-भरा कोई बडा काम करनेवाला।[1] यही हाल गगा शब्दका भी है। पहले हर नदीको साधारण रूपसे गगा कहते थे, पर जब आर्य लोग भारतमे आये, तो उन्होने हरिद्वारके पाससे होकर बहनेवाली नदीको गगा कहा और यही नदी परम पवित्र तथा गगा मैया बन गयी। श्री ब्रजमोहन दत्तात्रेय कैफी लिखते है "अरबीमे 'मदीन' शहरके मानी भी रखता है। लेकिन जबसे हजरत मुहम्मद मक्कासे हिजरत करके (छोड करके) वह इस (नामके) शहर गये, मदीनाको आलम (ससार) का इमत्याज़ (विशेषत्व) हासिल हो गया। एक लफज किसी मुम्ताज़ (प्रतिष्ठित) शख्सियतकी कुर्बत (समीपता) से कुछका कुछ हो जाता है।[2] उन्होने ऐसे दूसरे उदाहरण हज़, जात्तरा, यात्रा, ईद, दशहरा आदि शब्द दिये है। इसी प्रकार छठी, जयन्ती, वर्षगाँठ तथा ब्रह्ममहूर्त आदि शुभ शब्द है। सवाया, ग्यारह, एक सौ एक भी शुभ माने जाते है।

अर्थोका पतन और उत्कर्ष कभी शब्दोके रिवाज तथा शैली फैशनके साथ गुप्त रूपसे सम्बन्धित होता है और कभी असुलभ रूपसे शैलीमे मिला-जुला भी होता है। इस शैलीके अन्तर्गत हम केवल ऐसे चलते-रिवाज़ो, क्षणिक धुनो (Fads) तथा मनमौजीपनको लेते है, जिनमे-से

---

१ भाषा लोचन, पृ० ४२३।

२ कैफ़िया, पृ० ६५।

शरीरका अग एक सामान्य शब्द हैं, पर अगोके कितने नाम है, यह बतानेकी आवश्यकता नही। हमारे वस्त्रोके नामोमे भेद हैं। खाने-पीने-की वस्तुओके नामोमे भेद है। वृक्ष, वेल, फूल, जीव, जन्तु, कीडे-मकोडे, पशु-पक्षी, धातुओ आदिकी अलग-अलग जातियाँ हैं और फिर उनके उपभेद हैं। भूमि कहनेको एक साधारण शब्द है, पर किसी भू-शास्त्री-से पूछिए, वह आपको धरतीके अनेक भेदोके नाम वता देगा। मशीन-का हर एक पुरजा पुरज़ा है, पर उनके कामो आदिके अनुसार सहस्रो नाम है। विज्ञान, ज्ञान, कलाओ, उद्योग-धन्धो, शास्त्र, साहित्य आदिमें भेदीकरणके शब्द ही पारिभाषिक शब्द तथा अर्द्ध-पारिभाषिक शब्द वन जाते है। इन शब्दोका 'हमारे यहाँ अभाव हैं। जो थोडे-से शब्द हैं भी वे अत्यन्त अपर्याप्त है अत नये पारिभाषिक शब्द बनाये जा रहे हैं पारिभाषिक शब्दोके प्रकरणमे इस विषयपर विस्तारसे विचार किया गया है।

जो देश कला-कौशल, ज्ञान-विज्ञान, तथा साहित्य आदिमे जितना उन्नत होगा, उसमें शब्दोका भेदोकरण भी उतना ही अधिक होगा।

सम्बन्धसूचक शब्दोका जितना अच्छा विविध प्रकारसे विकास हिन्दी-मे हुआ है, न उतना अच्छा विकास सस्कृतमें है और न अँगरेज़ीमें। डाकू, चोर, ठग, उठाईगीरा, बटमार, जेबकतरा, छलिया, उचक्का, चकेरा और चार-सौ-बीस सब अलग-अलग है। इस प्रकार हम देखते है, हिन्दीमे भेद करनेवाले शब्द विकसित हुए हैं।

भेदवाचक शब्दोके कुछ और उदाहरण नीचे देखिए—

वच्चा एक सामान्य शब्द है, और यह शब्द आदमोके वच्चेसे लेकर साँपके वच्चे तकके लिए प्रयुक्त होता है। पर भाषामें इससे काम नही चलता, उसमें तो हर-एक पशु आदिके वच्चेके लिए नाम चाहिए। हिन्दी आदिमे इस कामके लिए बहुत-से शब्द है, जैसे कटडा, कटिया, कटडी (भैंसका वच्चा, बच्ची), घैटा (सूअरका बच्चा), पिल्ला (कुत्तेका

बच्चा), बछड़ा, बछड़ी, बछिया (गायका बच्चा, बच्ची), बछेरा, बछेरी (घोड़ेका बच्चा, बच्ची), बर्रा (भेड़ेका बच्चा), बिलूगड़ा (बिल्लीका बच्चा), मेमना (बकरीका बच्चा), सँपोला या सँपोलिया (साँपका बच्चा), हिरनौटा (हिरनका बच्चा) आदि ।

भिन्न-भिन्न पशु-पक्षियोकी बोली या नादके लिए भी अलग-अलग शब्द नियत है, जैसे उल्लूका हूकना, ऊँटका बलबलाना, (सामान्यरूपसे), ऊँटका बगबगाना (मस्तीमें), कबूतरका गुटरगूँ करना, कौवेका काये-काये करना, कुत्तेका भौंकना, कोयलका कूकना, गधेका हेंचू-हेंचू करना या रेंगना, गायका राँभना, गिलहरीका चटचटाना, घोडेका हिनहिनाना, चिड़ियाका चूँ-चूँ करना, झींगुरका झिंगारना, तोतेका रट लगाना या टाँय-टाँय करना, पपीहेका पी-पी करना, पक्षीका चहचहाना, या चुर-चुराना, बन्दरका घिघियाना, बकरीका ममियाना, बिल्लीका म्याऊँ-म्याऊँ करना, मक्खीका भिनभिनाना, मुरगीका कड़कड़ाना, मुरगेका कुकड़ू-कूँ करना, या बाँग देना, मेढकका टर्राना, शेरका दहाड़ना, साँड़का डकारना, साँपका फुफकारना, तथा हाथीका दहाड़ना आदि ।

बोलियोंके प्रकरणमें कुछ और आवाज़ें भी ध्यान देने योग्य है, जैसे गवैयोकी ताना री-री, शिखर या गुम्बदकी गूँज, घड़ियाल या घण्टेकी टन टन, घड़ीकी टिक-टिक, घोड़ेके चलनेकी टाप, टेलीफोनकी टन-टन, चक्कीकी घुमर, छकड़ेकी चूँ-चूँ, चरखेकी चूँ-चूँ, तबलेकी ताक धिनाधिन, जूतेकी चर-चर, तोपकी दनादन, नाचनेकीताथेई, ताथेई, नूपुर या पाजनकी झन-झनन, बादलकी गरज, भँवरोकी भीं-भीं, मृदगकी धमधी, रुपयोकी खनक, रेलकी धड़-धड़, हवा या वायुकी सनसनाहट या साँय-साँय आदि ।

कुछ प्राणियो या बेजान वस्तु आदिके समूहो या समुदायोके लिए भी अलग-अलग शब्द नियत है, जो सामान्य समूह-शब्दके भेद है, जैसे, अंगूरोका गुच्छा, अनाजका ढेर या ढेरी, आदमियोकी भीड़, जोनोका

झुरमट या झूमर, कबूतरोकी टुकडी, कलाबत्तूकी गुजी, कागज़ोकी गड्डी, केलोकी गहल, खिलाडियोकी टीम, गायोका चोला, चण्डालोकी चौकरी, चिउँटियोका दल, जहाजोका बेडा, टिड्डियोका दल, तारोका झुरमुट या झूमर, नोटोकी गड्डी, पक्षियोका झुण्ड, पानोकी ढोली, वृक्षोका जगल या वन, बालो तथा तालियोका गुच्छा, विद्यार्थियोकी कक्षा या श्रेणी, भेड-बकरियोका खेड या गल्ला, मजदूरोका जत्था, मधुमक्खियोका झिल्लड, रेशम या सूतका लच्छा या लच्छी (सूतकी आँटी भी), रोटियोकी थई, लकडियो तथा घासका गट्ठा, सवारोका दस्ता आदि । राजनीतिमे किसी विशेष सिद्धान्तपर चलनेवालोका दल, गुट, संघ, पार्टी, कहलाती है ।

पर भेदीकरणमे कभी-कभी इतनी कठिनाई आती है कि बहुत-से लोग मिलते-जुलते अर्थवाले शब्दोका अर्थ-भेद या अर्थोके सूक्ष्म भेद, अर्थकी छायाको न जाननेके कारण किसी शब्दके स्थानपर कोई-सा शब्द प्रयोग कर देते हैं । कारण वे एक ही प्रकारके शब्दोको पर्यायवाची समझ-कर एक शब्दको दूसरेके स्थानपर प्रयोग कर बैठते है, परन्तु वास्तवमे ऐसा नही होना चाहिए, क्योकि उनके अर्थोमे सूक्ष्म भेद होता है । ऐसी गलती या भूल विदेशी शब्दोके प्रयोगमे तो होती ही है, हिन्दी शब्दोके प्रयोगमे भी करते हैं ।

आजकल होटल और रेस्तराँ शब्द आम हो गये हैं । चायपानी या रोटियोके ढाबेको होटल कह दिया जाता है । पर फ्रान्सीसीमे रेस्तराँ उपाहारगृह या जलपाल घरको कहते हैं और होटलमे खाने आदिके साथ ठहरनेका भी प्रबन्ध होता है । दो-चार मेज कुरसी रखकर रोटियोकी दूकानको भी होटल कहना ठीक नही, पर अँगरेज़ी नाम रखनेका खब्त सवार होनेसे ढाबा या बासा कहना पसन्द नही किया जाता । डिस्पेन्सरी और अस्पतालमें भी अन्तर है । डिस्पेन्सरीस केवल औषधियाँ दी जाती हैं या वहाँ मरहम-पट्टी होती है । अस्पतालमे डिस्पेन्सरीकी सुविधाओके साथ-साथ रोगियोके ठहरनेका भी प्रवन्ध होता है । डिस्पेन्सरीके लिए

चिकित्सालय शब्दका प्रयोग गलत है, दवाखाना ठीक। अस्पतालके लिए चकित्सालय चल सकता है—आशिक रूपमे ठीक तो यह होगा कि जैसे रुपये और नोटका अन्तर रखनेके लिए एक शब्द अपना चलता है, और दूसरा विदेशी, वैसे ही अस्पतालको बरतना चाहिए। हिन्दीमे शब्दोके भदीकरणका कुछ काम बडे परिश्रमसे श्री रामचन्द्र वर्माने किया है, और उनका वह काम 'शब्द-साधना' पुस्तकके रूपमे हिन्दी-जगत्के सामने आ गया है। उसमें अँगरेज़ी पर्यायवाची शब्दोके अलग-अलग हिन्दी समानक देने या बनानेका प्रयास किया गया है। उससे एक-दो उदाहरण साभार यहाँ दिये जाते है—यन्त्र[1] (Machine) के नीचे इजन (Engine), उपकरण (Implement), उपस्कर (Apparatus), औज़ार (Tool), करण (Instrument), कल यन्त्र, कल-पुरजे यन्त्रान्त, प्रयन्त्र (Appliance), यन्त्राग (Mechanism) और हस्तक = औज़ार। इसी प्रकार भुगतान[2] (payment) शब्दके नीचे अग्रिम (Advance), मोल (ransom), किराया (१. Hire २ rent,) क्षतिपूर्ति (Compensation), चुकता या चुकती (full payment), निष्क्रम (redemption), पूर्ति (Compensation), पेशगी अग्रिम, प्रतिफल (return), भाडा (rent), लगान (rent), हरजाना, क्षतिपूर्ति।

पेशगीके दो भेद साई और बयाना (अरबी) भी लिये जा सकते है। साई दो-चार आनेसे रुपये-दो-रुपये तक होती है। हम जब किसी मोचीको जूता बनानेका ऑर्डर देते है या गाडी आदि किरायेपर करते है या गाय, बैल तथा भैस आदि मोल लेनेकी बात पक्की करते है, तो कुछ मामूली रकम पेशगी देते है। इसे साई कहते है। साई जनपदीय शब्द है और दिल्ली, हरियाना तथा मेरठके आस-पास चलता है। बयाना,

१. शब्द साधना, पृ० २६१।
२ वही, पृ० २२६।

मकान, जमीन आदि मोल लेनेपर दिया जाता है, जो अरबी शब्द बैआना (मोल लेना विशेषकर भूमि आदि) से बना है।

भेदीकरणके सम्बन्धमे श्री सीताराम चतुर्वेदीने 'भाषा लोचन'में लिखा है "कुछ विद्वानोने यह लिखा है, कि इस भेदीकरण या अर्थके अलगावमे तीन बातें होनी चाहिए—१ जिन शब्दोमें ऐसा अर्थका बिलगाव हो जाता है, वे उस भाषामें पहलेसे होने चाहिए। ऐसा नहीं हो सकता, कि कोई नया शब्द बाहरसे लाकर भर दिया जाये। २ पहले तो यह अर्थका बिलगाव दिखाई पडता रहता है, पर धीरे-धीरे उन भेदोको भूल जाते है और फिर वे अलग-अलग अर्थ दिखानेवाले बहुत-से शब्द मिट जाते है। ३ जो समाज जितना ही अधिक सभ्य होगा, उसकी बोलीमें उतना ही अधिक अर्थोका बिलगाव होगा, जैसे हमारे यहाँ धोना-के लिए कचारना, फीचना, सबुनियाना, पछाडना, आदि बहुत-से शब्द काममे आते है। पर ये बातें नही मानी जा सकती, क्योकि नये शब्द बाहरसे लानेपर भी भेदीकरण या अलगाव हो सकता है, जैसे वैद्य, डॉक्टर और हकीममे।"[1]

अर्थोके भेदीकरणके लिए आगे शब्द बनानेके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि नये-नये शब्द संस्कृत प्रत्ययो या उपसर्गोसे गढनेके स्थान-पर हिन्दीमें प्रचलित देशी तथा विदेशी शब्दो, जनपदीय शब्दो तथा भारतकी आधुनिक भाषाओसे शब्द लें। गाय-बैलो, धरतीके भेद जन-पदीय भाषामे बहुत मिलते है। उन्हें देशकी जनताका बहुत बडा भाग पहले ही जानता है। पर यह काम बडा परिश्रम और खोज तथा शब्दो-का तुलनात्मक अध्ययन चाहता है। पुराने प्राचीन साहित्यसे भी ऐसे शब्द छाँटे जा सकते हैं।

१ भाषा लोचन, पृ० ४१४-१५।

७ आलंकारिक अर्थ

अँगरेज़ीमें इसे मेटाफर (metaphor) या शब्दका आलकारिक फिगरेटिव (Figurative) प्रयोग कहते है। कभी-कभी हम ऐसे शब्द भी काममे लाते है, जिनका अर्थ अपने अर्थसे कुछ अलग होता है। यह अर्थ-भेद कई तरहका होता है। कभी तो यह अर्थ शब्दके अपने मूल अर्थसे मिलता होते हुए भी कुछ अलग होता है, कभी बिलकुल दूसरा अर्थ होता है, कभी शब्दके अपने प्रचलित अर्थसे अलग होता है। कभी इसमें अतिशयोक्ति होती है, तो कभी व्यग्य, फिकराकसी, कभी चुटकी, तो कभी करारी चोट होती है। शब्दोके ये अर्थ प्रसगमे अधिक निकलते है। बोलचालमें ऐसे अलकारयुक्त शब्दोके साथ बोलनेवालेकी मुखाकृति, स्वर या आवाज़के लहज़े या ढग (tone) आदिपर भी ध्यान देना चाहिए। सुराहीका मुँह, पहाडकी चोटी, कमीजकी पीठ, बाँह, गला आदिमें मुँह, चोटी, पीठ, बाँह, गला आदिका अर्थ अपने अर्थसे मिलते हुए भी कुछ दूसरा है। इसी प्रकार हम बोलते है, किसान देशकी रीढकी हड्डी है। किसीका भाई मर जानेपर कहा जाता है, 'उसका हाथ टूट गया।' बुढापेकी लाठी आदिमे भी यही भाव है। नाकका बाल, मूँछ नीची होना, मूँछका बाल, गधेके सीग, लीडरकी दुम आदि भी आलकारिक प्रयोग है। इनमे सदृशता या उपमा इतनी साफ है कि हमारा ध्यान अनमान बातोकी ओर तुरन्त जाता है।

इससे एक बात और भी प्रकट होती है, कि जिस प्रकार भाषामे शरीरके अगोके नामोपर रखे हुए बहुत-से शब्द मिलते है, जैसे हाथ, गिरह, बालिश्त, अँगुली, फुट, कदम, पग आदि, वैसे ही इस क्षेत्रमे भी शरीरके अगोके नामके काफी शब्द अलकार अर्थमे आते है। कभी-कभी हम पशुओके नामोसे भी अच्छा या बुरा अर्थ लगा देते है। जैसे वह शेर है, वह गधा है, वह उल्लू है, वह गीदड है, वह तो गाय है, आदिमे बल-वान्, मूर्ख, डरपोक, भोला-भाला आदि अर्थ है। किसी आदमीको

तोताचश्म कहनेसे तोतेके समान आँख फेर लेनेवाला या वेमुरव्वत आदमी समझा जायेगा। भाडेका टट्टूका अर्थ हम समझते ही हैं। मक्खीचूससे अत्यन्त कजूम आदमीका बोध होता है। नामी या कुख्यात स्त्री-पुरुषोके नाम भी अच्छे-बुरे अलकार अर्थमें प्रयोग होते है, जैसे किसीको कुम्भकरण कहना। किसीको जगचन्द या विभीषण कहनेका अर्थ उसे देशद्रोही कहना है। किसीको भीम, अर्जुन, रुस्तम कहनेका आशय उसे वीर, बलवान् कहना होता है। मजनूँका अर्थ अतिप्रेमी हो जाता है। किसी स्त्रीको सावित्री कहना, उसके सतीत्वकी प्रशसा करना है।

कभी-कभी शब्दोको अनुभूतिके एक क्षेत्रसे उठाकर दूसरे क्षेत्रमे ले जाकर अलकारका भाव पैदा किया जाता है, जैसे मीठी बात, कडुई बात, चटपटा, चुटकला आदिमे मीठी, कडुई तथा चटपटाका अर्थ उनके स्वादका नही, बल्कि उस स्वादसे जो अनुभूति पैदा होती है, उससे है। गरमागरम विवाद, गरमागरम स्वागतमे गरमका अर्थ उत्साहपूर्ण या जोशीले स्वागतसे है। मुट्ठी गरम करना, चाँदीकी चाबी, चाँदीकी तलवार आदि सब आलकारिक प्रयोग है। आजकल हम 'शीत युद्ध' समस्तपद खूब पढते तथा सुनते है। यह अँगरेज़ी 'कोल्ड वार' (Cold war) का शब्दश पर सर्वथा ठीक अनुवाद हैं। बिना तोप-बम आदिसे बातो या प्रचारकी जो लडाई आज चल रही है, उसमें गरमी न होनेके कारण शीत युद्ध कहते है।

इतना ही नही, हिन्दी अलकारपूर्ण शब्दोमे भी समयके साथ उन्नति होती रही है, अर्थात् इस युगकी वैज्ञानिक उन्नतिसे भी हिन्दी आलकारिक शब्द लेती रही है। थर्मामीटरमे गरमीसे पारा चढता है और यह ताप, टेम्परेचर या ज्वरको प्रकट करता है। अब थर्मामीटरकी इस हालतसे ही कहा जाता है, कि 'आज उसका पारा चढा हुआ है' अर्थात् वह क्रुद्ध है। 'आप बडे लाट साहब है' में अँगरेजी शब्द लॉर्डसे लाट साहब जन-भाषामे बनाया गया है, अर्थ इसका है बडा आदमी। यहाँ अर्थ हुआ, आप कौन,

बडे आदमी हो। 'वह तो मेरी जेबमे है' तथा 'उसकी जान मेरी मुट्ठीमें है', में जेब और जान मुट्ठीमे उपलक्षित या अलकारयुक्त (फिगुरेटिव) अर्थमे प्रयोगमे लाये गये है। गिनती-सूचक शब्दोके परिच्छेदमे चार सौ बीस, 'दस नम्बरी' का प्रयोग भी अलकारयुक्त है।

भिन्न-भिन्न कलाओ तथा विद्याओने भी आलकारिक शब्द भाषाको दिये है जैसे षट् राग गायन विद्यामे छह रागको कहते है, पर हिन्दीमे षट्राग लेकर बैठ गये में षट्रागका अर्थ बखेडा है। मीन मेष ज्योतिषका प्रयोग है, पर हिन्दीमे 'मीन मेख निकालना' का अर्थ दोष निकालना है। ढोल पीटनाका अर्थ बुराई करते फिरना है। खेलोने भी हिन्दीको इसी प्रकारके शब्दोका योगदान दिया है, जैसे नहलेपर दहला लगाना, पौबारा होना, तीन काने, मात करना, मात देना, शै देना, कठपुतली, इशारेपर नाचना तथा चारो खाने चित आदि। 'लो दस बज गये' का अर्थ है सोनेका समय हो गया।

व्यंग्यमे मीठी भाषामे चुभती बात कहना भी अलकार है। दिल्लीमें ऐसी बातोको दुशालेमें (जूते) लपेटकर लगाना कहते है। कहनेका तात्पर्य सक्षेपमे यह है कि भाषामें शब्दोका अलकारयुक्त प्रयोग बहुत ही महत्त्वका विषय है। बोलचाल, भाषणो तथा साहित्यमे, विशेषकर कवितामे, हर समय शब्दोका आलकारिक प्रयोग होता रहता है।

८. उक्ति संस्कार

इसे अँगरेजीमे 'यूफेमिज्म' या 'डेकोरम' कहते है। यह भी अर्थादेशके अन्तर्गत है। लज्जाजनक तथा अशुभ बातोको कुछ बना-बनाकर दूसरे अच्छे शब्दोके द्वारा कहा जाता है। स्त्री पुरुषोके गुप्त अगोके नाम तथा उनकी क्रियाओके नाम कभी सीधी भाषामे नही लिये जाते। इसी प्रकार बुरी तथा अमगल बातोको भी दूसरे ही शब्दोमे प्रकट किया जाता है। मरना एक अशुभ, बुरी या अमगल बात है। इसलिए मरनेके स्थान-

पर देहान्त होना, स्वर्गवास होना, दिवगत होना, वैकुण्ठ लाभ होना, गगालाभ होना कहा जाता है, पर अवतारो आदिके लिए निर्वाण शब्द आता है। इसी प्रकार दूकान बन्द करनेको दूकान बढाना, चितासे हड्डियोको इकट्ठा करनेको फूल चुगना कहते है। दिया बुझानेको दिया बढाना कहते है, क्योकि दिया वशका बुझता है। 'किवाड बन्द करने'को 'किवाड देना' कहते है। होली जलाना कहनेके स्थानपर होली मगलाना बोलते है। चूडियाँ हिन्दू स्त्रियोका सुहाग-चिह्न है। विधवा होनेपर ही इन्हें तोडते है। बीचमे चूडी टूटनेको चूडी होना, चूडी बढना, चूडी बिसमना तथा मौलना भी कहते है। नासमझ लडके-लडकियोको चूडी टूट गयी कहनेपर घरोमे हर दिन फटकार सुननी पडती है। स्त्रियाँ साँप-को देवता, बिल्लीको कलमुँही, भूतप्रेतको उपरला उपरी, या ऊपरी हवा लगना कहती है। गर्भ रहनेको दिन चढना, पाँव भारी होना या आस होना, उम्मीद होना कहा जाता है। अमेरिकामें स्त्रियाँ टाँग शब्दके स्थानपर अग (limb) कहती हैं। इससे एक बात और प्रकट है, उक्ति सस्कारका सर्वोत्तम अध्ययन-क्षेत्र स्त्रियोकी भाषा है।

कभी-कभी ऐसा देखा गया है कि कुछ शब्दोका प्रयोग स्थानभेदसे भी बदल जाता है। दिल्लीके आसपास 'बच्चेको रखना'का मतलब छोटी आयुके मरे हुए बालकको दबाना होता है। पर एक बार हमने खँडवाके पास बच्चेको रख आनाका आशय 'बच्चेको घर छोड आओ' भी सुना था।

इसी प्रकार गँवारू शब्दोके स्थानपर अच्छे शब्दोका प्रयोग किया जाता है, जैसे रोटी भकोसना या ठूँसना, घग्गड या खसम (पति), धराजा आदिके बदले भोजन करना, पतिदेव, बैठिए आदि शब्द बोले जाते हैं।

हिन्दीमे अठावनी, सुनावनी, तेरहवी, बरसी, श्राद्ध, काज (नुक्ता, मृतक भोज) आदि शब्द अशुभ माने जाते है, क्योकि इनका प्रयोग मृत जीवोसे सम्बन्ध रखनेवाले कामोसे है। इनके विपरीत छठी, दशूठन, वर्षगाँठ आदि शुभ शब्द है।

६. शिष्टाचारके शब्द

किसी व्यक्ति, वर्ग, समाज तथा भाषाकी सभ्यता और संस्कृति उसके उन शब्दोंसे झलकती है, जिन्हें वे एक-दूसरेको सम्बोधन करने या उनसे बातचीत करनेमें प्रयोग करते हैं। बड़ोंका आदर या छोटोंसे स्नेह, विनय या प्रेम-भरे शब्दोंके प्रयोगसे ही प्रकट होता है। हमारे यहाँ पहले इस आपसी मान-आदर, शिष्टता, विनय या अदबका हर बातमें बड़ा ध्यान रखा जाता था। आपसी व्यवहारमें शिष्टता तथा आत्मीयताका पूरा पुट होता था। यह शिष्टता हमारे जीवनके क्षेत्रमें शब्दों तथा व्यावहारिक कर्त्तव्योंसे मालूम होती थी। शिष्टाचारकी शिक्षा हमारी शिक्षा-दीक्षा तथा घरेलू प्रशिक्षणका महत्त्वपूर्ण अंग थी। बड़ोंकी संगति, सभा-सोसायटियों तथा राजदरबारसे शिष्टता समाजके हर वर्गमें पहुँचती थी। राजदरबारके पेचीदा विनय नियम, पत्रोंमें आदरसूचक लम्बे-लम्बे शब्द तथा वाक्य और लखनवी तकल्लुफ (शिष्टाचार) इस शिष्टाचारकी एक अति थी, तो आधे नाम और वे भी बिगाड़कर बोलना और बड़ोंका खुला अनादर तथा उच्छृंखलता अशिष्टाचारकी अति है। भाषामें शिष्ट शब्दोंकी कमी नहीं है। हमारी बोलचालमें भी हरएक वर्ण या जातिके लोगोंको सम्बोधन करनेके लिए शिष्ट शब्द नियत थे, जैसे ब्राह्मणको पण्डितजी, दादाजी, महाराज आदि, क्षत्रिय राजपूतोंको ठाकुर, रावजी, सरकार आदि, वैश्यको महाजन, सेठ, साहू, साहूजी, लालाजी आदि, भंगीको महतर, जमादार, पहलवान आदि, अहीर, जाट आदिको चौधरी, चौधरी साहब, भाटको रायजी, नाईको ठाकुर, कुम्हारको प्रजापत, सिक्खोंको सरदारजी, आर्यसमाजीको महाशय, मुसलमान, पठान आदिको खान साहब, सैयद साहब, मिर्जा साहब आदि, दूसरे मुसलमानोंको शेख साहब, मियाँ साहब आदि, हिन्दू विद्वान्को पण्डितजी, मुसलमान विद्वान्को मौलाना साहब, अन्धेको सूरदास, साधुओंको महात्माजी, मुसलमान फकीरों-को साईं साहब, शाह साहब आदि।

हर-एक वडे स्त्री-पुरुषको अपने माँ-वापकी आयु या नातेकी अपेक्षा दादाजी, तायाजी, काकाजी, वडे भाई, दादी, ताई, चाची, वहनजी आदिके शिष्ट नामोसे पुकारा जाता था। सामनेवाले, वडे या वरावरवालेके लिए आप आम शब्द था। छोटेको तुम भी कह लेते हैं। वडोके लिए तू और तुमका प्रयोग करना गँवारूपन और अशिष्टता है। अव नामसे पहले श्री लगता है और पुकारनेमें ट्राम तथा वसके कण्डक्टर, पुलिसमैन तथा ताँगेवाले तक श्रीमान् कहकर सम्वोधन करते हैं जो एक अच्छा चिह्न है। नाम आदि पूछनेके लिए आपका शुभ नाम, स्थान पूछनेके लिए आपका शुभ स्थान कहते हैं। पर हिन्दीमें गाली-गलौचके गन्दे शब्दोकी भी कमी नही है। जो यहाँके पुलिसवालो, ताँगेवालो, देहाती किसानो तथा हर-एक छोटे-वडेकी ज़वानपर चढे हुए है। इनका प्रयोग वन्द होना चाहिए। उर्दूमें अपना निवासस्थान वतानेके लिए 'वन्देका गरीवखाना दिल्ली है' कहते है अर्थात् अपने मकानको गरीवखाना वोलना शिष्टताकी निशानी है। इसी प्रकार आइए, पधारिए, बैठिए, भोजन कीजिए, कृपा करके, धन्यवाद, क्या सेवा कर सकता हूँ ?, कष्ट दीजिए, दर्शन दीजिए, क्षमा कीजिए, आभारी हूँ, सेवक, किसीके नामके वाद तथा उत्तरमें जी, या साहव आदि कहना विनय तथा शिष्टताके शब्द और वाक्य हैं।

अर्थ-सम्वन्धी ऊपरके सारे विवेचनसे यह स्पष्ट है कि शब्दोंके अर्थोंमे फैलाव, सकुचन और अर्थों आदिका आगमन हर समय भिन्न-भिन्न कारणोसे होता रहता है। जनता और विद्वान् अपनी आवश्यकताएँ पुराने शब्दोसे ही अनेक ढगसे पूरा करते रहते है। नये पारिभाषिक शब्द गढनेके साथ-साथ समझ-बूझके साथ पुराने शब्दोंसे भी काम लेना अत्यन्त आवश्यक है।

शब्दोकी अर्थ-सम्वन्धी चर्चाके प्रसंगमें एक अन्तिम वात और है—पुराने शब्दोका लोप और नये शब्दोका जन्म। नये-नये आविष्कार, नयी-नयी खोजें, नये-नये फैशन तथा दूसरी नयी आवश्यकताएँ भाषामें नये-नये

शब्दोंको जन्म देती रहती है। ठीक ऐसे ही सामाजिक रहन-सहन, धार्मिक विचार तथा क्रियाकाण्ड, राजनैतिक क्रान्तियाँ, पुराने आर्थिक ढाँचे तथा अर्थ-व्यवस्था, भोग-उपभोगके पुराने साधनोंमें हेरफेर होनेसे पुराने शब्द काम देनेमे अशक्त होनेसे अनुपयोगी होकर चलन-बाहर या गैर-टकसाली हो गये है। बहुत-से ऐसे शब्द हैं, जिनका नाम आजके कोशोमे भी नही मिलता, केवल साहित्यमें ढूँढनेसे वे मिलेंगे और जो शब्द केवल बोलचालमे थे, साहित्यमे लिपिबद्ध नही हुए थे, उनका तो नाम-निशान तक मिट गया। इसलिए आज जो शब्द जनपदीय बोलियोमे प्रचलित हैं, उनको सग्रह करनेकी बडी आवश्यकता है, कही ऐसा न हो कि दस-बीस वर्ष बाद वे भी लुप्त हो जायें। कोशोमे शब्दोका संग्रह होनेके अतिरिक्त इनको सुरक्षित रखनेका एक ढग यह है, कि लोकगीत, लोककथाएँ, लोकोक्तियाँ, मुहावरे आदि संग्रह किये जायें। इसके अतिरिक्त हमारे लेखकोंको जन-जीवन सम्बन्धी साहित्यमे ग्रामीण तथा लोक-प्रचलित शब्दोको समझकर स्थान देना चाहिए। ये शब्द बडे अर्थवान्, जँचे-तुले और प्राणवान् होते है। इनसे भाषामें जान आयेगी। शब्दोका साहित्य बाहर होना, या बोलचाल बाहर होना भी उनका एक प्रकारका लोप ही है। और जब एक शब्दका अर्थ पलट जाता है, तब भी उस शब्दको लुप्त अर्थकी दृष्टिसे नष्ट हुआ ही समझना चाहिए।

•

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

कटवाँ शब्द

समासके अतिरिक्त शब्द-सक्षेपके लिए शब्दोको काटकर छोटे शब्द बनाना एक उपविधि या सहायक विधि है। ऐसे शब्दोको कटवाँ शब्द (Clipped words) कहते है, जैसे रामचन्द्रको राम, मोटरकारको मोटर या कार कहना। कटवाँ शब्द पूरे शब्दोके साथ-साथ भाषामें चलते रहते है, पर कभी-कभी ये कटवाँ शब्द पूरे शब्दोको पूर्ण रूपसे दबा भी लेते है। इन दबे हुए पूरे शब्दोको कुछ विद्वानोके सिवाय साधारण शिक्षित स्त्री-पुरुष नही जानते।

कटवाँ शब्द बनाये जानेके दो मुख्य कारण हैं, एक तो अशसे पूर्णका ज्ञान होना और दूसरे प्रयास-लाघवता। जब शब्दाशको बोलने तथा सुननेसे ही आदमीका काम चल जाये, तब पूरा शब्द बोलनेका कष्ट क्यो उठाया जाये ? छोटे शब्दोके उच्चारणमे मुखके अगोको कम प्रयत्न या काम करना पडता है और उन्हे समझनेमे कम समय भी लगता है। आधुनिक सभी भाषाओका झुकाव छोटेसे छोटे शब्दोकी तरफ है।[1]

कटवाँ शब्दोका बडा क्षेत्र बोलचालकी भाषा होती है जहाँसे वे शब्द साहित्यमें पहुँच जाते है। जब कि अँगरेज़ीमे बोल-चालकी भाषामे कटवाँ शब्दोकी बडी सख्या है, हिन्दीमें बोलचालमें भी कटवाँ शब्द कम आते हैं, केवल पुकारने आदिमे कटवाँ शब्दोका प्रयोग किया जाता है। हिन्दीमें

१. ओटो यास्परसन लिखित Language, Its Nature, Development and Origin, पृ० ३२८।

ऐसे शब्दोंके अभावका बड़ा कारण बोलचालकी भाषा तथा कटवाँ शब्द बनानेकी विधिकी उपेक्षा ही हो सकती है।

कॉलेजों और यूनिवर्सिटियोंमें परीक्षाओंके लिए एग्जैम्ज (Examinations से Exams) गणितके लिए मैथ्स (Mathematics से Maths) और प्रयोगशालाके लिए लैब (Laboratory से Lab) खूब प्रयुक्त होते हैं। अँगरेज़ीके कई कटवाँ शब्द हिन्दीमें भी स्थान पा गये हैं। नमूनेके तौरपर बहुत चलनेवाले शब्द ही यहाँ दिये जाते हैं। बहुत-से बड़े-बड़े आदमी जाड़ोंमें चैस्टर पहनते हैं। चैस्टर साधारण कोटसे बड़ा और ओवरकोटसे छोटा होता है। इसे एक अँगरेज़ नवाब चैस्टरफील्ड-ने इग्लैण्डमें जारी किया था और उसके नामपर इसे चैस्टरफील्ड कोट कहते थे, पर धीरे-धीरे उस कोटका नाम केवल चैस्टर रह गया। बड़ी-बड़ी कोठियोंमें मिलने-जुलनेका सजा हुआ एक कमरा होता है, जिसे ड्राइंग रूम (Drawing Room) कहते हैं। आरम्भमें उसको विद्ड्राइंग रूम (Withdrawing Room) कहते थे। फोटोग्राफको फोटो सभी बोलते तथा लिखते हैं। ऐसे ही टेलीफोनको फोन कहते हैं और इससे हिन्दीमें फोन करना क्रिया भी बन गयी है। जनताके लिए चलनेवाली मोटरोंको हम बस (Bus) के नामसे पुकारते हैं और यह बस शब्द ओम्नीबस (Omnibus) से बना है। बाइसिकलको बाइक तथा माइक्रोफोनको माइक बोला जाता है, पर ये हिन्दीमें कम चलते हैं। इनके अँगरेज़ी हिज्जे (Bike, Mike) भी बदल गये हैं। कॉपी-बुकको कॉपी कहा जाता है, जो अँगरेज़ीमें अशुद्ध है पर हिन्दीमें शुद्ध।

संस्कृत जीवसे हिन्दीवालोंने कटवाँ शब्द 'जी' बनाया। इससे 'जिया' [illegible] अर्थमें बना और गीतोंमें आ गया जैसे 'जिया मोरा [illegible]'। इसी 'जी'को फारसी शब्द 'जान'के साथ जोड़कर 'जीजान' बना। [illegible]-में और प्रयोगमें प्रायः इसी प्रक्रियाका प्रयोग होता है।

हिन्दीमें आनेवाले कटवाँ शब्दोंकी खोज होनी चाहिए और इन

प्रक्रियाको प्रश्रय भी मिलना चाहिए। वह दिन दूर नही है, जब कॉलिजो तथा विश्वविद्यालयोके विद्यार्थी और जनता हिन्दी शब्दोके कटवाँ रूप बनाकर अधिकाधिक चलायेगी।

कटवाँ शब्द बनानेके नीचे लिखे नियम है —

१ शब्दके आरम्भ भागको छोडकर अन्तिम भागका उच्चारण. जैसे, दीन-दयालको दयाल। इस विधिका प्रयोग बच्चे अधिक करते हैं।

२ शब्दके अन्तिम भागको छोडकर अगले भागको बोलना है, जैसे देवदत्तका देव, रामचन्द्रका राम। रवीन्द्रनाथ ठाकुरका रवि बाबू कहा जाता था। इस विधिको प्रायः बडी आयुके आदमी करते है।

३ कभी-कभी शब्दोके प्रत्यय या उपसर्ग उडा दिये जाते है, जैसे ड्राइग रूमके ऊपर दिये उदाहरणमें 'विद' हटा दिया गया और 'बस' से 'ओमनी।

४ कभी-कभी शब्दके बीचका भाग ही आगे-पीछेके भागोके कट जानेसे नये शब्दका रूप धारण कर लेता है, जैसे द्वौमे-से 'व' को लेकर 'ब' बना लिया गया है।

मुख्य बात यह हैं कि कटवाँ शब्द बनानेमें बोलने और लिखने-पढनेकी सुविधाएँ ही देखी जाती है, उन्हीकी ओर सर्वाधिक ध्यान रहता है। विद्वानो तथा जनताको कटवाँ शब्दोकी लघुतासे भी जब सन्तोष नही होता, तो वे साकेतिक अक्षरोका प्रयोग शुरू करते है, इनका वर्णन आगेके परिच्छेदमें है।

■

सोलहवाँ परिच्छेद

ॐ (ओ३म्) शैलीके सांकेतिक शब्द

इन्हे अँगरेज़ीमें 'एब्रिविएशन' कहते है। कई शब्दोंके आद्य या पहलेके अक्षरोंको मिलाकर नये शब्द बनानेकी विधि बहुत पुरानी है। यह विधि इतनी ही पुरानी है, जितना पुराना ॐ (ओ३म्) शब्द है। ऐसे कुछ तत्सम शब्द हिन्दीमें आते हे। शायद खोज करनेपर और भी अनेक शब्द मिलें। अँगरेज़ीमें ऐसे बहुत से शब्द है। हिन्दीमे उनमे-से कुछ अँगरेजी शब्दोंका प्रयोग भी बिना किसी झिझकके होता है जैसे यूनेस्को आदि। इस विधिका लाभ यह है, कि पाँच-सात शब्दो या उनसे बने नामोंको संक्षेपमें एक शब्दके द्वारा व्यक्त कर दिया जाता है। पर ऐसे शब्द रूढि बन जाते हैं। एक फॉर्मूले या सूत्रके समान उनके पूरे अर्थको तो बहुत ही कम जानते हैं। ॐका उच्चारण कौन हिन्दीभाषी नहीं करता ? पर उसका अर्थ कुछ विद्वान् ही जानते है।

संस्कृत तथा हिन्दीमे ऐसे शब्दोंके नामकरणके लिए कोई खास पारिभाषिक शब्द नही है। हां, अँगरेज़ीमें ऐसे शब्दोंको 'एक्रोस्टिक वर्ड्स (Acrostic words) कहते है। हिन्दीमे ऐसे शब्दोंको विधिके लक्षणसे 'सांकेतिक शब्द' या नमूनेके लक्षणसे 'ॐ' शैलीके शब्द कहा जा सकता है।

पहले ॐ को ही लीजिए। प्रायः सभी हिन्दू, जैन और बौद्ध मन्त्रोंमें इसे प्रथम स्थान प्राप्त है। यह शब्द 'अ', 'उ', 'म्' तीन अक्षरोंसे

वना है, जो क्रमश विष्णु, शिव और ब्रह्माके लिए आते है।[1] सच्चिदा
सत्, चित्, आनन्द जो तीन शब्द हैं, उनके लिए भी आनेवाले तीन अक्ष
ॐ को बना माना जाता है। जैनोकी मान्यताके अनुसार उनके
परमेष्ठी अर्हत्के अशरीरी, (सिद्ध) आचार्य, उपाध्याय और मुनि (साधु
आद्य अक्षर अ + अ + आ + उ + म्की सन्धिसे ॐ बना है।

वदि और सुदिका प्रयोग हिन्दी तिथिको वोलनेमें सभी करते
जैसे—जेठ वदि पचमी, जेठ सुदि पचमी। इन्हें वदी तथा सुदी अ
वोलते है। वदि कृष्ण पक्षके लिए और सुदि शुक्ल पक्षके लिए आता
ये वदि और सुदि शब्द भी इसी तरह वने हैं। बहुल दिवस (कृष्ण दि
के पहले अक्षरो 'ब' और 'दि' से वदि बनता है। वहुल शब्दके सस्कृ
दो अर्थ—१ काला और २ कृष्ण पक्ष होते है।[2] महाकवि कालिदासने
अपने काव्यो 'रघुवश' और 'कुमार सम्भव' में 'वहुल' शब्दका प्र
कृष्णपक्षके अर्थमे किया है।[3] शुक्ल दिवससे इसी प्रकार 'शु' को
वनाकर सुदि बना है। इनका उल्लेख गुप्तकालके शिलालेखोमें मिलता
गुप्तकालका आरम्भ ३२० ई० से है। इसलिए अबसे सोलह-सत्रह
वर्ष पहलेसे यह दोनो शब्द खूब प्रयोगमे आ रहे है।[4] व्यापारी लोग
साधारण जनता आज भी बदि और सुदिका प्रयोग करती है। पर

१, अकारो विष्णुरुद्दिष्ट उकारस्तु महेश्वर.।
मकारस्तु स्मृतो ब्रह्मा प्रणवस्तु त्रयात्मक:॥
—आप्टे-कृत संस्कृत अँगरेजी कोश

२. आप्टे-कृत सस्कृत-अँगरेजी कोश।

३. (अ) प्रादुरास बहुलक्षपाछवि–रघुवश ११. १५।
(आ) करेण भानोर्बहुलावसाने सधुक्ष्यमाणेव शशाकरेखा–कुमारस
७, ८, ४ १३
ये दोनों उद्धरण आप्टे-कृत सस्कृत-अँगरेजी कोशसे दिये गये हैं—ले०।

४ अर्थ विज्ञान और व्याकरण दर्शन, ले० डॉ० कपिलदेव पृ० १२७।

लाग इन्हें बाज़ारू और गँवारू शब्द समझकर इनके स्थानपर कृष्ण पक्ष तथा शुक्ल पक्ष लिखकर अपनी साहित्यिक हिन्दीका परिचय देते हैं और बदि-सुदिमें जो प्रयत्न लाघवता है, उसे नही समझ पाते।

इसी शैलीपर बना शब्द 'चज' (दो आबा चज) पजाबके भूगोलमें आता है। दो आबा चज उस भूखण्डको कहते है, जो चनाब नदी और झेलम नदीके बीचमें स्थित है। यह 'चज' शब्द चनाब और जहलमके आदि अक्षरोंको जोडनेसे बना है। इग्लैण्डमे चार्ल्स द्वितीयके समयमे सन् १६७२ ई० में पांच मन्त्रियोका एक मन्त्रिमण्डल बना था, जो उनके नामोके प्रथम अक्षरोंकी सन्धिसे केवल (cabal) मन्त्रिमण्डल कहलाया। इन मन्त्रियोके नाम क्रमश क्लिफोर्ड, आर्लिगटन, बकिंघम, ऐशले और लाडरडले थे।

दूसरे महायुद्धमें तथा उसके बाद प्रचलित हुए ऐसे कुछ शब्द डोरा (DORA) Defence of the Realm Act, सीएटो (SEATO) South East Asia Treaty Organisation) मीडो (MEDO) (Middle East Defence Organisation) तथा यूनेस्को (UNE-SCO) (United Nations Educational Social and Cultural Organisation) है। भारत यूनेस्कोका सदस्य है। पाकिस्तान सीएटो और मीडोका भी सदस्य है। दूसरे महायुद्धमे आक्रमणकारी हवाई जहाजोंके आनेका पहलेसे पता बतानेवाले अद्भुत यन्त्रका नाम रेडर (RADR) रखा गया, जो Radio Detection and Ranging शब्दोके आदि अक्षरोंको जोडकर बनाया गया था।[1] रेडरके समान हर्मिज भी एक नया यन्त्र इग्लैण्डमे बना है। यह 'Hermes' शब्द Heavy element and radioactive material electromoagnetic Separator का सक्षिप्त रूप है।[2] भला इसका अनुवाद कोई क्या करे? इसी प्रकार सनफेड

---

१. श्रीरामचन्द्र वर्मा लिखित 'अच्छी हिन्दी', पृ० २४७।
२ Indian Express, दिल्ली, ता० ४ फरवरी, ५७।

Special United Nations fund For Economic Development नामक नयी सस्थाका नाम पूरे नामके आदि अक्षरोको मिलाकर बनाया गया है। आरम्भमें इस सस्थाका नाम अनफैड बनता था परन्तु यह ठीक न लगनेके कारण सस्थाके नाममें स्पेशल शब्द लगाकर इसका नाम सन-फैड बनाया गया। पर ऊपरी तौरसे देखते ही सनफैडका अर्थ होगा 'सूरजसे पोषित' जो सस्थाके असली नामके अर्थसे कोसो दूर है। शब्दोके अर्थोंमें कितनी विचित्रता होती है। आजकल हिन्दी समाचार पत्रोमे ये सभी शब्द प्रयुक्त होते हैं।

स्वाधीनताके पश्चात् देशी रियासतोके पुनस्सगठन या पासके प्रान्तोंमें विलीन होनेपर भारतमे एक नये राज्यका निर्माण हुआ था। नाम उसका रखा गया पेप्सू। अपने आठ-नौ वर्षके प्रचलनसे यह शब्द भारत-के इतिहास तथा भूगोलमें एक स्थान पा गया। यह शब्द 'पटियाला एण्ड ईस्ट पजाब स्टेट्स यूनियन' के प्रथम अक्षरोको जोडनेसे बनाया गया था। दिल्लीके गली-कूचो और बाजारोमे लगे पोस्टरोपर मोटे-मोटे अक्षरोमें 'इस्कस' (ISCUS) शब्द पढकर पहले लोग चक्करमें पड गये थे। अन्तमें वे समझे कि यह शब्द भारत और रूसके बीच सास्कृतिक सम्बन्ध जोडनेवाली दिल्लीकी इण्डो सोवियत कलचरल सोसायटी (Indo Soviet Cultural Society) के आदि अक्षरोको जोडकर बनाया गया है। कितना छोटा, आकर्षक और अर्थपूर्ण शब्द है यह!

भारत सरकारको अँगरेज़ीवाले गोई (Goi) कहते हैं, जो (Government of India) के शब्दोके प्रथम अक्षरोको मिलानेसे बनता है। कानपुर, इलाहाबाद, बनारस, आगरा और लखनऊके आदि अक्षरोको मिलाकर 'केबाल' शब्द बन गया और वह हिन्दी पत्रोमे खूब चलता था। हिन्दीमें अब यह केबालका प्रबाल कहा जाना चाहिए यदि इलाहाबादका नाम भी वाराणसीकी तरह सर्वत्र प्रयाग ही चल पडे तो! प्रसिद्ध भाषाशास्त्री डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्याने इसी शैलीपर आद्य-

भारतीय-आर्यभाषाके लिए 'आभाआ भाषा' बनाया है।[1] आभाआ-के अन्तिम 'आ' मे सन्धिके नियमकी उपेक्षा ध्यान देने योग्य है। इसी प्रकार उन्होने 'मभाआ भाषा और 'नभाआ भाषा' शब्द क्रमशः मध्ययुगीन भारतीय आर्यभाषा और नव्य भारतीय आर्यभाषाके लिए बार-बार प्रयोग किया है। उपरोक्त शब्दोमें चाहे कुछ शब्द कितने ही अल्पजीवी हो, पर हमारे ॐ, वदि तथा सुदि तो युग-युगकी टक्करोको झेलकर विश्व-शब्द-सागरमें पर्वतके समान स्थिर खडे हैं और खड़े रहेंगे। अधिकाधिक प्रयोगका यही सुफल होता है।

आशा है कि भविष्यमें जब हमारी सस्थाओ, कारखानो तथा कानूनो-के नाम हिन्दीमें रखनेका रिवाज़ होगा, तब उनके लिए सक्षिप्त नाम इसी शैलीपर रखे जायेंगे।

■

1. भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, पृ० १४६।

सत्रहवाँ परिच्छेद

मिलवाँ या विमिश्र शब्द

भाषामें शब्द-रचनाकी एक और विधि यह है, कि दो शब्दोकी ध्वनि तथा अर्थको कृत्रिमरूपसे मिलाकर दूसरा नया शब्द बनाया जाये। यह काम जान-बूझकर इच्छापूर्वक किया जाता है। इस विधिसे बनाया हुआ एक शब्द दो अर्थ देता है, मानो एक ही सूटकेसमें दो अर्थ हो। ऐसे शब्दोको अँगरेज़ीमे पोर्टमेण्ट शब्द (Portmenteu words) और इस क्रियाको ब्लैण्डिग (Blending) अर्थात् मिलाना कहते है। इस विधिसे बने हुए शब्द हिन्दीमें मिलवाँ या विमिश्र शब्द कहे जा सकते है और इस क्रियाको मिलाना या मिश्रण कहा जा सकता है। जब कि समाससे बने समस्त पद भाषामे सहस्रोकी गिनतीमे होते है, मिलवाँ शब्द अँगुलियो-पर गिने जा सकते है। ऐसे शब्द भाषामे शाब्दिक सक्षेप (Linguistic economy) या प्रयास लाघवताका एक और नमूना पेश करते हैं।

मिलवाँ शब्दोकी आयु बहुत कम होती है और ऐसे शब्द अपने पर्यायवाची शब्दोके साथ साथ भाषामें चलते रहते है, पर कुछ मिलवाँ शब्द तो भाषामें स्थायी स्थान पा लेते हैं। श्री ल्यूइस कैरोलने शब्द रचनाकी इस विधिकी ओर बहुत वर्ष हुए मज़ाकमें सकेत किया था, और उसने ऐसे कई अँगरेज़ी शब्द बनाकर बताये थे। उस समय वे इस बारेमें बहुत गम्भीर न थे, पर बादमें ऐसे कई शब्द भाषामे स्थान पा गये। पर शायद श्री कैरोलको यह बात मालूम न थी, कि जिस विधिका अनुमोदन वह कर रहे थे, भाषाक्षेत्रमें वह शताब्दियोसे प्रचलित थी।

डॉ० स्टीफन उलमैन मिलवाँ शब्दोके बारेमे लिखते हैं 'भाषाकी रचनात्मक विधियो या प्रवृत्तियोमें मिलवाँ शब्दोका महत्त्व सीमित हो सकता है, पर उनमें दूसरी रोचक बातें होती हैं। मनोविश्लेषकोने इसे अन्तश्चेतनाका प्रकाशन कहकर इसकी व्याख्या करनेका प्रयत्न किया है। साहित्यिक आलोचनाको भी इस समस्यासे वास्ता पडा है, क्योकि बहुत-से अँगरेज तथा विदेशी लेखकोने शब्द-मिश्रणको एक शैलीकी रीतिके रूपमें अपनाया है।"[1]

अँगरेज़ीमें ऐसे कई शब्द शताब्दियो पुराने हैं, जैसे क्लैश (clash, clap + crash) के टकरानेका शब्द करना, विरोध करना और फ्लेयर (Flare, flame + glare से झुलमुलाना), भूगोलमें यूरेशिया (यूरोप-एशिया) दोनो महाद्वीपोके लिए बहुत वर्षोंसे चल रहा है। पर कुछ शब्द सर्वथा नये है। अमेरिकावाले आज भी ऐसे कई नये शब्द बनाकर दैनिक बोलचालमें प्रयोगमें ला रहे है, जैसे ब्रच (brunch = breakfast + lunch प्रात कालका नाश्ता और दुपहरकी जलखई), टिनर (tinner = tea + dinner चाय और दिनका भोजन) आदि। ब्रच और टिनर बोलचालमे तो रहेंगे, ही पर साहित्यमें भी कभी-न-कभी आयेंगे ही जैसे वहाँ मोटल शब्द (Motel = motor + hotel मोटरोंकी मरम्मत तथा खाने, ठहरने आदिका स्थान) तो होटलके अनुकरणपर

---

1. "Blends may be of limited importance among the creative processes of language, but they have other points of interest Psycho-analysts have tried to interpret them as manifestations of the subconscious Literary criticism has also had to concern itself with the problem since several writers, British and foreign, have practised blending as a stylistic device".

—Words and Their Use, p. 50

बनकर कुछ ही वर्षोंमे बहुत ही प्रचलित हो गया है। यह मोटल शब्द अनुकरण तथा मिश्रण दोनो शैलियोका अद्भुत उदाहरण है। इस शब्दकी रचनाकी कहानी भी बडी मनोरजक है। अमेरिकामे सहस्रो स्त्री-पुरुष सप्ताहके कामके बाद थकावट उतारने और सैर-सपाटेके लिए अपनी मोटरोमे क्रीडा-स्थलो, जलप्रपातो तथा बाहर दूर नदियो आदिपर जाते है। मार्गमें कही-न-कही किसी भी समय मोटरका बिगड जाना कोई बडी बात नही है। मोटर बिगडनेपर चाहिए उसकी मरम्मत और सवारियोंके लिए खाने-पीनेकी कुछ सामग्री। यदि इत्तेफाकसे मोटर सायकाल या रातको बिगड जाये, तो ठहरनेको स्थान भी चाहिए। बस इन्ही आवश्यकताओको पूरा करनेके लिए वहाँ किसी उत्साही कारीगरने मोटरोकी मरम्मत, खाने-पीने तथा ठहरनेका कुछ साधारण-सा प्रबन्ध किसी क्रीडा-स्थलके पास कर दिया। उसका काम चल निकला। फिर क्या था, धीरे-धीरे उसने अपना काम बढाया, और अपने इस नये ढगके मरम्मत-घर तथा विश्राम-घरका नाम 'मोटल' रख दिया। आज मोटल व्यवसाय अमेरिकामें खूब चल गया है और वहाँ सहस्रो मोटल खुल गये हैं। एक नये व्यवसायने भाषामें एक छोटे तथा अर्थपूर्ण नये शब्दको जन्म दे दिया। कोई आश्चर्य न होगा, यदि निकट भविष्यमें भारत तथा दूसरे देशोमें होटलोके समान मोटलोका भी जाल फैल जाये। मोटलको होटलके ढर्रेपर बना शब्द भी कहा जा सकता है।

रूसकी कॅम्युनिस्ट पार्टीने साम्यवादियोकी दो अन्तर्राष्ट्रीय सस्थाएँ बनायी। एकका नाम था कमिण्टर्न (Commintern = comm + intern) और दूसरीका नाम था कमिन्फौर्म (Comminform – Comm + inform)। ये दोनो शब्द क्रमश कॅम्यूनिस्ट तथा इण्टरनेशनल और कॅम्युनिस्ट तथा इन्फॉरमेशनके शुरूके आधे-आधे भागोसे मिलकर बने हैं। इतिहासमे इन दोनो सस्थाओका नाम आता है। Constituent Assembly के लिए इसी विधिसे (Consembly)

शब्द बना लिया गया है। पशुओंकी नयी-नयी नसलें पैदा करनेके लिए अलग-अलग जातिके मादा और नर पशुओंको मिलानेसे पैदा होनेवाले पशुओंके नाम इसी विधिसे रखे जा रहे हैं। नर शेर और मादा चीतेके बच्चेको Lion + tiger के मेलसे लाईगर (Liger) बनाया जिसे हम शीता शेर-चीतासे (श + ईता) कह सकते हैं। और नर चीते और मादा शेरनीसे पैदा होनेवाले बच्चेको टाइगर-लायनके मेलसे 'टायन' (tion) बनाया, हिन्दीमें चीता + शेरके च + एरके ऐसे बच्चेको चेर नहीं कह सकते ?

हिन्दीमें चलते ऐसे ही कुछ शब्द ये हैं। फूलेल (फूल + तेलके मिश्रणसे बना) है, गलतीसे बहुत-से स्त्री-पुरुष तेल-फुलेल बोलते हैं, जिसमें तेल अनावश्यक होते हुए भी चलता है। भाषा-विज्ञानका भारोपीय शब्द इसी प्रकार बना है। बिहारमें प्रचलित बिसनोटी (बढ़िया, चौड़ी, पतली तथा नमकीन पूरी) बेसन + रोटीके मिश्रणसे बना है। यह बेसन-मिली रोटी नहीं, बल्कि बेसन-भरी पूरी होती है। खानेमें स्वादिष्ट और दो-चार दिन न बिगड़नेवाली होनेके कारण तीज-त्योहारोंपर खूब बनती है। पंजाबमें तीन दोआबोंके नाम दोआबा बिस्त जालन्धर, दोआबा बारी, दोआबा रचना हैं जो क्रमशः सतलुज और ब्यास नदी, ब्यास और रावी नदी तथा रावी और चनाब नदीके बीचमें भूखण्ड हैं और इन्हीं नदियोंके नामोंके मिश्रणसे बने हैं। उर्दूके प्रसिद्ध कवि तथा शब्द-रचयिता स्व० ब्रजमोहन दत्तात्रय कैफीने गंगा और जमुनाके बीचके दोआबेके लिए इसी शैलीपर दोआबा गजम(न) नाम सुझाया था। डॉ० एस० के० बरमन लि० कलकत्तेके औषध तथा शृंगार वस्तुओंके निर्माता हैं। इन्होंने अपना नया नाम इसी शैलीपर डाबर (डॉक्टर + बरमन) लि० रखा है। इसी प्रकार बम्बईके एक वैद्य [illegible] नाम देवकरण [illegible] [illegible] लि० है। इन्होंने इसी शैलीपर [illegible] नाम [illegible] रखा है, जिसका [illegible] शब्द देवकरन-नानजी [illegible] [illegible] (दे — ना । [illegible]

बना है। नाम छोटा तथा सरल तो है, साथ ही देना विशेषणके रूपमें लेनाके विपरीत अर्थका बोधक भी है।

हरियाना प्रदेशमें बोलचालमें एक शब्द 'मका' आता है, प्रयोग इसका इस तरह होता है, "मका, आप कहाँ गये थे?" यह मका शब्द 'मैंने कहा' वाक्यका संक्षिप्त रूप कुछ इसी विधिसे बना है। 'मन्ने' शब्द भी 'मैंने' से बन गया पर ये बोलचालमें ही आते हैं।

गोचनी (गेहूँ-चना) से मिलकर बना है, जिसका अर्थ गेहूँ और चनेके मेलसे बना अनाज है। हरियाना, पंजाब और मेरठमें यह शब्द खूब चलता है। जनता गेहूँ और चनेको मिलाकर पिसवा लेती है और मज़ेसे गोचनीकी रोटी खाती है।

'ऊटपटाँग' बातें कभी-कभी आपने सुनी होगी। यह ऊटपटाँग विशेषणके तौरपर प्रयुक्त हुआ है। अर्थ इसके हैं अनर्थक, अतिकठिन, दुष्कर आदि। यह ऊटपटाँग शब्द ऊँट-पर-टाँग रखने-जैसे दुष्कर कामका बोधक बन गया। ऊटपटाँग शब्दमें पर के र का लोप हो गया है। नीबूके शरबतको सिकंजबीन कहते हैं जो सिरका + अंजबीन (शहद)से मिलकर बना है। बोलनेमें 'सिकंजी' अधिक चलता है।

मिश्रित क्रियाओंका उल्लेख हिन्दी व्याकरणमें देखनेमें नहीं आया। मालूम नहीं क्यों इस तरफ किसीका ध्यान नहीं गया। प्रो० सैयद वहीद-उद्दीन 'सलीम' पानीपतीने मिश्रित क्रियाओंके भी कुछ उदाहरण दिये हैं[1] जिनका उल्लेख इस पुस्तकके क्रिया परिच्छेदमें किया गया है। पर यहाँ उनमें से दो उदाहरण दिये जाते हैं। भकसना क्रिया (भैंसकी तरह खाना) भैंस + खानासे बनी है। इसे भकोसनो भी बोलते हैं, जो भकसनाका ही दूसरा रूप है। इसी तरह सटपटाना (सिट्टी (बुद्धि) + पट + आनासे) बना है। उक्त सभी शब्दोंकी दूसरी व्युत्पत्ति की जानेसे भी हमारी मुख्य

---

१ वजा इस्तलाहात, पृ० १५२।

बात प्रमाणित होती है अर्थात् इस प्रकार शब्द-रचनाकी प्रक्रिया हिन्दीमें भी प्रचलित है।

यह विधि व्यापारिक तथा व्यावसायिक संस्थाओंके लिए तारके पते और दो देशोंके नामोंसे एक शब्द बनानेमें अधिक काम आती है, पर हिन्दीमें अभी इसका रिवाज नहीं हुआ है। पाक-भारत सम्बन्ध पाक-अमेरिकी समझौता, भार-अफगान व्यापार, आंग्ल-भारतीय सद्भावना, ऐफ्रो एशियाई (न) (Afro-Asian) जागरण आदि ऐसे कुछ मिलवाँ शब्द सुझाये जा सकते हैं। इसी प्रकार अँगोठीके ढर्रेपर इसी विधिसे बिजीठी (न) या बिजलीठी (न) (बिजली + अँगीठी) (electric heater), गैसीठी (न) (गैस + अँगीठी) शब्द, (gas heater) तथा अनीठी (न) (अनु-ईठी, अनुके 'उ' का लोप करके (atomic heater) गढ़े जा सकते हैं।

जब कि मिलवाँ शब्द बनानेका क्षेत्र बड़ा विशाल है, इस शैलीपर बने नये हिन्दी पारिभाषिक शब्द देखनेमें बहुत कम आये हैं। क्या इस शब्द रचनाकी ओर उपेक्षा ही न माना जाये? मिलवाँ शब्द भाषामें समस्त पदोंके बाद आये होंगे, पर वे कब आये, यह भाषा-विज्ञानके इतिहासज्ञोंके विचारका विषय है, यहाँ प्रतिपाद्य नहीं। संस्कृतके व्याकरणमें नामोंके पहले, दूसरे, तीसरे या चौथे स्वरके उपरान्त बचे हुए भागको विभिन्न अवस्थाओंमें छोड़ा जा सकता है।[1]

मिलवाँ शब्दोंके बनानेके नीचे लिखे नियम हैं—

१. मिलाये जानेवाले दोनों शब्दोंके आरम्भके अक्षरों (syllables) को मिलाना, जैसे देना बैंक, दादर आदि।

२. मिलाये जानेवाले शब्दोंमेंसे पहले शब्दका आरम्भका अक्षर और

---

1 Provisional List of Technical Terms in Hindi [illegible] P 1[illegible]

दूसरे शब्दका अन्तिम अक्षर मिलाना, जैसे
+ lunch) आदि ।

३ आवश्यकता पडनेपर दोनो शब्दोमे
का अक्षर और दूसरे शब्दका पूरा श
यूरेशिया, फुलेल और विसनौटो आदि ।

आवश्यकतानुसार शब्दोके वर्णोंमें
सकता है ।

●

जा चुका है।

हिन्दीमे घुमक्कड शब्द प्रसिद्ध है। ऐसे ही दूसरे शब्द भुलक्कड, फक्कड (निर्धन और मस्त) आदि है। इन्ही शब्दोके ढर्रेपर अत्यधिक शराव पीनेवालेके लिए पियक्कड (न) शब्द बना और बहुत सोनेवाले-के लिए 'कुम्भकरण' के अतिरिक्त सुवक्कड (न) कहा जा सकता है। मासी (मौसी) की नकलपर मामी, चाची, भाभी, दादी आदि समझिए। ताती न होकर ताई हुआ, पुलिंग ताया।[1] मुगलानी, वकीलनी, मास्टरानी, मास्टरनी, तथा डॉक्टरनी आदि शब्द पण्डितानी, जाटनी तथा नटनी आदिके ढर्रेपर बने है। नीलसे नीला भी पीलाके अनुकरण-पर बना है।

लोहिया, कापडिया, तथा बनिया आदि प्रसिद्ध शब्द है, जो लोहा, कपड़ा तथा वनज आदि नामोसे व्यवसाय-वाचक शब्द बने है। चामडिया, रुइया, लूणिया, आदि शब्द भी इसी वर्गके शब्द है। अभी पन्द्रह-बीस वर्षसे दिल्ली तथा उसके आसपासके इलाकोमे दूधिया (न) शब्द गाँवसे दूध मोल लाकर दिल्लीके हलवाइयोको दूध देनेका व्यवसाय करनेवालोके अर्थमें प्रचलित हुआ है। ये ग्वालो तथा घोसियोसे सर्वथा भिन्न होते है। नया व्यवसाय चला, उसके लिए नया शब्द पहले शब्दोके ढर्रेपर गढ लिया गया। सन्देहकी कोई गुजाइश नही रही। दूधिया कहनेसे दूधिया रगका भ्रम नही होता, कारण, शब्दका अर्थ उसके प्रयोग या प्रसगसे निश्चित होता है। दिल्लीके आसपास आज कोई दस-पन्द्रह हज़ार दूधिये अवश्य होगे।

आलूके ढर्रेपर कचालू, जर्दालू, रतालू, और शफतालू बना लिये गये। व्रत (वरत) के ढर्रेपर चरत और बरातीके ढर्रेपर सराती शब्द बन गये। सराती बेटीवालेके यहाँ आये हुए अतिथियोको कहते है।

---

१ हिन्दी निरुक्त, पृ० १२०।

संस्कृत प्रत्यय 'अनीय' को जोड़नेसे बने पठनीय, संग्रहणीय, विचारणी[illegible] तथा दर्शनीय आदि बहुत-से संस्कृत शब्द तत्सम रूपमें हिन्दीमें आते हैं। इन्हींके ढरेंपर 'भेजनीय' (न) शब्द बन सकता है। जैसे 'युद्ध काल[illegible] सरकार केवल उन्ही समाचारोको विदेशोमे भेजती है, जिन्हें वह भेजनी[illegible] समझती है, पर अभेजनीय समाचारोको रोक लेती है।"

गुलाबी, अंगूरी, बादामी, तरबूजी, प्याजी, ताकी तथा आसमान[illegible] आदि रंगवाचक शब्द फारसी शब्दोंसे और स्लेटी (न) तथा चॉकलेट[illegible] (न) शब्द अँगरेजी शब्दोंसे कपूरी तथा धानी रंगोके नामोके ढरेंपर '[illegible] प्रत्यय लगानेसे बने है। चम्पई रंगके ढरेंपर हिरनई (न) रंग (fawn Colour) और ऊँटई (न) रंग (Camel Colour) बनाये [illegible] सकते है। हिरनी रंग कहनेसे गलती होनेका डर रहता है।

बम्बईको अँगरेजीमे "बौम्बे' कहते है और इसीके ढरेंपर [illegible] पास बसे हुए दूसरे नये शहरका नाम ट्रौम्बे (न) (Trombay) र[illegible] गया है जैसे कि अमेरिकामें होटलके ढरेंपर मोटल शब्द बना।

ढरेंपर समस्त शब्द भी बनते हैं जैसे, हमारे नगरके दो स्थानो[illegible] [illegible] भावके अनुकरण या ढरेंपर गढ़ा गया नाम [illegible] [illegible] से हिन्दी-भाषी नवयुवकने अँगरेजी नामसे [illegible] [illegible] नाम रखनेपर बड़ा जोर दिया था।

हैं। इसी प्रकार जी हुज़ूर (yes-man) के ढर्रेपर ना-हुज़ूर (no-man) बनाया जा सकता है। फाँसीके ढर्रेपर विजली और फाँसीको मिलानेमे बिजलाँसी (न) Electrocution बन सकता है, अर्थ होगा इसका बिजली-की फाँसी। क्रिया बनेगी बिजलाँसी देना (न) (Electrocute)। जिस पद्धतिसे अँगरेजी शब्द (Electrocute) बना है, विजलाँसी देना उसी पद्धतिसे क्यो नही बनाया जा सकता।

ढर्रेपर बने बहुत-से नये शब्दोके उदाहरण और दिये जा सकते है। कहनेका आशय यही है कि अनुरूपताकी पद्धतिपर हिन्दीमे भी अनेक नये साधारण तथा पारिभाषिक शब्द और समस्त पद बनाये जा सकते है और सुविधानुसार बनाने भी चाहिए। किन्तु ऐसे शब्द बनाते समय सुरुचिका पूरा ध्यान रखना चाहिए, सन्धिके नियमो, सस्कृत, हिन्दी, फारसी आदि-के उपसर्गों या प्रत्ययोके प्रयोगके परम्परागत नियमो तथा शाब्दिक अनुवाद आदिके चक्करमें अधिक न पडना चाहिए। वैसे इन बातोका भी यथावसर तो ध्यान रखना ही पडता है।

पूर्वोन्मुखी रचना

भाषामें शब्द-रचनाकी एक उपविधि यह है, कि चालू शब्दोके कुछ अन्तिम भाग या अन्तिम वर्णका लोप या परिवर्तन करके नया शब्द बनाया जाये। इस विधिको अँगरेज़ीमें 'बैक फॉरमेशन' कहते है। हम इसे 'पूर्वोन्मुखी रचना' कह सकते हैं। इस विधिसे बने बहुत ही कम हिन्दी शब्द मिलते है, इतने कम कि गिनतीमे आध दर्जन भी नही है। इसका यह आशय नही है, कि इससे अधिक शब्द हिन्दीमे होगे ही नही, पर कही ऐसे शब्दोका सग्रह न होनेसे अत्यधिक प्रयत्न करनेपर ही हिन्दी पाठक ऐसे शब्दोको ढूँढ सकेंगे। अँगरेज़ीमे एक शब्द फ्यूगलमैन (Fugle-man) है, जिसका अर्थ वह सिपाही है, जो रेजिमेण्ट आदिके सामने खडा होकर ड्रिल आदिके नमूने तथा समय बतानेका काम करता है। ·इसका

मूल जर्मन शब्द फ्लूगेलमान (Flugel mann) माना जाता है flugel (wing) + Mann = man)। आजकल स्कूलोंमें जब सब विद्यार्थियों-की सामूहिक ड्रिल होती है तो एक विद्यार्थी ड्रिल शिक्षकके आदेशोंके अनुसार सब विद्यार्थियोंको ड्रिलके नमूने ऊँचे स्थानसे देता है। अंगरेजोंमें जब इस क्रियाके भावको प्रकट करनेके लिए नया क्रिया-शब्द बनानेकी आवश्यकता पड़ी, तो किसीने 'फ्यूगल्मैन'के अन्तिम भागको हटाकर 'फ्यूगल' (Fugle) क्रिया बना ली। इसीको बैक फॉर्मेशन कहते हैं। इसी प्रकार लेजी (Lazy) शब्दका अर्थ सुस्त है। उससे क्रिया बनानेके लिए लेजीके अन्तिम अक्षर वाई (y) को ई (e) से बदलकर लेज (laze) क्रिया बना लिया, जिसका अर्थ सुस्ताना हुआ।

हिन्दीमें नामधातु बनानेके लिए तो संज्ञाओं या विशेषणोंके अन्तमें इयाना, आना आदि प्रत्यय लगाये जाते हैं, जैसे हाथसे हथियाना, मुक्कोंसे मुकियाना, लातसे लतियाना तथा सुस्तसे सुस्ताना आदि। इसलिए हिन्दीमें इस विधिसे क्रिया बनानेका प्रश्न पैदा नहीं होता। पर कोई प्रगतिशील लेखक अपनी प्रतिभाके बलपर 'पूर्वोन्मुखी रचना'के अनुसार कुछ नयी क्रियाएँ बना दे तो उसका स्वागत करना चाहिए। हिन्दीमें इस विधिसे बने शब्दोंके दो उदाहरण हमें मिले हैं। संस्कृत यष्टिसे हिन्दीमें लाठी बना। स्तम्भ या खम्भाके लिए लाठ शब्द किस व्यक्तिने बनाया? उसने 'पूर्वोन्मुखी रचना'की विधिके अनुसार लाठीकी 'ई' का लोप कर दिया और लाठ शब्द स्तम्भके लिए प्रचलित कर दिया। इसी प्रकार

प्राचीनवर्ती शब्द

शब्द-रचनाकी एक उपविधि यह है कि पुराने शब्दोको नये अर्थोमें, प्रयुक्त किया जाये। सरसरी तौरसे यह विधि अर्थ-परिवर्तनसे नये शब्द बनानेकी विधि-सी मालूम होती है, और इसलिए इस अश तक उसीके अन्तर्गत समझो जा सकती है, पर वास्तवमे यह उपविधि उमसे इस अपेक्षामे भिन्न है, कि इसमे अत्यन्त पुराने शब्दोको नये अर्थों या भावोको व्यक्त करनेके लिए काममे लाया जाता है। इसमे सभ्यताकी पहली अवस्थाओकी ओर मुडकर या अपने पूर्वजोके चरित्रकी ओर फिरकर अपनी नयी वस्तुओके नामको सूचित करनेवाले शब्द पुरानी बोलियोमे-से लेते है। इसलिए अँगरेज़ीमे ऐसे शब्दोको 'थ्रोबैक्स' कहते है। हमारे निरुक्तमे ऐसे शब्दोके लिए कोई पारिभाषिक शब्द नियत नही है, इसलिए उन्हें 'प्राचीनवर्ती' शब्द कह सकते है। एक-दो उदाहरणोसे यह बात समझमे आ जायेगी। जीवनके समान भाषामे भी ज्ञातसे अज्ञातकी ओर बढते है। परन्तु भाषा जीवनके साथ, कदम मिलाकर नही चल सकती, वह पीछे रह जाती है। इसलिए वस्तुओ- और विचारोकी अपेक्षा शब्द बहुत धीरे-धीरे बदलते है। इसका उदाहरण अँगरेज़ीके कार (Car) और हिन्दीके रथ, यान या गाडी है। जब एक अँगरेज़ या अमेरिकी इग्लैण्डकी बहुत ही प्राचीन 'केल्टिका' बोलीका शब्द 'कार' बोलता है, तो उसका अभिप्राय समझ लिया जाता है। पर इससे यह अनुमान नही किया जा सकता कि प्राचीन इग्लैण्डकी केल्ट जाति-को अन्तर ज्वलन (Internal combustion) का सिद्धान्त भी ज्ञात था। इसी प्रकार जब हम गाडी शब्द कहते है, तो प्रसगानुसार हम रेलगाडी या मोटरकार समझ लेते है। पर रेल या मोटरको गाडी कहने-से यह समझना कि प्राचीन युगमे रेलगाडी या मोटरगाडी-जैसी चीज़ें मौजूद थी, भयकर भूल होगी। प्राचीन 'विमान' शब्दको आजका हवाई जहाज़ समझना भी इसी तरहकी भूल है। शायद इसीलिए हवाई

जहाज़के लिए वायुयानसे छोटा होनेपर भी 'विमान' शब्द प्रचलित नहीं हुआ यद्यपि इस विधिसे उसका प्रयोग किया जा सकता है और होता भी है।

अँगरेजी शब्द मैन्यूफैक्चर (Manufacture) का अर्थ हाथसे बनाना है, पर आज उस शब्दको बड़े-बड़े कारखानोंके द्वारा वस्तु बनानेके अर्थमें भी प्रयुक्त करते हैं। इस प्रकारके मैन्यूफैक्चर शब्द प्राचीनवर्ती शब्द (Throw back) हैं। हमने अँगरेजी शब्द 'मैनुस्क्रिप्ट' (manuscript) के लिए शाब्दिक अनुवाद 'पाण्डुलिपि' किया। उर्दूमें मसौदा कहते हैं। पर आज टाइप किये हुए मसौदोंको भी पाण्डुलिपि या मैनुस्क्रिप्ट कहते हैं। अब दोनोंमें अन्तर करनेके लिए पाण्डुलिपि और टाइपलिपि (Type script) शब्द कहना ठीक होगा। इसी प्रकार 'फ़िल्म लिपि' (न) शब्द 'फ़िल्मस्क्रिप्ट' (Film script) के लिए प्रयुक्त हो सकता है।

प्राचीनवर्ती शब्द

शब्द-रचनाकी एक उपविधि यह है कि पुराने शब्दोको नये अर्थोमे प्रयुक्त किया जाये। सरसरी तौरसे यह विधि अर्थ-परिवर्तनसे नये शब्द बनानेकी विधि-सी मालूम होती है, और इसलिए इस अश तक उसीके अन्तर्गत समझी जा सकती है, पर वास्तवमे यह उपविधि उससे इस अपेक्षासे भिन्न है, कि इसमें अत्यन्त पुराने शब्दोको नये अर्थो या भावोको व्यक्त करनेके लिए काममे लाया जाता है। इसमें सभ्यताकी पहली अवस्थाओकी ओर मुडकर या अपने पूर्वजोके चरित्रकी ओर फिरकर अपनी नयी वस्तुओके नामको सूचित करनेवाले शब्द पुरानी बोलियोमे-से लेते है। इसलिए अँगरेज़ीमें ऐसे शब्दोको 'थ्रोबैक्स' कहते है। हमारे निरुक्तमे ऐसे शब्दोके लिए कोई पारिभाषिक शब्द नियत नही है, इसलिए उन्हें 'प्राचीनवर्ती' शब्द कह सकते है। एक-दो उदाहरणोसे यह बात समझमें आ जायेगी। जीवनके समान भाषामें भी ज्ञातसे अज्ञातकी ओर बढते है। परन्तु भाषा जीवनके साथ कदम मिलाकर नही चल सकती, वह पीछे रह जाती है। इसलिए वस्तुओ और विचारोकी अपेक्षा शब्द बहुत धीरे-धीरे बदलते है। इसका उदाहरण अँगरेजीके कार (Car) और हिन्दीके रथ, यान या गाडी है। जब एक अँगरेज़ या अमेरिकी इग्लैण्डकी बहुत ही प्राचीन 'केल्टिका' बोलीका शब्द 'कार' बोलता है, तो उसका अभिप्राय समझ लिया जाता है। पर इससे यह अनुमान नही किया जा सकता कि प्राचीन इग्लैण्डकी केल्ट जातिको अन्तर ज्वलन (Internal combustion) का सिद्धान्त भी ज्ञात था। इसी प्रकार जब हम गाडी शब्द कहते है, तो प्रसगानुसार हम रेलगाडी या मोटरकार समझ लेते है। पर रेल या मोटरको गाडी कहनेसे यह समझना कि प्राचीन युगमे रेलगाडी या मोटरगाडी-जैसी चीजें मौजूद थी, भयकर भूल होगी। प्राचीन 'विमान' शब्दको आजका हवाई जहाज़ समझना भी इसी तरहकी भूल है। शायद इसीलिए हवाई

जहाजके लिए वायुयानसे छोटा होनेपर भी 'विमान' शब्द प्रचलित नहीं हुआ यद्यपि इस विधिमें उसका प्रयोग किया जा सकता है और होता भी है।

अँगरेजी शब्द मैन्यूफैक्चर (Manufacture) का अर्थ हाथसे बनाना है, पर आज उस शब्दको बड़े-बड़े कारखानोंके द्वारा वस्तु बनानेके अर्थमें भी प्रयुक्त करते हैं। इस प्रकारके मैन्यूफैक्चर शब्द प्राचीनवर्ती शब्द (Throw back) हैं। हमने अँगरेजी शब्द 'मैनुस्क्रिप्ट' (manuscript) के लिए शाब्दिक अनुवाद 'पाण्डुलिपि' किया। उर्दूमें मसौदा कहते हैं। पर आज टाइप किये हुए मसौदोंको भी पाण्डुलिपि या मैनुस्क्रिप्ट कहते हैं। अब दोनोंमें अन्तर करनेके लिए पाण्डुलिपि और टाइपलिपि (Type script) शब्द कहना ठीक होगा। इसी प्रकार 'फिल्म लिपि' (न) शब्द 'फिल्मस्क्रिप्ट' (Film script) के लिए प्रयुक्त हो सकता है।

इसी प्रकार आजके संविधानके अनुसार चुने हुए मन्त्रियोंको हमने प्राचीन शब्द मन्त्रीसे सम्बोधित किया पर वास्तवमें प्राचीन मन्त्रीकी नियुक्ति विधि तथा अधिकार आदि आजके मन्त्रियोंकी नियुक्ति विधि तथा अधिकार आदिसे सर्वथा भिन्न हैं। आजके बिजलीके पंखेको हम पंखा कहते हैं। पक्षियोंके पक्षसे तद्भव शब्द पंख बना। उससे बना है पंखा या पंखी। यह पंखा या पंखी मोर-जैसे पक्षियोंके पंखोंकी बनती थी। फिर खजूर या ताड़ आदिके पत्ते या बाँसके पंखे-पंखियाँ बनने लगीं। पर बिजलीके पंखेके लिए इस 'पंखे' शब्दका प्रयोग करना एक प्राचीन सभ्यताकी वस्तुको नये आविष्कारके लिए काममें लाना है। प्राचीन शब्द पत्र (पत्ते) को आज हम कागज, कार्ड, लैटर, समाचारपत्र, तथा फॉर्म आदिके लिए लाने लगे हैं, क्योंकि प्राचीन कालमें हमारे पूर्वज पत्तोंपर विशेषकर ताड़पत्रपर लिखते थे। हमने अपने पूर्वजोंके चरित्रकी बात या प्राचीन सभ्यताकी वस्तुके नामसे नवीन युगकी वस्तुको पुकारना शुरू कर

दिया। पर हमने उसके लिए पत्रका तद्भव शब्द पत्ता नही लिया। इससे भाषामे सन्दिग्धताको स्थान नही रहा, क्योंकि पत्तेको पत्र केवल सस्कृत-भाषी ही बोलते है।

तर्क या युक्तिकी दृष्टिसे इस प्रकार प्राचीन शब्दोको नयी वस्तुओके लिए प्रयुक्त करनेमे कोई अनौचित्य नही है। भाषाकी गति ही ऐसी विचित्र है। जब खाना बनानेके लिए लकडी आदि सामग्री जोडने मात्र-को हम भाषामे 'खाना पका रहा हूँ' कहते है और तर्कसे उसमे ज़रा भी गलती नही है, तब एक पूर्ववर्ती वस्तुके नामसे वैसा ही काम देने-वाले आधुनिक कालके आविष्कारका नामकरण करना तर्क या युक्ति-विरुद्ध नही है।

प्राचीन साहित्यका इस दृष्टिसे अध्ययन अधिक उपयोगी होगा, कि उसके कौन-से शब्द नये भावो या वस्तु-नामोको व्यक्त करनेमे काममें आ सकते है। पर प्रचलित शब्दोके लिए ढूँढ-ढूँढकर प्राचीन शब्द प्रयुक्त करना भाषाका दोष है और उसे ही भाषामे पुनरुद्धार (revivalism) कहते है। इस दोषसे शब्द-रचयिताओ तथा साहित्यकारोको बचना ही चाहिए।

एक शब्दसे अनेक शब्द

उपसर्गों, प्रत्ययो, तथा समासो आदिकी सहायतासे एक शब्दसे बहुत-से शब्द बनाये जाते है। यहाँ हम कुछ ऐसे ही शब्दोके अर्थ, उनकी व्याख्या तथा उनकी रचनाकी प्रक्रिया न देकर सिर्फ यही स्पष्ट करना चाहते है कि ये सब शब्द हिन्दी तथा दूसरी भारोपीय भाषाओकी प्रकृति-के आधारपर ही बनाये गये है। यदि इनमे परिलक्षित शब्द-रचनाके नियमोका पालन किया जाये, तो हर प्रकारके विचारो तथा भावोकी अभिव्यक्तिके लिए अच्छेसे अच्छे शब्द बनाकर हिन्दी शब्दकोशकी अभि-वृद्धि की जा सकती है।

उदाहरणार्थ यहाँ जो शब्द चुने गये हैं उनमें संस्कृत हिन्दी और अँगरेजीके शब्द शामिल हैं। अँगरेजी तथा संस्कृत शब्द इसलिए कि एक शब्दको अपनाकर आगे उससे शब्द हिन्दी रीतिसे इस प्रकार बनाये जायँ। उनसे बने भिन्न-भिन्न शब्द नीचे दिये जाते हैं :-

गैस (gas) अगैसिया (Non-gasious बिन-गैसा भी), विष-गैस (Poison gas), गैस इंजन, गैसकार (gas man, गैसिया, गैसटिया भी), गैस कारखाना, गैसकोयला (gas coal) गैस खोल (gas-mask), गैसघर, गैसटोप, गैसतार, गैसथैला, गैसदार (गैसी भी) गैसनल, गैसनली (gas tube), गैस प्रकाश, गैसपन, गैसमापक (गैस-मीटर भी); गैसमार, गैस मोटर, गैसहीन (निर्गैस भी), गैसागार; गैसियाना (gasify), गैसियाई (gasification, गैसीकरण भी), गैसियाने योग्य (gasifiable), गैसीटी (गैस + अँगीठी, gas oven), गैसालीन आदि।

नरसलने ले लिया और नल नरसल जैसे नल नाली आदिके लिए प्रयुक्त होने लगा। इससे नीचे लिखे शब्द बने हैं —नलदार, नलनिर्माता (नलसाज भी), नलका, नलकी, नलकीदार, नल मार्ग (Pipe line) नल-कूप (Tube well) नल कुआँ भी। (गला, मु० गला फाड़ना), नाल (बछडे आदिको छाछ पिलाते हैं), नाला (छोटी नहर), नालिका, नलिकाकार (Tubular) आदि।

इकनाली बन्दूक, दुनाली बन्दूक, परनाला, पिपेट नली (Pipet), परीक्षानली (Test tube) (जाँच नली भी), परीक्षा-नली शिशु (Test tube baby),

हिन्दी (भाषाके अर्थमें) अहिन्दी, अहिन्दी-भाषी, कामचलाऊ हिन्दी, कुहिन्दी, ठेठ हिन्दी, सुहिन्दी प्रत्ययों आदिसे हिन्दियाना, हिन्दि-याई (हिन्दी करनेका काम, हिन्दी करनेका पारिश्रमिक), हिन्दियाव, हिन्दीकरण, हिन्दीकर्ता, हिन्दीकार, हिन्दी-घात, हिन्दी-घातकता, हिन्दी-जगत्, हिन्दीनिष्ठ, हिन्दी-निष्ठा, हिन्दीपठन, हिन्दीपाठ, हिन्दी-पूजन, हिन्दी-पूजकता, हिन्दी-पूजा, हिन्दीपूर्ण, हिन्दी-पोषक, हिन्दी-पोषकता, हिन्दी-भक्त, हिन्दी-भक्ति, हिन्दी-नीति, हिन्दी-मिश्रण, हिन्दी-मिश्रित, हिन्दी-विरोध, हिन्दी विरोधी नीति (Anti-Hindi policy), हिन्दी-समर्थक, हिन्दी समर्थक-नीति (Pro-Hindi policy) हिन्दी-हीन, हिन्दी-हीनता आदि।

•

उन्नीसवाँ परिच्छेद

पारिभाषिक शब्दोंकी गुत्थी

विज्ञान और कलाका सम्बन्ध सारे संसारसे है और उनके सामने जातीयताकी रुकावटें उठ जाती हैं।

—गेटे (गोएटे)

विज्ञान एक अन्तरराष्ट्रीय विषय है।

—जे० बी० एस० हाल्डेन

हमें राष्ट्रीय सुविधाको अन्तरराष्ट्रीय आसानीसे पहले सोचना चाहिए।

—अज्ञात

वह भाषा सर्वश्रेष्ठ है, जिसको अधिकसे अधिक आदमियोंके लिए किसी एक स्थल (Point) पर समझना सम्भव हो।

—दालाम्बर

सभी सभ्य भापाओको शब्दावलियोमे आधे शब्द वैज्ञानिक तथा शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द हैं, जिनमें-से बहुत-से शब्द पूरी तरहसे अन्तरराष्ट्रीय है।"[1] इस अनुपातसे अँगरेजीमे ढाई लाख वैज्ञानिक पारिभाषिक तथा अर्द्ध-पारिभापिक शब्द होने चाहिए। पारिभापिक शब्द हिन्दी तथा दूसरी आधुनिक भारतीय भापाओमें कितने कम है, यह बात हम अच्छी तरह जानते हैं।

भारतके प्रसिद्ध वैज्ञानिक तथा विज्ञान शिक्षाशास्त्री स्वर्गीय डॉ० शान्तिस्वरूप भटनागरने लिखा था "समस्त भारतके शिक्षाशास्त्री इस बातमे सहमत है, कि देशमे आधुनिक विज्ञानोके ज्ञानके प्रचारमें सबसे बडो बाधा समुचित पारिभापिक शब्दावलीका अभाव है।"[2] पारिभाषिक शब्दो, अर्द्ध पारिभाषिक शब्दो तथा सामान्य शब्दोका यह महान् अभाव न केवल हिन्दीमे ही है, वरन् भारतकी सभी आधुनिक भापाओमे है।

पारिभाषिक शब्दोसे अभिप्राय उन शब्दोसे हैं, जो किसी विशेष विज्ञान, शिल्प-विज्ञान, उद्योग, व्यवसाय, घरेलू दस्तकारी, रेल, तार डाक, राज-शासन, न्याय, साहित्य तथा कला आदिमें किसी विशेष अर्थको बताते है, चाहे उनका साधारण अर्थ कुछ भी हो। कभी-कभी एक ही पारिभाषिक शब्दका अर्थ भिन्न-भिन्न विषयो या विज्ञानोमे भी अलग-अलग हो जाता है। उदाहरणके तौरपर संस्कृत शब्द आगमका साधारण अर्थ आना होता है। पर निरुक्तमे इसका अर्थ किसी शब्दमे किसी वर्णका आना तथा प्रत्यय होता है। धर्मशास्त्रमे आगमका अर्थ धर्म-ग्रन्थ और परम्परासे चला आनेवाला सिद्धान्त होता है। आप्टेके संस्कृत अँगरेज़ी कोशमे आगमके इन पाँच अर्थोके अतिरिक्त तेरह अर्थ और दिये है, जिनमे

---

१ Story of Language p 271

२ Foreword to the comprehensive English Hindi Dictionary By Dr Raghuvira,

है ? जहाँ तक इस प्रश्नपर विचार किया गया है, इसके दो कारण समझमे आते है। आजके विज्ञान और शिल्प-कला विज्ञान इतने उन्नत, पेचीदा और आपसमें एक-दूसरेपर इतने अवलम्बित हैं, कि हिन्दी या दूसरी भारतीय भाषाओमे समस्त पारिभाषिक शब्दावली एकदम बनाना एक बडा कठिन काम हो गया है। अपनी पारिभाषिक शब्दावलीका विकास सभ्यताके विकासके साथ-साथ धीरे-धीरे होता है। शब्द-समूह बढता रहता है, और जनता तथा विद्वान् उसे अपनाते रहते हैं। पर आज इससे उलटा हो रहा है, सहस्रो शब्दोको बनाकर ऊपरसे थोपना पड रहा है। जनता और विद्वानोको वे सब अपरिचित और नये मालूम हो रहे है। हजार-दो हज़ार शब्द बनाना तो आसान हो सकता है, पर पचास-साठ हज़ार या लाख-दो लाख शब्द बनाना और चलाना तो निस्सन्देह एक बडा कठिन काम है। दूसरी कठिनाई हमारी सभी भाषाओके अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त विद्वानो और नेताओका नये शब्दोकी भाषा सम्बन्धी आदि नीतिके बारेमे मतभेद है।

इन मतो या विचारधाराओको भी तीन भेदोमें बाँटा जा सकता है। पहले, कुछ नेता और विद्वान् तो वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दोकी भाषा ऐसी चाहते है जिसके बलपर हमारे भावी वैज्ञानिक अन्तरराष्ट्रीय विज्ञान तथा शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी सभा-सम्मेलनोमें भाग ले सकें और इन विषयोपर पूर्णरूपसे आसानीसे न केवल अन्तर राष्ट्रीय विद्वानोसे विचार-विनिमय ही कर सकें, बल्कि विज्ञान आदिमे अन्तरराष्ट्रीय उन्नतिके साथ चल सकें और उस उन्नतिमे भारतका योगदान भी दे सकें। निस्सन्देह ऐसे विद्वानो और नेताओकी दृष्टि चलनेवाली शब्दावली अँगरेज़ी या अन्तरराष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दावलीपर अधिक है।

दूसरे कुछ विद्वान् और नेता एक ऐसी पारिभाषिक शब्दावली चाहते हैं, जो हिन्दी और भारतकी दूसरी सभी प्रादेशिक भाषाओमे उच्च शिक्षा आदिमें काम आ सके और जिसे वे अखिल भारतीय शब्दावलीका रूप

साफ हो गयी है, तब भी अभी इस प्रश्नपर बहुत शान्ति, ठण्डे दिमाग और युक्तियोसे विचार होनेकी काफी आवश्यकता है, जिससे कि यह प्रश्न जनतन्त्रात्मक ढगसे हल हो सके और भारतके सभी विद्वान् और नर-नारी राष्ट्रभाषा हिन्दीकी उन्नति तथा निर्माणमे अपना सहयोग दें। यहाँ तीनो विचारधाराओके पक्ष-विपक्षकी युक्तियोको ठीक रूपसे देने और उनका समन्वय करनेका प्रयत्न किया जायेगा।

पारिभाषिक शब्दावलीके प्रश्नपर अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे विचार करनेवाले विद्वानोका मत है, कि हमे अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दोको ज्योका त्यो अपनाकर हिन्दी और दूसरी आधुनिक भारतीय भाषाओंमें पचा लेना चाहिए और फिर उन शब्दोसे अपनी भाषाकी प्रकृति और हिन्दी व्याकरणके अनुसार नये-नये शब्द बना लेना चाहिए। जो विद्वान् और नेता अँगरेज़ी भाषा या अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दावलीको आसानी, मेहनत बचाने, अँगरेज़ी शिक्षा प्राप्त होने, निहित स्वार्थ, लकीरकी फकीरी, गुलाम मनोवृत्ति, या हिन्दी आदिको घटिया भाषा समझनेके कारण यह सुझाव देते हैं, उनकी बातकी ओर ध्यान न देते हुए भी, हमे उन विद्वानो तथा नेताओकी बातपर तो गहराईसे विचार करना ही होगा, जो तर्क और युक्तिके साथ इस मतका समर्थन करते हैं।

इस परिच्छेदके आरम्भमे ही गेटे और प्रो० हॉल्डेनके जो कथन दिये गये हैं, उनसे यह तो प्रकट ही है, कि विज्ञान और शिल्प-विज्ञान अन्तर्राष्ट्रीय विषय हैं। प्रो० हॉल्डेन तो यह भी कहते है "विज्ञान पर एक अभिपत्र (Paper) छपते ही, वह दुनियाकी सम्पत्ति बन जाता है। विशेष वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली अपने तमाम दोषोके साथ, एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है, चाहे उसे प्राय अपरिचित भाषा (Jargon) ही कहा जाये। कोई भी आदमी किसी विज्ञान सम्बन्धी अभिपत्रका सार

पढनेवालोसे सख्यामे अधिक है ।

भारतमे अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावलीको अपनानेकी इस विचारधाराके समर्थकोमे श्रीजवाहरलाल नेहरू, श्रीराजगोपालाचार्य, विश्वविद्यालयोके विज्ञान आदिके प्रोफेसर और भारत सरकार-द्वारा सन् १९५० मे स्थापित वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली वोर्ड है । इनके मत नीचे दिये जाते है—

सरकारी वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली वोर्ड-द्वारा निर्धारित सिद्धान्त निम्नलिखित है[1]

१. अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावलीसे अर्थ उन वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दोसे है, जो कि समय-समयपर वैज्ञानिक-सघोकी अन्तर्राष्ट्रीय परिषद्की कार्यवाहियोमे प्रकाशित किये जाते है ।

२. यह बोर्ड यूनिवर्सिटी-कमीशन और केन्द्रीय-शिक्षा-परामर्श वोर्डके विचारोसे सहमत है, कि जहाँतक हो सके हिन्दी और भारतकी दूसरी प्रमुख भाषाओकी पुस्तकोमे अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दोका ही प्रयोग किया जाये । वनस्पति-विज्ञान प्राणि-विज्ञान और भू-गर्भशास्त्रके अन्तर्राष्ट्रीय शब्द ज्योके त्यो ले लिये जायें ।

३ गणित और अन्य विज्ञानोमे प्रयोग किये जानेवाले प्रतीकचिह्न और सूत्र बिना किसी परिवर्तनके ग्रहण कर लिये जायें, अर्थात् रोमन लिपिमे लिये हुए अक्षर और अक ही हिन्दीमे प्रयुक्त किये जायें ।

४ वैज्ञानिक शब्दावली-कोश तैयार करनेमें अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दोका नागरीकरण किया जाये और उनका मूलरूप रोमन लिपिमे कोष्ठकमे दिया जाये । जहाँ कही जरूरी हो शब्दोका अनुवाद और व्याख्या भी दी जाये ।

श्री नेहरूजी अपने इस विचारको जरूरत होनेपर विद्वानो और शब्द-रचयिताओके सामने वार-बार रखते थे । राष्ट्रभाषाके पारिभाषिक

---

१. List of Technical Terms in Hindi (Chemistry)

पढनेवालोसे सख्यामे अधिक है ।

भारतमे अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावलीको अपनानेकी इस विचा
समर्थकोमे श्रीजवाहरलाल नेहरू, श्रीराजगोपालाचार्य, विश्ववि
विज्ञान आदिके प्रोफेसर और भारत सरकार-द्वारा सन् १९५० मे
वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली बोर्ड है । इनके मत नीचे दिये जा

सरकारी वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली बोर्ड-द्वारा f
सिद्धान्त निम्नलिखित है [1]

१ अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावलीसे अर्थ उन वैज्ञानिक और पारि
शब्दोसे है, जो कि समय-समयपर वैज्ञानिक-सघोकी अन्तर्राष्ट्रीय प
कार्यवाहियोमे प्रकाशित किये जाते है ।

२ यह बोर्ड यूनिवर्सिटी-कमीशन और केन्द्रीय-शिक्षा-परामर्
विचारोसे सहमत है, कि जहाँतक हो सके हिन्दो और भारतकी
प्रमुख भाषाओकी पुस्तकोमे अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक और पारि
शब्दोका ही प्रयोग किया जाये । वनस्पति-विज्ञान प्राणि-विज्ञा
भू-गर्भशास्त्रके अन्तर्राष्ट्रीय शब्द ज्योके त्यो ले लिये जायें ।

३ गणित और अन्य विज्ञानोमे प्रयोग किये जानेवाले प्रती
और सूत्र बिना किसी परिवर्तनके ग्रहण कर लिये जायें, अर्थात्
लिपिमे लिये हुए अक्षर और अक ही हिन्दीमे प्रयुक्त किये जायें ।

४ वैज्ञानिक शब्दावली-कोश तैयार करनेमें अन्तर्राष्ट्रीय पारि
शब्दोका नागरीकरण किया जाये और उनका मूलरूप रोमन
कोष्ठकमे दिया जाये । जहाँ कही जरूरी हो शब्दोका अनुवा
व्याख्या भी दी जाये ।

श्री नेहरूजी अपने इस विचारको जरूरत होनेपर विद्वानो
शब्द-रचयिताओके सामने बार-बार रखते थे । राष्ट्रभाषाके पारि

चाहिए।[1]

अँगरेज़ीके माध्यमसे शिक्षित होनेके कारण और हमारे अब भी सभी काम अँगरेज़ीमे होनेके कारण अँगरेज़ीमें प्रचलित अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दावली ही जर्मन भाषाकी अपेक्षा हमारे लिए अधिक ग्राह्य हो सकती है। अँगरेज़ीमे प्रचलित पारिभाषिक शब्दावलीमे यूनानी, लैटिन, रोमन और जर्मन आदि सभी भाषाओंके अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्द है। इसका अर्थ यह नहीं है कि हमारे विद्वान् और वैज्ञानिक जर्मन, रूसी आदि भाषाओंको न सीखें।

कुछ दूसरे देशोंने पारिभाषिक शब्दावलीके चुनावके बारेमे क्या किया, यह भी हमे जान लेना चाहिए। रूसमें सन् १९१७ मे राजनैतिक क्रान्ति हुई थी। रूसके सम्बन्धमे कहा गया है—उस समय वहाँ वैज्ञानिक तथा शिल्प वैज्ञानिक शिक्षाका इतना अभाव था कि वहाँके मुट्ठी-भर इजीनियर और मिस्त्री विदेशोंसे आनेवाली मशीनोंको काममे लाते समय अपने अज्ञानके कारण प्राय इन्हें बिगाड देते थे। पर सन् १९५५ में वे हाइड्रोजन बमकी परीक्षाके लिए छोडनेमे समर्थ थे। इस क्रान्तिके पीछे उनकी शिक्षामे बडी क्रान्ति थी, जो कि आगे चलकर ससारके लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगी, जितनी कि उनकी राजनैतिक क्रान्ति।[2] रूसी भाषामें पारिभाषिक शब्द नही थे। उन्होंने तुरन्त अन्तर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दावलीको मामूली-सा रूसीकरण करके अपना लिया। विदेशी शब्दोंके पीछे दो-चार रूसी क्रिया-प्रत्यय लगाकर क्रियाएँ बना ली।

ईरान और मिस्रके विद्वानोंने भी अपनी भाषाओंके लिए नये पारिभाषिक शब्द बनानेका प्रयत्न नही किया, बल्कि अँगरेज़ी और फ्रेंच

---

१ वैज्ञानिक शब्द सग्रह, भूमिका, पृ० १७।

२ टाइम्स लन्दन, अक ३१ दिसम्बर १९५५, (Nuclear Explosions) नामक ग्रन्थ, पृ० १३ पर उद्धृत।

आरम्भमे उन्हे दस-पन्द्रह वर्षके लिए अस्थायी रूपसे काम चलानेके लिए रखना चाहिए। शब्द-रचना और शब्द-समीक्षाका काम तो अभी बीसियों वर्ष चलेगा। इस अवधिके बाद शब्द-सम्बन्धी स्थितिकी जाँच करके निर्णय कर लेना चाहिए।

अखिल भारतीय पारिभाषिक शब्दावलीके समर्थकोका विचार है, कि समस्त भारतीय भाषाओके लिए विज्ञान और शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दावली एक होनी चाहिए। इस पक्षके समर्थक विद्वानो और नेताओका विचार है, कि सस्कृत ही एक ऐसी भाषा है, जिसके बहुत-से शब्द आधुनिक आर्य भाषाओ तथा दक्षिणकी भाषाओमें मिलते है। इनके मतके अनुसार सस्कृत आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओकी न केवल जननी ही है, बल्कि प्राचीन कालमे सस्कृत भारतकी सास्कृतिक भाषा थी और ज्ञान, विज्ञान तथा विद्याओका माध्यम भी है। सस्कृत शब्द हमारी सभी भाषाओमें मौजूद हैं। इस मतके समर्थकोमे डॉ० सुनीतिकुमार चार्टुज्या, स्व० राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन, स्व० डॉ० राजेन्द्र प्रसाद और स्व० डॉ० रघुवीर आदि है।

डॉ० राजेन्द्रप्रसादजी का मत था कि "सस्कृत ही वह स्रोत होना चाहिए जिससे नये शब्द बडी सख्यामे बनाये जाने है। इस मामलेमें पाडित्य-प्रदर्शनको टालना चाहिए और हमारा प्रयत्न ऐसे शब्द बनाना होना चाहिए जो बोलचालकी भाषाकी प्रकृति और रचनामे ठीक बैठ जायें, और अपनी सरलताके लिए प्यारे हो।"[1]

डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्याने सस्कृत कमीशनके उद्घाटनके समय अध्यक्ष पदसे बोलते हुए कहा था "सस्कृत वह भाषा थी, जिसने उत्तर और दक्षिणकी सब भाषाओको जीवन रस दिया। भूतकालमें यह एक करनेका बडा साधन रही है और भविष्यमें भी देशकी एकतामें एक बडा

---

१. वैज्ञानिक शब्द सग्रह, भूमिका पृ० १८।

चतुरसेन शास्त्रीने अपभ्रंशको ही वर्तमान प्रान्तीय भापाओंकी माता और तत्कालीन सम्पूर्ण भारतकी एक सार्वभौम भापा वताते हुए लिखा था "एक वात यह भी हमें जान लेनी चाहिए कि जैसी पुरानी हिन्दी अपभ्रश है वैसी ही पुरानी मराठी, उडिया, वगला, असमी, गोरखा, पजावी और गुजराती भी है। वास्तवमे उन्हें भी अपभ्रशको उसी प्रकार अपनी वर्तमान प्रान्तीय भापाओंकी माता कहनेका अधिकार है, जिस प्रकार हम उसे वर्तमान हिन्दीकी माता कहते है।"[1] और लीजिए श्री देवेन्द्र कुमार लिखते है "अब यह वात निर्विवाद रूपसे मान ली गयी है कि अपभ्र श भाषा हिन्दीकी साक्षात् जननी है, सस्कृत तो परम्परासे उसकी जननी है।"[2]

दक्षिणी भापाओंमें सस्कृत शब्द बडी सख्यामें है, पर उनमे-से किस भापामें सस्कृत किस परिमाणमे है, यह अभी खोजका विपय है।

बीम्स और फालन आदि सभी विद्वानोंने हिन्दीको सस्कृतनिष्ठ वनाने-का विरोध किया है। वे उर्दूको भी फारसी-निष्ठ बनानेके भी विरुद्ध थे। उर्दूके रूपके सम्वन्धमें उर्दूके प्रसिद्ध कवि मिरजा दागका यह शेर उर्दू-हिन्दीवालोंके लिए आज भी एक पथ-प्रदर्शकका काम दे सकता है —

"कहते हैं उसे जबान–ए–उर्दू
जिसमें न रग हो फ़ारसी का।"

कवि दाग फारसी पद-रचनाओंसे वचते थे और उनकी सभी कवि-ताओंमें उनके ऊपर लिखे सिद्धान्तकी छाप मिलती है। क्या हिन्दीका कोई वयोवृद्ध और चोटीका कवि यह कहनेका साहस कर सकता है, कि अच्छी हिन्दी वह है, जिसमें सस्कृतका रग न हो? आज जो हवा चल रही है, या आजसे पन्द्रह बीस वर्षके पहलेके वातावरणमे गान्धीजी

१ हिन्दी भाषा और साहित्यका इतिहास, पृ० ७७।
२ अपभ्रश-प्रकाश, निवेदन – पृ० १।

(च) पारिभापिक शब्दके साथ-साथ हमने उसके आवश्यक कुल-का किंचित् दर्शन देना भी उचित समझा है। किन्तु ऐसा करनेमें केवल शब्दोको भरनेका प्रयत्न नही किया गया है, जैसे—Transfer entry स्थानान्तर प्रविष्टि।

(छ) अँगरेज़ीके सारे सक्षेप प्रयोगो अथवा सकेताक्षरोको उन्हीके अनुरूप दिया गया है, जिससे विपयको समझनेका वैज्ञानिक दृष्टिकोण सुरक्षित रहे। जैसे Errors and omissions accepted लोमविभ्रमौ शोध्यौ।[1] Refer to drawee आहर्तानिर्दिष्टव्य।

(ज) इस शब्दावलीके निर्माणमे हमने प्राचीन ग्रन्थोका सहारा लिया है। फलत प्राचीन शब्द जो सुस्पष्ट एव अर्थगम्य हैं, उन्हें हमने दिया है। इतना ही नही, वरन् उनकी शृखलाको आजकी पीढी तक पहुँचानेका प्रयत्न किया है।

(ज) अँगरेज़ीमें व्यवहृत पारिभाषिक शब्दोको समझनेका पूरा प्रयत्न किया गया है। लैटिन, ग्रीक, प्राचीन भापाओसे ही नही, अपितु जर्मन, फ्रेंच, स्पेनिश, प्रभृति अन्य भापाओसे भी इनके अर्थोको समझानेकी हमने पूरी चेष्टा की है। अत हमारी प्रतिज्ञा है, कि हमारी शब्दावली अँगरेज़ीकी शब्दावलीसे अधिक सुस्पष्ट, अर्थगम्य और बोधयुक्त है।

(झ) हमारा निश्चित मत है कि अँगरेज़ी या अन्य विदेशी भाषाके प्रचलित शब्द हमारी भापा या शब्दावलीको समृद्ध नही बना सकते है, कारण कि उन्हें उनके पूरे कुलके साथ हम नहीं ले सकते हैं। लेना भी नही चाहिए। अत उन भाषाओके छुटपुटे शब्द जो हमारी लम्बी दासताके कारण हममे घर कर

---

१ व्यापारियोंमें प्रचलित 'भूल चूक लेनी देनी'।

इन शब्दोके इस प्रकारके प्रयोगोमे शास्त्रिक वुद्धिका अभाव है। ऐसे प्रयोगोके प्रचलनसे हमारो सस्कृतनिष्ठ भाषाओकी गति अव कुण्ठित होगी। उनके वहुत-से शब्द छिपे रहेंगे। उन्हें जोवन ही न मिलेगा। पुन इन शब्द-योगोसे वर्णसकरी साहित्यकी समृद्धि भी तो सम्भव नहो है। कारण कि ऐसे योगोकी सन्तति भाषामें टिक नही सकती। फिर ऐसा करनेसे 'सस्कृत भाषा मृत है' इस प्रकारके झूठे कथनको भी पारिभाषिक क्षेत्रसे पुष्टि मिलेगी। और यह सब होगा स्वतन्त्र भारतमे। इसलिए हमने ऐसे शब्दोको न केवल अनुपयुक्त समझा है, वल्कि भाषाकी वृद्धिके लिए नितान्त घातक भी। हमारा यह निश्चय विश्वकी समग्र पारिभाषिक शब्दावलीके अनुकूल है। कही भी पारिभाषिक शब्दावलीमें विदेशी भाषाओका अतिक्रमण नही। फिर हम उसे क्यो सहन करें?"

"पहले वर्गके अँगरेजी हिन्दी शब्दोका क्रम अनायास ही हो गया है। उनके पीछे कोई लक्ष्य न था। अँगरेजी शासनमे अँगरेजीकी प्रधानता और शिक्षाके क्षेत्रमें भारतीय भाषाओकी उपेक्षा ही इसके कारण रहे है। किन्तु दूसरे वर्गमे राजनैतिक दुर्गन्ध आती है। इनके द्वारा हिन्दू-मुसलिम एकताके सुख-स्वप्न देखे गये हैं। किन्तु दैवने अखिल सत्य आज प्रकट कर दिया है। ऐसे प्रयास आज धूलमें लोट रहे हैं। वस्तुत हिन्दुस्तानी आन्दोलनका शव हमारे सामने है। फिर भी इसके लिए बन्दरी-प्रेम प्रदर्शित किया जा रहा है। हमारी समझमे यह व्यवहार युक्ति-सगत नही। ऐसे व्यवहारको इतिहास, सत्य और तर्क चुनौती दे चुके है, दे रहे हैं और आगे भी देंगे। फिर एक वात और भी है। क्या हमे यह वात ज्ञात नही है, कि अँगरेजी शासन-कालमें हिन्दू-मुसलिम वैमनस्यको ही नही भडकाया गया है, वरन् इस विपयको समय-समयपर सस्कृत-निष्ठ भिन्न भाषाओके बोलनेवालोमें भी डाला गया है? इसका अनुभव तथा-कथित शिक्षा-शास्त्री कहलानेवाले लोगोके दाँव पेचोमें उस समय मिलता है, जव कि वे शिक्षालयो और विश्वविद्यालयोके अधिवेशनोमे निरर्थक

अवसाद, उद्विग्नता, विपाद, औदासोन्य सब प्राप्त हो सकते है ? और फिर, गुनहगार हो मेरे गले क्यो मढा जाय, जब कि अपराधी, दोपो, पातकी, दोपग्रस्त आदि मेरे पीछे है ? पर, हिन्दीमे कोई ऐमा आन्दोलन अभी चला नही है। मेरी इच्छा यह अवश्य है कि कुछ अनावश्यक शब्द, जो फारसी या अरबोसे आये हैं, हिन्दीसे निकाल बाहर कर दिये जायें। पर, हम हिन्दीभापियो और साहित्यिकोपर अभी पुरातन सस्कृति सस्कारका रग किंचित् गहरा चढा हुआ है। हमारे भीतर अभी वह ग्लानि उत्पन्न नही हुई जो इस जडताको उखाड फेंकनेको प्रेरणा हमें देती। वह ग्लानि कभी उत्पन्न होगी भी, इसमे मुझे सन्देह है। हिन्दीके अनेक लेखक, केवल अभ्यासवश और कुछ-कुछ प्रमादवश, अनेक अवाछनीय, अनावश्यक और सौन्दर्यरहित फारसी-अरबी शब्दोका धडल्लेसे प्रयोग करते चले जा रहे है। किन्तु आश्चर्य यह है कि इन शब्दोके निकालनेके आन्दोलनका दोप मढा जा रहा है हमारे मत्थे।[1]

डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या भारतके मान्य भापाशास्त्री और विद्वान् है। पारिभापिक शब्दोके बारेमें उनके विचार और उनसे निकलनेवाले परिणामोपर ध्यान देनेकी आवश्यकता है। वे लिखते हैं "परन्तु हिन्दी-के सस्कृत उपादानको क्रमश कम करनेकी प्रवृत्ति भारतोय परम्परा एव भारतोय संस्कृतिपर प्रत्यक्ष आघात-सा है। इसका फल यही होगा कि सास्कृतिक विषयोमे भारतका दिवालियापन घोषित करना पडेगा और स्थितिको टिकाये रखनेके लिए फारसो एव अरबीसे उसी प्रकार उधार लेनेका अवसर खडा हो जायगा, जैसे सस्कृतका अस्तित्व नही था। ऐसा कौन सा भारतीय है—विशेषत यदि वह हिन्दू हो—जो राष्ट्रीय आत्म-सम्मानका दम भरते हुए, सस्कृतके 'गणित' सदृश शब्दको छोडकर अरबीके 'हिन्दसा' सरीखे शब्दको, जो स्वय आर्य पारसीक 'अन्दाज़'

---

१ दैनिक हिन्दुस्तान, नयी दिल्ली, ७ नवम्बर सन् १६५४।

से प्राप्त हैं स्वीकार करेगा। क्या हम एक 'त्रिकोण'को त्रिकोण[1] न कहकर 'मुसल्लस' कहें? तिलमात्र भी राष्ट्रीय आत्म-सम्मान रखनेवाला ऐसा कौन-सा व्यक्ति है, जो विज्ञान, साहित्य एव दर्शनकी सारी शब्दावली हिन्दू भारतमें कभी भी अप्रचलित न हुई, सस्कृतकी शब्दावलीके उपस्थित रहते हुए भी, ज्योकी त्यों अरब स्थानसे मँगवाना चाहेगा?"[2]

इससे पहले कि इस सस्कृतनिष्ठ पारिभाषिक शब्दावलीकी विचार-धाराकी पूरी परीक्षा की जाये, डॉ० रघुवीर आदिकी युक्तियोके बारेमें पारिभाषिक शब्दोके दूसरे रचयिताओंके विचार भी जान लिये जायें, क्योकि ये विचार मराठी, गुजराती और हिन्दीके विद्वानोके है।

श्री वी० आर० दान्ते और श्री सी० जी० कारवे मराठीके दो वडे कोशकार हैं, उन्होने अपने एक वडे शास्त्रीय पारिभाषिक शब्दकोशकी भूमिकामे डॉ० रघुवीरकी शब्दावलोकी परीक्षाके बाद लिखा है—

"डॉ० रघुवीरकी पारिभाषिक शब्दावलीके सम्बन्धमें नीचे लिखी बातें सक्षेपमें उल्लेखनीय हैं—

१ तत्त्वोके नामकरणमें किसी एक सिद्धान्तका अनुकरण नही किया गया है, वल्कि ये सिद्धान्त परस्पर विरोधी हैं। २ शब्दोको अपने प्रचलित अर्थोंसे सर्वथा विपरीत अर्थोंमें प्रयुक्त किया गया है, और इससे विद्वानोके लिए भ्रममें पड जाना सम्भव है। ३ शब्दोकी व्याकरणात्मक रचना सस्कृत व्याकरणके नियमोके अनुसार विलकुल ठीक नही है। ४ इस पारिभाषिक शब्दावलीके पीछे एक वैज्ञानिककी अपेक्षा एक भाषा प्रवीण अधिक है। यह वात व्युत्पन्न शब्दोके परस्पर विरोधी अर्थोंकी ओर ले जाती है। ५ अवतक प्रकाशित हुई वैज्ञानिक पुस्तकोमें प्रचलित

---

१. हिन्दीमें 'तिकोन' शब्द और उससे बने तिकोन, तिकोनी, तिकोनिया शब्द पहलेसे मौजूद हैं। उन्हें क्यों नहीं अपनाया जाये?—ले०

२ भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी, पृ० २३८–२३९।

शब्दोका कोई उपयोग नही किया गया है। ६ एसिड, अलकली, वेस, साल्ट, साल्यूशन आदि जैसे साधारण शब्द भी इस कोशमें नही मिलते। ७ इस शब्दावलीमें अभ्यस्त एक विद्यार्थीके लिए इस शब्दावलीसे अँगरेज़ी, जर्मन, या अन्तरराष्ट्रीय शब्दावलीमें प्रयत्न करना बहुत कठिन होगा, क्योकि अन्तरराष्ट्रीय शब्दावलीका ज्ञान सर्वथा आवश्यक है और उसके बिना कमसे कम निकट भविष्यमें आप अधिक फल पानेमें समर्थ न होगे, क्योकि (डॉ० रघुवीरकी) शब्दावली मौलिक न होकर, इसका आधार पाश्चात्य शब्दावली है।[1]

इससे आगे यही दोनो विद्वान् प्रश्न करते है, "यदि यह कोश पहले हिन्दीमें और हिन्दी-भाषियोके लिए लिखा गया है, तो फिर पञ्जाब, इलाहाबाद और आगरा विश्वविद्यालय इसको क्यो नही अपनाते ?"

श्री पोपटलाल गोविन्दलाल शाह गुजराती, संस्कृत, अँगरेज़ी और विज्ञानके बडे विद्वान्, भारतीय प्रशासन सेवाके अवकाश प्राप्त पदाधिकारी और गुजराती वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावलीके प्रसिद्ध रचयिता है। शाहजी डॉ० रघुवीरकी 'द ग्रेट इगलिश इण्डियन डिक्शनरी' और 'रसायन' प्रथम भागकी परीक्षाके बाद अपने कोशकी भूमिकामें लिखते है, "उन (डॉ० रघुवीर) का सब नये शब्दोके लिए सस्कृतको स्रोत बनानेके विचारका आग्रह प्रशसनीय है, यदि केवल मौजूदा शब्दोके प्रयोगकी उपेक्षा न की जाती, डॉ० रघुवीर यह मानते हैं, कि सामान्य साहित्यके लिए प्रादेशिक भाषाओमें अपनी विशेषताएँ और भेद होगे, किन्तु केवल पारिभाषिक शब्दोके वास्ते एक अँगरेज़ी शब्दके लिए सब प्रादेशिक भाषाओके लिए एक पारिभाषिक शब्द ही होगा। प्रथम भाग, रसायनका

---

१ देखिए, शास्त्रीय परिभाषा कोशकी भूमिका। (The English Dictionary of Scientific Terminology)

अवलोकन इस विषयके किसी भी गम्भीर विद्यार्थीकी यह सन्तुष्टि नही करता, कि जिन वयासी हस्ताक्षरकर्त्ताओके सहयोगसे इस शब्दावलीको तैयार करनेका दावा किया जाता है उन सबको भी यह मान्य होगी। सस्कृतनिष्ठ शब्दोकी रचनामें बहुत निपुणता लगायी गयी है, जैसे हाइड्रोजनके लिए उदजन, ऑक्सीजनके लिए जारक, आयोडीनके लिए जम्बुली, आइसेनिकके लिए नेपाली, रेडियमके लिए तेजातु, अल्यूमिनियमके लिए स्फट धातु, सल्फरके लिए शुल्वारीयण और सल्फर मेचेज़के लिए शुल्वारीयत इपीका, टिनप्लेटके लिए त्रपुपटन, नाइट्रोफीनोलके लिए भूय दर्शन, और नाइट्रोफीनोल डाइसल्फोनिक एसिडके लिए भूयदर्शनद्वि-शुल्बायिक अम्ल। ये उदाहरण अन्तरराष्ट्रीय व्यवहारकी दृष्टिसे और साधारण आदमीकी कोरी आवश्यकताओकी दृष्टिसे नामोकी अनुपयुक्तता सिद्ध करनेके लिए काफी है। भिन्न-भिन्न शब्द समूहोंके भाषा-वैज्ञानिक और ध्वन्यात्मक व्युत्पत्तिके सम्बन्धमें जानकारीको मिलाना और जोडना एक चतुराई और विद्वत्ता हो सकती है, पर यह बात याद रखना उपयोगी होगी, कि नयी वैज्ञानिक शब्दावली बनानेके ऐसे प्रयत्न असफल होगे, यदि वे आवश्यक ज़रूरतोको पूरा नही करते। पहले पारिभाषिक शब्दा-वलीको ससारकी अँगरेज़ी-भाषी जातियोसे अन्तरराष्ट्रीय सम्पर्कके सब अवसरोको पूरी तरहसे नही काटना चाहिए। दूसरे, स्थानीय किसानो, मिल कर्मचारियो और व्यापारियो और स्थानीय पत्रोके द्वारा काममे आनेवाली वैज्ञानिक शब्दावलीके स्थानीय प्रयोगोकी उपेक्षा नही करनी चाहिए।

... देशकी तेरह भाषाओके लिए 'एक अँगरेज़ी शब्दके लिए एक नये भारतीय शब्द' के आधारपर एक समान या एक रूप (Uniform) शब्दावली बनानेके प्रयत्नमे ऐसी महान् कठिनाइयाँ पैदा हो गयी है, जिनमें से कुछकी उपेक्षा कर दी गयी है, और कुछको कुचल दिया गया है। फल यह हुआ है, कि कोई भी इस शब्दावलीसे सन्तुष्ट नही हुआ है।

' ... नागपुर और बम्बई विश्वविद्यालयोंके सिवा भिन्न-भिन्न प्रान्तीय (राज्य) सरकारें इसका स्वागत करनेमे असमर्थ रही हैं। ' इससे यह सवाल पैदा होता है, कि क्या भारतवर्षके लिए शताब्दियोसे अलग-अलग भाषाओंके विकासके बाद, पूर्वकालको बलपूर्वक दबा देना चाहिए और उसके स्थानपर एक ऐसी नयी भाषाको बढ़ावा देनेकी आवश्यकता है, जो न तो हिन्दी है और न सस्कृत है और जिसमे शब्दोंके प्राचीन प्रयोगोके लिए कोई आदर नही है। पिछले प्रयोगोंके प्रति यह अनादर किसी भाषाको आत्माकी ऐसी अनावश्यक हिंसा है, जिसकी न आवश्यकता थी और न मौका।

"ग्राम (Gramme) और ग्रेन (Grain) जैसे साधारण शब्दोका स्थान 'धान्य' और 'यव' शब्दोंको क्यो दिया जाय ? क्या इजनका यन्त्र इजिनियरका अभियन्ता नाम रखनेकी जरूरत है ? एक चेकको धनादेशसे और क्लर्कको लिपिकसे अनुवाद करनेकी क्या आवश्यकता है ?[१]

अन्तमे इस शब्दावलीके बारेमे हिन्दीके प्रसिद्ध लेखक श्री राहुल साकृत्यायनकी टिप्पणी भी पढ़िए, "उनके (डॉ० रघुवीरके) मिशनरी उत्साहको सभी स्वीकार करेंगे, लेकिन उसका स्थान सविधानका मसौदा नही था। अनुवादके देखनेसे ही मालूम होता है, कि यह हिन्दीके पक्षको दुर्बल बनानेमे ही सफल हो सकता है। इसमे लोगोकी सीखी भाषाका प्रयोग न करके एक नयी शब्दावली और एक नयी भाषा सिखानेका प्रयत्न किया गया है, जिसमें अनुवादकोको सफलता नही हो सकती .... ।"[२]

डॉ० रघुवीरने शब्द-रचनाके कामको जिस लगन, उत्साह और

---

१ वैज्ञानिक शब्द सग्रहकी अँगरेजी भूमिका।

२ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद-द्वारा प्रकाशित भारतीय सविधानका मसौदा, दो शब्द पृ० १।

मिशनरी भावनासे व्यवस्थापूर्वक कमसे कम समयमें किया है, वह बहुत ही सराहना और प्रशसाके योग्य है। इतने विद्वानोका सहयोग प्राप्त करना और वनका प्रवन्ध करना उनका ही काम था। हिन्दी शब्द-रचना-की दूसरी शैलियो और भारतीय भाषाओके शब्द-रचयिता यदि उनसे ये गुण सीखकर शब्द-रचनाके कामको करें, तो शब्दोका अभाव वहुत ही कम समयमे दूर हो जाय।

यद्यपि मराठी, गुजराती और हिन्दीके ऊपर लिखे विद्वानोके मत इस शत-प्रतिशत सस्कृतनिष्ठ शब्दावलीकी त्रुटियोको दिखानेके लिए काफीसे भी ज्यादा हैं, फिर भी इस शब्दावली और इसकी जडमें काम करनेवाली विचारधारामे कुछ ऐसी वडी त्रुटियाँ है, जिनकी ओर इन समालोचको और कोशकारोका या तो ध्यान नही गया, या शायद ऊपर लिखे विचार पूर्णरूपमे उनके सामने मौजूद न थे। यहाँ उन्हीको सक्षेपमे दिया जाता है

१ डॉ० रघुवीरके वाणिज्य शब्द-कोश आदिकी शब्दावलीका आधार सस्कृत है, और कही-कही कोष्ठकमे हिन्दीके लिए अँगरेजी अक्षर 'एच' (H) देकर हिन्दी शब्द दिये गये है, मानो यह कोश सस्कृत भाषाका है और सस्कृत-भाषियोके लिए हो, जव कि होना यह चाहिए था, कि शब्द हिन्दीके होते और विकल्पसे सस्कृत शब्द दिये जाते। सस्कृत-भाषी विद्वान् इस शब्दावलीको कहाँतक अपनायेंगे, इसका निर्णय वे ही कर सकते है।

२ इस शब्दावलीमे न तो हिन्दीमे प्रचलित हिन्दी शब्दोका प्रयोग किया गया है, अर्थात् न उन्हें अपनाया गया है और न उनकी सहायतासे शब्द-रचनाकी विधियोसे आगे शब्द बनाये गये है और न ही सस्कृत शब्दोको हिन्दी लेखकोकी परिपाटीके अनुसार हिन्दीमें विकसित करके तद्भव बनाया गया है, इसका फल यह होगा, कि हिन्दी शब्द गौण पड जायेंगे और हिन्दी शब्दोकी भीतरसे होनेवाली समृद्धि सदाके

लिए रुक जायेगी।

३. इसमे सस्कृत शब्द लेकर हिन्दी उपसर्गों और प्रत्ययोकी सहायता से नये शब्द भी नही बनाये गये है। जब पारिभाषिक शब्द बनानेमें ही हिन्दी उपसर्गो और प्रत्ययोका प्रयोग नही किया जायेगा, तो फिर वे किस काम आयेंगे ? हिन्दीकी परम्परा हिन्दीके लिए हर एक शब्द-निर्मातासे यह मॉग करती है, कि वे हिन्दीके लिए वर्तमान और भविष्य-में काममें आनेवाले शब्द हिन्दी उपसर्गों और प्रत्ययोको न केवल हिन्दी शब्दोके साथ जोडकर ही, बल्कि दूसरी भाषाओके शब्दोके साथ भी जोडें, चाहे वे शब्द भारतीय हो या विदेशी हो, और नये शब्द बनायें। पर इस शब्दावलीमें उन्हे सस्कृत शब्दोके साथ भी जोडनेमें सकोच है। कितनो विचित्र हिन्दो सेवा है यह ! पर जिस शब्दावलीमें हिन्दी शब्दोके लिए कोई स्थान नही है, उसमे हिन्दी उपसर्गों और प्रत्ययो आदिके लिए किसी स्थानकी आशा करना व्यर्थ है।

४ साधारण जनताकी तो बात ही क्या, यह शब्दावली विद्वानोकी समझसे भी बाहर है। इसको अपनानेसे सस्कृत-निष्ठ हिन्दी भाषियोका एक ऐसा वर्ग पैदा हो जायेगा, जिनकी भाषा भारतके करोडो नागरिको-की भाषासे कोई मेल न खायेगी। भाषाकी खाई बढ जायेगी, पटेगी नही।

५ सस्कृतके शब्द भी लम्बे, 'क्लिष्ट (बोलने और समझनेमें)' अटपटे, उपहासजनक और न-अपनाने योग्य है। यदि डॉ० रघुवीर उन्हें दोहराते तो वे स्वय इन दोषोको देखते।

६. इस शब्दावली और विचारधाराका सबसे बडा दोष शब्द-बहिष्कार है। अरबी, फारसी, अँगरेज़ी आदि विदेशी भाषाओके उन शब्दो-का बहिष्कार किया गया है, जो न केवल हिन्दीमें ही, बल्कि दूसरी आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओ और सुदूर दक्षिणकी कई भाषाओमे

सैकडो वर्षोंसे प्रचलित है और उनमे रच-पच गये है। इन शब्दोका बहिष्कार शब्दोकी त्रुटियोंके आधारपर नही, बल्कि भारतीयता, लम्बी दासता, सस्कृत, हिन्दुत्व, भाषा-शुद्धि, राजनैतिक दुर्गन्ध, वर्णसकर शब्दावली और तीव्र रूपसे बदली हुई परिस्थितियो आदिकी लचर, अनुदार, साम्प्रदायिकता पूर्ण, प्रतिगामी और विषमताको बढानेवाली अनेक युक्तियोके बलपर किया गया है। शब्द-रचनाके शुद्ध भाषा कानमें धर्म, दूसरे शब्दमें सकीर्ण साम्प्रदायिकता, और राजनीतिके विषको भरनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, जो विद्वानोको शोभा नही देता।

इससे दो ही परिणाम निकलते है, (क) या तो ये विदेशी प्रचलित शब्द इतने सबल हैं, कि उनको लुप्त करनेके लिए धर्म, सस्कृति और राजनीतिकी दुहाई दी गयी है, और या यह सस्कृतनिष्ठ शब्दावली इतनी दुर्बल और लँगडी है कि उसे चलानेके लिए हिन्दुत्व, भारतीय सस्कृति और राजनीति आदिके सहारोकी आवश्यकता है। भारतीय सस्कृति, हिन्दू धर्म और राजनीति ऐसे कच्चे धागे या छुई-मुई नही हैं, जो पाँच-दस हजार विदेशी शब्दोके अपनानेसे टूट जायेंगे या समाप्त हो जायेंगे या उनकी छूतसे भ्रष्ट हो जायेंगे। कब हम इस विषैले चक्रका अन्त करेंगे ? कब हम किसी विचार, वस्तु या शब्दको उसके गुणोके बलपर ग्रहण करना सीखेंगे ? भारतका नया दृष्टिकोण भारतकी सभी भाषाओका सह-अस्तित्व, भलाई और उन्नति चाहता है। पर अरबी, फारसी, अँगरेजी आदिके समर्थकोको इस बहिष्कार नीतिसे अप्रसन्न न होना चाहिए, क्योकि डॉ० रघुवीरको बहिष्कार कुल्हाडीसे हिन्दी शब्द भी नही बच सके हैं।

७ इस विचारधाराकी बहिष्कार नीतिके पीछे शुद्धिवादकी तीव्र भावना है, जैसा कि डॉ० रघुवीरकी (अ) नम्बर युक्ति और प० बालकृष्ण शर्मा नवीनके भाषणके अशसे प्रकट है। यह भाषा-शुद्धिवाद क्या

है ? भाषामे शुद्धिका अर्थ है, किसी भाषामे-से उससे भिन्न भाषाओके शब्दो, तत्त्वो और ध्वनियोको बलपूर्वक निकालकर शुद्ध करना। शुद्ध हिन्दीवादी या सस्कृतनिष्ठ हिन्दीवादी हिन्दीमे-से अँगरेज़ी, फारसी, अरबी आदि विदेशी भाषाओके शब्दोको निकाल देना चाहते है, और उनके स्थानपर सस्कृतके शब्द चलाना चाहते हैं। इतना ही नही, वे हिन्दीके तद्भव शब्दोको भी शुद्ध करके उनका सस्कृत रूप प्रचलित करना चाहते हैं, जैसे कि 'तिकोन'के स्थानपर 'त्रिकोण', और 'ऊन'के स्थानपर 'ऊर्ण', और 'घर' के स्थानपर 'गृह' आदि। भाषाओकी शुद्धिका यह उपहासजनक और अन्तमे असफल होनेवाला प्रयत्न हिन्दीके लिए ही कोई नया नही है। भाषा-शुद्धिवादी कभी-न-कभी हर-एक देशमे होते ही रहते हैं। मोरियो-पाईने लिखा है—"भाषाओकी शुद्धिका भूत इन (पश्चिमी युरॅपकी) या दूसरी भाषाओके बोलनेवालोके सिर समय-समयपर आता रहता है।"[1]

इसी प्रसगमे मोरियोपाईने भाषा शुद्धिके कुछ असफल आन्दोलनोका उल्लेख किया है जैसे कि तुर्कीमें मुस्तफा कमाल पाशाने तुर्की भाषास अरबी और फारसीसे उधार लिये शब्दोको निकालनेका प्रयत्न किया, पर वह काम असम्भव प्रमाणित हुआ, क्योकि तुर्की भाषाका आधा शब्द-समूह गैर-तुर्की इन शब्दोसे बना है। सोवियत रूसमे भी आज रूसी भाषाको शुद्ध करनेका प्रयत्न चल रहा है, परन्तु परिणाम प्रभाव डालनेवाला नही है। इटलीके फासिस्टोने भी इटलीकी भाषासे अन्तर-राष्ट्रीय शब्दोको उनके कल्पित विदेशी निकासके कारण निकालकर उन्हें 'अपनी' भाषाके शब्दोसे बदलनेका प्रयत्न किया। पर इसका इतना भद्दा फल हुआ कि जो लातीनी शब्द फ्रान्सीसी भाषाके माध्यमसे इटलीकी भाषामे आये थे, उनके स्थानपर जो शब्द चलाये गये, वे यूनानी या जर्मन थे। एक समय अँगरेज़ीमे भी यह आन्दोलन चला था, पर वह बुरी तरह

१. Story of Language, पृ० १६०।

मुहावरो और शैलियोको पचाकर विकसित करनेको कहा गया है। इस सविधानको वनानेवालोने यह निर्देश सविधानकी शोभा वढानेके लिए नही दिया था, वल्कि हिन्दीके लिए शब्दावली वनाते समय ध्यानमें रखनेके लिए दिया था।

पर यह सव कहनेका यह आशय नही है, कि सस्कृत शब्द अपनाने या संस्कृत धातुओसे नयें पारिभाषिक या दूसरे शब्द वनानेका विरोध किया जाय। यदि सस्कृत और विदेशी शब्दोके होते हुए वर्तमान हिन्दी हिन्दी रह सकती है, तो भविष्यमे भी चाहे कितने ही सस्कृत शब्द उसमे आ जायें, वह हिन्दी ही रहेगी। श्री सीमन पौटरने यूनानीके स्रोतसे अँगरेज़ीमें पारिभाषिक शब्दोके वननेके वारेमें स्वय ही एक प्रश्न उठाया और आप ही उसका उत्तर भी दिया है। उनके प्रश्न और उत्तर सस्कृत-पर भी वहुत हद तक लागू होते है, इसलिए उनको यहाँ दिया जाता है। वे लिखते हैं "हमारे इतने पारिभाषिक शब्द यूनानीसे क्यो निकले है? प्रधान रूपसे एक तो यह कि एक समय एथेन्स नगर कला, विज्ञान और दर्शनमे ससारका नेतृत्व कर रहा था, और दूसरे यूनानी भाषा विशेष रूप-से अँगरेज़ीकी ऐसी ठीक-ठीक और असन्दिग्ध पारिभाषिक शब्दावलीकी आवश्यकताको पूरा करनेके लिए विशेष तौरसे अच्छी तरह उपयुक्त है, जिन्हें अर्थका छाया-मात्र भेद भी अपनी भाषासे नही मिला हैं। यूनानीमें एक विस्तृत और नियमित प्रत्ययोकी प्रणाली-द्वारा सामासिक शब्द वनाने-की असाधारण योग्यता है। इसके अतिरिक्त-कुछ ऐतिहासिक कारण भी हैं।"[1]

जब हिन्दी या दूसरी प्रान्तीय भाषाओमें कोई चालू शब्द न मिले और न हिन्दीके प्रस्तुत तत्त्वोसे कोई नया शब्द वन सके, केवल तभी सस्कृत शब्द अपनाया जाये या सस्कृत धातुओ आदिसे वनाया जाये। सस्कृतसे

---

१ Our Language, पृ० ३६।

वनाये जानेवाले शब्दोकी रचना डॉ० राजेन्द्रप्रसादजीके वताये नियमोके अनुसार हो, यानी उनमें पाण्डित्य-दर्शन न हो, वे सरल हो और बोलचाल-की भापामें ठीक ठीक खप जायें। सस्कृत घातु मूल रूपसे या वर्ण-विकार-के साथ लेकर उनसे हिन्दीकी परम्परा और हिन्दीके बीसवी शताब्दीसे पहलेके तद्भव शब्द-रचयिताओके दिखाये हुए मार्गपर चलकर नये शब्द वनाये जायें, जिससे हिन्दी शब्दोकी सच्ची बढोत्तरी हो। दूसरे शब्दोमे, एक सस्कृत शब्दको उसके पूरे सस्कृत शब्द-कुलके साथ अपनाना उतना ही हानिकर है, जितना कि किसी विदेशी या अन्तरराष्ट्रीय शब्दको उसके पूरे कुलके साथ अपनाना हिन्दीके लिए हानिकर है। हर उधार लिये हुए शब्दको हिन्दीका सच्चा और वफादार नागरिक वनने और उसे अपने व्यक्तित्वको पूरे रूपसे हिन्दीमें लीन करनेके लिए तैयार होना चाहिए। यानी वह पराया या अतिथि वनकर न रहे।

नये पुराने पारिभाषिक शब्दोको जनताकी अत्यन्त वडी सख्याके द्वारा समझे जानेकी दृष्टिसे देखनेका प्रश्न भी पहले दोनो दृष्टिकोणो यानी अन्तर-राष्ट्रीय दृष्टिकोण और अखिल भारतीय दृष्टिकोणसे यदि अधिक वडा नही है, तो उनके समान वडा अवश्य ही है। लोकराज्य और जनकल्याण राज्य-में तो जन-भापाका महत्त्व ही वडा माना जाना चाहिए। सक्षेपमें, इस दृष्टिकोणवालोका यह मत है, कि उत्तर-भारत और मध्य-भारत आदि प्रदेशोके पन्द्रह-वीस करोड स्त्री-पुरुपोके द्वारा वोली तथा समझी जानेवाली भापाके शब्दोके समान ही हमारी नयी शब्दावली वननी चाहिए। इस भापाको चाहे किसी भी नामसे पुकारा जाये। महात्मा गान्धी इसे हिन्दी-हिन्दुस्तानी कहते थे और उसे वे सस्कृतनिष्ठ हिन्दी और अरबी-फारसी युक्त उर्दूके वीचकी भापा कहते थे। भारतके सविधानने इस भापाको ही जनताकी भाषा मानकर हिन्दीका नाम दिया है। इसमें किसी प्रकारके भ्रमको स्थान नही है। खीचतान करनेसे इसका रूप विगड जायेगा।

इस मतके समर्थकोमें महात्मा गान्धी, स्व० किशोरीलाल मशरूवाला, प० जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अबुलकलाम आज़ाद, प० सुन्दरलाल, काका साहेब कालेलकर, आचार्य विनोबा भावे, डॉ० भगवान्दास, डॉ० ताराचन्द और डॉ० जाफरहुसैन आदि अनेक नेता और विद्वान् हैं। हिन्दी-के सैकडो विद्वानो तथा लेखकोका झुकाव भी इसी ओर है और वे ऐसी ही भाषा लिखते है। प्रेमचन्दजीकी रचनाओके इतना सर्वप्रिय होनेका कारण उनकी शैली और विषयोके अतिरिक्त उनकी ऐसी भाषा भी थी। इस मतके समर्थनमें जो साहित्य निकला है, उसमे विशेष रूपसे पढने-योग्य पुस्तकें महात्मा गान्धीकी 'थॉट्स ऑन नेशनल लैंग्वेज', 'राष्ट्रभाषा हिन्दु-स्तानी', प० जवाहरलाल नेहरूकी 'राष्ट्रभाषाका सवाल', डॉ० ताराचन्द की 'दि प्रॉब्लम ऑव हिन्दुस्तानी' और डॉ० जाफर हुसैनकी 'हिन्दुस्तानी शब्दियात' शीर्षक से 'नया हिन्द' इलाहाबादमे सितम्बर सन् १९५२से नवम्बर सन् '५३ तक प्रकाशित लेखमाला और मदन गोपालजी लिखित 'जुबान' आदि है। इस पक्षके समर्थनमे कुछ युक्तियाँ नीचे दी जाती है—

महात्मा गान्धीने अपने सब आन्दोलन जनताके आन्दोलन बनाये थे। वे अँगरेज़ीके मोहको तोडकर राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानीके प्रचारमे भी दिन-रात लगे रहे। सुदूर दक्षिण तक हिन्दुस्तानीको ले जानेवाले वे ही थे। हिन्दी-हिन्दुस्तानी आन्दोलनको उन्होने भारतके स्वाधीन हो जाने या देश-विभाजनके फलस्वरूप परिस्थितियोके पलट जानेपर भी नही छोडा। वे हिन्दी-हिन्दुस्तानीको समझौतेकी भाषाके रूपमें नही, बल्कि राष्ट्रीय आव-श्यकताके रूपमें ग्रहण करते थे। इस बारेमे पहले, बहुत सक्षेपमें, उनके ही विचार दिये जाते हैं—

१ "वे (हिन्दी और उर्दू) अवश्य ही हिन्दुस्तानीकी सम्पन्नताको बढाते हैं। हिन्दी और उर्दू नदियोके समान हैं जब कि हिन्दुस्तानी सागर है। ··वास्तवमें हिन्दुस्तानी इतनी व्यापक है, कि वह दोनोको पचा सकती हैं। फल यह होगा कि यह एक ऐसी सम्पन्न भारतीय भाषा बन जायेगी,

"उस जनताकी भाषा ही हिन्दी और उर्दू है, जो देहाती मजदूर, साहित्यिक विशेषज्ञ, व्यापारी और दस्तकार, इनके सम्मेलनसे जन्म लेती है।"[२]

"यह (हिन्दुस्तानी) जहाँ कहीं जरूरी हो निज प्रादेशिक भाषाओंके शब्दोंको अपना ले और विदेशी भाषाओंके शब्दोंको भी स्वीकार करे, पर शर्त यह है कि वे हमारी राष्ट्रभाषामें अच्छी तरह और आसानीसे मिल सकें। इस प्रकारसे हमारी राष्ट्रभाषाको एक ऐसे सम्पन्न और शक्तिशाली साधनके रूपमें बढ़ना चाहिए, जो कि इन्सानोंके विचारों और अनुभूतियोंके सारे विस्तारको प्रकट करनेमें समर्थ हो। यदि अंगरेजी अपने आँगनमें इटली, यूनान और जर्मनी आदिकी भाषाओंके शब्दोंको ले सकती है, तो कोई कारण नहीं है कि हम अपने व्याकरणको चोट पहुँचाये बिना अपनी भाषाओंमें फ़ारसीसे शब्दोंको लेनेमें क्यों झिझकें।"[3]

अपने निधनसे पहले २५ जनवरी सन् '४८ को भी महात्मा गान्धीने हिन्दी हरिजन सेवकमें दुःखके साथ लिखा था "आज मैं अपने मतमें अकेला हो सकता हूँ, पर यह साफ है कि न तो संस्कृतनिष्ठ हिन्दी जीतेगी और न फ़ारसी-निष्ठ उर्दू। यह हिन्दुस्तानी ही होगी, जो कि अन्तमें जीतेगी।"[४]

पं० जवाहरलाल नेहरू अन्तरराष्ट्रीय पारिभाषिक शब्दोंको अपनानेके पूरे समर्थक थे पर वे भी भाषाके सम्पर्कको आम जनतासे बनाये रखना जरूरी समझते थे। प्रधान मन्त्रीके नाते ही नहीं, बल्कि एक सफल लेखक और वक्ता होनेके नाते भी वे सरल भाषा और सरल शब्दावलीके पक्षमें

---

१ Thoughts on Language, पृ० १४८।

२ Thoughts on Language, पृ० १४८।

३. Thoughts on Language, पृ० १८४।

४ Thoughts on National Language, पृ० १८८।

थे। उन्होने लिखा था, "हमारे अधिकाश मौजूदा झगडोकी जड यह है कि हमारी भाषाएँ बहुत ही बनावटी और साहित्यिक होती है और उनका आम जनतासे कोई सम्बन्ध नही होता।"[१]

"जिन्दा जबान वह है, जिसमे तडप हो, प्राण हो, परिवर्तनशीलता, प्रगतिशीलता हो और जो उसे बोलने और लिखनेवालोंका आइना हो। उसकी जडें आम जनतामें होती है। भले ही उसका ऊपरी ढाँचा थोडे-से लोगोकी सस्कृतिका नमूना हो।"[२]

"सस्कृतिका आधार आजकल अधिक व्यापक जनता होनी चाहिए और भाषाका आधार वही होनी चाहिए, क्योकि भाषा सस्कृतिके अगोमें-से एक है।"[३]

" · लेकिन बहुत-से पारिभाषिक शब्द हमे अपनी भाषासे भी लेने पडेंगे। यह अच्छा होगा कि भाषा और विज्ञानके माहिर लोग सबके इस्तेमालके लिए ऐसे शब्दोकी सूची बनायें।"[४]

नये पारिभाषिक शब्दोके बारेमें उन्होने लिखा "यहाँ मै यह जरूर कहूँगा कि आज पारिभाषिक शब्दोके लिए जो नये शब्द इस्तेमाल हो रहे है, उनमें-से बहुत-से इतने असाधारण रूपसे बनावटी और सचमुच बेमानी है कि मुझे उनसे डर लगता है। इसका कारण यह है कि उनके पीछे कोई पृष्ठभूमि या इतिहास नही है।"[५]

इस विचारधाराको विदेशी विचारको और यूनेस्कोके वैज्ञानिक विशेषज्ञोसे भी समर्थन मिलता है। जनताकी भाषा या भाषाके जन-

---

१. राष्ट्रभाषाका सवाल, पृ० १६।
२. वही, पृ० ५।
३ वही, पृ० १७।
४ वही, पृ० २२।
५. वही, पृ० ३७।

तन्त्रात्मक पहलूका महत्त्व बताते हुए मोरियोपाई लिखते हैं · "यह न्यायके साथ लिखा जा सकता है, कि हम पेण्डूलमके एक सिरेसे दूसरे सिरेकी ओर झुक गये हैं यानी वडे-वडे लोगोकी दार्शनिक और ससारके वुद्धिवादी विशेष वर्गके लिए वनायी गयी भाषासे सर्वव्यापी जनतन्त्रात्मक भापाकी ओर, जिसे ससारकी जनता प्यार करेगी। हमारे पास फिर भी पूर्णता या प्रवीणता (perfection) होगी, परन्तु वह पूर्णता एक अलग तथा अधिक आधुनिक ढगकी पूर्णता होगी।"[१]

यूनेस्कोके वैज्ञानिक विभागके अधिकारियोने जनताकी भाषामे वैज्ञानिक तथा शिल्प-वैज्ञानिक साहित्यके प्रचारपर खेद भी प्रकट किया है और इसका स्वागत भी किया है। स्वागत करनेका कारण उनके शब्दोमें यह है—"दूसरी ओर इन राष्ट्रोके लिए यह आशा करना स्वाभाविक है, कि उनकी जातीय सस्कृतियाँ अपनी भापाओके प्रयोगसे उपजाऊ वनकर अधिक फलें-फूलेंगी।"[२]

सरल भापामें विज्ञानके प्रचारकी आवश्यकतापर यूनेस्कोकी एक दूसरी पुस्तिकामें विज्ञानके महान् ज्ञानका अधिक उपयोग होना तभी सम्भव वताया गया है, "जव कि वह आम जनता तक पहुँचे, समझा जाय और काममे लाया जाये।"[3] इसी पुस्तिकामें आगे लिखा है, "नये ज्ञानको भूगोल, भापाओ और अज्ञानकी रुकावटोसे परे सव जातियो तक पहुँचानेके लिए सयुक्त प्रयत्नकी ज़रूरत है।"[४]

कठिन शास्त्रीय (classical) शब्दोके प्रयोगके विरुद्ध प्रसिद्ध लेखक

---

१ Story of Language, पृ० ४४६।

२ Report on the International Scientific and Technological Dictionaries, पृ० ३०।

३. Science in plain language, पृ० ६।

४. Science in plain language, पृ० ६।

ऐरिक पार्ट्रिजकी यह युक्ति इस प्रसगमे हमारे लिए नये पारिभाषिक शब्द बनाते समय बहुत ध्यान देने योग्य है "शास्त्रीय स्रोतोके शब्दोके विरुद्ध सबसे साधारण पर अधिक भारी आक्षेप यह है, कि केवल वे ही आदमी उनके अर्थ निकाल सकते है, जिन्हें शास्त्रीय शिक्षा मिली हो या जबतक कि वे उनके ही अर्थोसे पहलेसे परिचित न हो, जब कि देशी शब्दसे बना या देशी शब्दोके समाससे बना पारिभाषिक शब्द हर-एक ऐसे आदमीके लिए स्पष्ट हो जाता है, जिसे अँगरेज़ीका साधारण ज्ञान है।"[1] थोडी शिक्षा पाये हिन्दुस्तानियोके लिए तो उपरोक्त बात और भी अधिक ध्यानमें रखनेकी है। पर हिन्दी या सब भारतीय भाषाओके लिए अन्तरराष्ट्रीय या सस्कृतनिष्ठ पारिभाषिक शब्दोके प्रयोगके समर्थकोने शायद यह बात पहले ही मान ली है, कि हर-एक हिन्दुस्तानीको यूनानी, लातीनी सस्कृत-ज्ञान है। कठिन अन्तरराष्ट्रीय या सस्कृतनिष्ठ शब्दावलीके समर्थक विद्वानो और नेताओको यह बात अवश्य मालूम होगी, कि अँगरेज़ीमे भी डॉ० जॉनसनके द्वारा उन्नीसवी शताब्दीमें चलाये हुए बहुत-अक्षरी और पाण्डित्यपूर्ण शब्दो और पदोके विरुद्ध बादमें घोर और तीव्र प्रतिक्रिया हुई थी। इसी शास्त्रीय शब्दावलीका प्रयोग करनेवाले लेखको और पत्र-कारोपर करारी चोट करते हुए ऐरिक पार्ट्रिजने लिखा है "मुख्य रूपसे ये अर्धशिक्षित लोग ही है, जो बडे बडे शब्दोका प्रयोग करना सस्कृति, सभ्यता और फैशन समझते हैं और जिन पत्रकारोको यह बात अच्छी तरह मालूम होनी चाहिए थी, वे भी होना (happens) के स्थानपर परिण-मित होना (eventuate) या घटित होना (transpire) जैसे शब्दोमें प्राय उलझे हुए दिखाई देते है।"[2] यदि इस अन्तरराष्ट्रीय और सस्कृत-निष्ठ शब्दावलीके प्रयोगसे पैदा होनेवाले एक और दुष्परिणामकी ओर भी

---

१ World of Words, पृ० ३५।

२ World of Words, पृ० ३५।

यहाँ सकेत किया जाये तो अप्रासगिक न होगा। वह है इन शब्दावलियो-को समझनेमें जनताको समर्थ बनानेके लिए भावी भाषा शिक्षा योजनामें अँगरेजी और संस्कृतकी शिक्षाके लिए स्थान बनानेका प्रयत्न करना या सुझाव देना, जिसके लक्षण इस विषयपर कभी-कभी प्रकट किये जानेवाले विचारोमें दीख पडते हैं और जिसका नमूना डॉ० बाबूराम सक्सेनाके इस विचारसे मिलता है, जो कि उन्होने भारतीय हिन्दी परिषद्के बनारसमें २८ दिसम्बर सन् '५६ को होनेवाले चौदहवें वार्षिक अधिवेशनके सभापति पदसे दिये अपने भाषणमे प्रकट किया है। उन्होने कहा. "हिन्दीके पाठ्य-क्रममें एक या दूसरे रूपमें संस्कृत पढायी जाये। हिन्दीके अध्ययनमें यह (सस्कृत) एक आवश्यक पृष्ठभूमि देगी और ऊँचे शोधकार्यको सरल बनायेगी।"[1] अन्तरराष्ट्रीय आवश्यकताके महत्त्वको बताते हुए उन्होंने अँगरेजीके अध्ययनको भी आवश्यक बता दिया। यह है वह न टूटने-वाला जाल जो हम कठिन शब्दावलीको बनाकर पैदा कर रहे हैं और जाने-अनजाने भारतके विद्यार्थियोपर भाषाओका बोझ लाद रहे हैं।

इन कारणोके अलावा कुछ और कारण भी हैं, जो सरल शब्दावली बनानेके पक्षमें दिये जा सकते हैं। हमारे देशमें पढे-लिखोकी प्रतिशतता बहुत ही कम है और हिन्दी लिखे-पढे स्त्री-पुरुषोकी सख्या तो और भी कम है। इसलिए सारी जनता तक ज्ञान-विज्ञान तथा शिल्प-विज्ञानोकी साधारण जानकारी पहुँचाने और उस ज्ञानको जनताके दैनिक जीवनमे अमली स्थान दिलानेके लिए यह आवश्यक है कि उस ज्ञानको फैलानेवाली भाषामें प्रयुक्त होनेवाली शब्दावली बोलने, लिखने और समझनेमें आसान हो। वरना उस ज्ञानको हमारे करोडो किसान खेती-क्यारीके काममें, जनता अपने स्वास्थ्यको बनाये रखने और करोडो मजदूर, दस्तकार, कारीगर, मिस्त्री उस ज्ञानको अपने पेशो और शिल्पोमें काममे न ला

१. Indian Express, Delhi २६ दिसम्बर सन् १९५६।

सकेंगे। देशमें आज निर्धनता, अज्ञान और रोगोंने जो भयकर रूप धारण किया हुआ है, उसको न अन्तरराष्ट्रीय शब्दावली दूर कर सकता है और न सस्कृत-निष्ठ हिन्दी शब्दावली। यदि हमें लाखो इजीनियर, शिल्प-विज्ञानी, डॉक्टर, बडे-बडे उद्योगपति और व्यापारी, कूटनीतिज्ञ और उच्च प्रशासक आदि चाहिएँ तो करोडो शिक्षित मिस्त्री, कारीगर, दस्तकार, कम्पाउण्डर, नर्स और छोटे व्यापारी भी चाहिएँ। क्या हम शब्दावलियोके दो-तीन वर्ग बनायेंगे? जब सयुक्त राज्य अमरीका और इग्लैण्ड आदि शिक्षित देश भी अपनी जनताके लिए विज्ञानकी ऊँची बातोंको सरल भाषा-में बतानेकी महान् आवश्यकताको अनुभव कर रहे हैं, तो हमारे लिए सरल शब्दावलीकी और भी अधिक आवश्यकता है। सौभाग्य या दुर्भाग्य-से जब हमें अपनी शब्दावली आज बनानी पड रही है, तो शब्दोकी सर-लता और बोधके पहलूकी उपेक्षा करना बहुत घातक होगा।

कानून, विधान, चिकित्सा विज्ञान, शिल्प-विज्ञान और धर्म आदि सम्बन्धी क्लिष्ट शब्दावली सब देशोमें उस युगकी उपज है, जब कि निहित स्वार्थोंवाले कुछ विशिष्ट वर्गोंने मिलकर भाषाको भी अपनी बपौती और सत्ता बनाये रखनेका साधन बनाकर आम जनताको अज्ञानी बनाये रखनेमें ही अपने स्वार्थोंको न केवल अपने लिए बल्कि अपनी पीढी-दर-पीढीके लिए सुरक्षित बनानेका सफल, पर अन्तमें राष्ट्रके लिए हानिकारक सिद्ध होनेवाला प्रयत्न किया और अपने ज्ञानको जनतासे छिपाये रखनेकी कोशिश की। देशके नवनिर्माणके समय इन प्रयत्नोके दोहराये जानेकी प्रवृत्तिको रोकना अत्यन्त आवश्यक है।

यहाँ व्यापारियोके दैनिक व्यवहारकी भाषाके बारेमें भी दो शब्द कह देना आवश्यक है। उनका जनतासे सीधा सम्पर्क होता है और कार्यक्षेत्र विस्तृत होता है। उनके पास लम्बी बातें करने, बडे-बडे शब्द बोलने और लिखनेके लिए समय नही होता। उनके समयका मोल होता है। वे व्याव-

हारिक आदमी होते है, उन्हें अपनी बात समझानेके लिए टीकाकारो या दुभापियोकी भी जरूरत नही है। उनमें सभी स्तरके शिक्षा-प्राप्त आदमी होते है और सभी स्तरकी शिक्षा पाये ग्राहक उनके पास आते हैं। कभी-कभी उनकी वोली भी भिन्न होती है। इसलिए वही भापा व्यापारी वर्गमें प्यारी वन सकेगी, जिसके शब्द आसान, छोटे और अधिकसे अधिक जनताके द्वारा समझे जाने योग्य होगे। आज दुनियाकी एक तिहाई डाक अँगरेज़ी भाषामें लिखी जाती है। इसका कुछ कारण है। हिन्दी भी व्यापारी वर्गके शब्द फिरौती, कटौती, वट्टा, खाता, खतियाना, वही, पासग, रोकडिया, दलाल, हुण्डी, परचा, मुनीम, तुलाई, लदाई, भराई, आढत, आढती, 'भूल-चूक लेनी-देनी' आदि हजारो पारिभापिक शब्दो और मुहावरोको लेकर सम्पन्न और समृद्ध वन सकती है। इन शब्दोको वाज़ारू कहकर और छोडकर नयी कठिन शब्दावली उनमे चलानेका प्रयत्न करना ठीक नही है।

करोडो स्त्री-पुरुपो और वडी आयुके नवशिक्षितो, वालक-वालिकाओ, किसानो और मजदूरो तक पहुँच सकने योग्य हमारा नया साहित्य जनता-की भापामें उसी समय तैयार किया जा सकता है, जव कि उसमें प्रयुक्त होनेवाली शब्दावली जनताकी जानी-वूझी होगी। अपने प्राचीन साहित्य के गुप्त रत्नोको भी जनताकी भापामें जनता तक पहुँचानेकी आवश्यकता है। ऐसी शब्दावलीका हिन्दी और दूसरी प्रादेशिक भापाओमें नितान्त अभाव नही है, वरना आज तक ये किसान और दस्तकार कारीगर अपना काम कैसे चलाते? माना कि वह पूर्ण नही है, और यह भी माना कि उसमें नये आविष्कारो और नये भावोको वर्णन करनेकी क्षमता नही है, पर वह शब्दावली ही हिन्दीका आधार वननी चाहिए और उसपर ही हिन्दीका महान् भवन वनना चाहिए।

हमारी पूरी शब्दावली अन्तर्मुखी होनी चाहिए, न कि वह हिन्दीके

नामसे सस्कृत या विदेशी शब्दावली हो। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे भी यह आवश्यक है कि भारतकी प्राचीन, मध्यकालीन, आधुनिक भाषाओ और विदेशी भाषाओके शब्द आवश्यकतानुसार अपनाती हुई हिन्दी अपने ही भीतरसे विकसित हो। हिन्दीकी वही वृद्धि और उन्नति स्थायी, प्राकृतिक और स्वाभाविक होगी; दूसरी सभी प्रकारकी वृद्धि और उन्नति अप्राकृतिक और बनावटी होगी। हिन्दीके प्रत्ययो, उपसर्गों और देशी तथा तद्भव शब्दोका आज तकका विकास इस बातका प्रबल, स्पष्ट और अकाट्य प्रमाण है, कि हिन्दीमें इस ढगसे बढनेकी हर प्रकारसे पूरी क्षमता है। क्या हिन्दीके इस स्वाभाविक विकासको रोककर और भाषामें अबतक चले आनेवाले शब्दोको गँवारू, बाज़ारू, असाहित्यिक, असास्कृतिक और बोल-चालके शब्द आदि न मालूम क्या-क्या तिरस्कार-सूचक नाम देकर उनके स्थानपर विदेशी या सस्कृतनिष्ठ शब्दावलीका कृत्रिम ढाँचा खडा करना हिन्दीके लिए किसी भी दृष्टिसे हितकर होगा?

भाषाओका इतिहास जाननेवालोंसे यह बात छिपी नहीं है, कि ससार की कोई भी समृद्ध, सम्पन्न, साहित्यिक और उच्च भाषा ऐसी नही है, जो पहले बोलचालकी भाषा न रही हो। क्या अँगरेज़ी ऐंग्लो-सेक्सन लोगोकी बोली न थी? क्या उर्दू बादशाह शाहजहाँके शासन कालमे लश्करो और फौजी छावनियोकी बोली न थी? हिन्दी अपने आदिकाल में क्या थी? प्राचीनसे प्राचीन भाषाके सम्बन्धमें भी निर्विवादरूप से यही बात कही जा सकती है। विधानमें मानी गयी भाषाओमें कुछ भाषाएँ बहुत कम विकसित है। उन्हें शीघ्र ही बढना है। पर हमारे देशमें दरबारी लोगो, विशिष्ट वर्गों, और उन्हें प्रसन्न करनेवाले साहित्य-कारोका मोह और झुकाव सदा साहित्यिक भाषाकी ओर रहा है, बोल-चालकी भाषाकी ओर उन्होने तिरस्कार-भावसे देखा है। फल यह हुआ है कि हमारे देशमें एकके बाद दूसरी बोलचालकी भाषा साहि-

त्यिक भाषाके रूपमे बढी, पर अपने पद और घमण्डके कारण जनतासे हटकर ह्रास और पतनको प्राप्त होकर मर गयी। अब पुराने ग्रन्थोके सिवा उन्हे कही स्थान नही मिल रहा। और उनके साथ सहस्रो शब्द भी चलनसे बाहर होकर लुप्त हो गये। पर जनताकी शब्दावलीको अपनाने और उसके द्वारा उपयोग होने योग्य शब्दावली बनानेसे ही हमारी भाषा करोडो स्त्री-पुरुषोकी भाषा हो सकती है। अत्यन्त प्राचीन कालसे हमारे देशमे ऐसे महापुरुष होते रहे है, जिन्होने जनताको उसकी भाषामें धर्म, अध्यात्म ज्ञान और साहित्यकी बातें बतायी हैं। महात्मा बुद्ध, महावीर स्वामी, गुरु नानकदेव, भक्त कबीर, तुलसीदास, स्वामी दयानन्द और अब नवयुगमे महात्मा गान्धीने जनताकी भाषाको स्थान दिया। कविवर रवीन्द्रनाथने बगलाकी जनभाषाको प्रधानता देकर बगलाको बढाया। किसी भाषाको अमर बनानेका सबसे सरल उपाय यह है कि उसकी जडें और स्रोत जनताकी भाषासे जीवन और शक्ति लेते रहें। जहाँ ये स्रोत बन्द हुए, भाषाके प्राणदायक साधन समाप्त हो जायेंगे और भाषा निर्जीव हो जायेगी। फिर उसके मुरदा शरीर उठाये फिरनेसे सिवा मोह प्रदर्शन या बन्दरी-प्रेम-प्रदर्शनके कोई लाभ न होगा।

जनताकी इसी भाषाको सविधानने हिन्दी माना है। इसके गुणोका वर्णन नही किया जा सकता। सस्कृत या अँगरेजी आदिसे इसकी तुलनाका प्रश्न उठाना भी बेकार है। इसमें कमियाँ है, दोष और त्रुटियाँ नही हैं। इसमें हजारो पारिभाषिक शब्द है। इसमें नयेसे नये शब्द बनाने और दूसरी सभी भाषाओसे शब्द लेकर अपनानेकी अपार शक्ति है। इसकी जडें और सोते बहुत गहरे और दूर तक फैले हुए है। और सबसे बडी बात यह है, कि इसको व्यवहारमे लानेवाली जनतामें कुछ मुट्ठी-भर बडे आदमी ही नही है, इसमें यहाँके किसान, मजदूर, कारीगर, व्यापारी, स्त्री-पुरुष और बालक है, जो इसे नित नयी शक्ति देकर जिन्दा

और सबल बना रहे हैं। इसके शब्दोकी उपेक्षा करना अपने पैरोपर कुल्हाडी मारना है। इसके शब्दोको छोडकर दूसरे शब्दोको चलानेकी आशा करना, गोदके बालकको छोडकर पेटके बालककी आशा करना-मात्र है। हम बोलें यह जनभाषा और दावा करें दूसरी साहित्यिक भाषाका! हम पराये या अपने प्राचीन महलोको देखकर न तो अपनी इस झोपडीको फूँक सकते है और न इसके इतने अन्ध भक्त बन सकते है, कि अपने कुँएका खारी पानी ही पियें पर पडोसके मीठे पानीसे लाभ न उठायें।

इस जन-भाषामे उत्तर भारतमे पुराने कालसे चले-आनेवाले सभी उद्योगो और व्यवसायोके पारिभाषिक शब्द न केवल भरे पडे हैं, वरन् उनमे समय-समयपर नयी-नयी परिस्थितियो और प्रभावोके कारण नये नये शब्द भी बनते रहे हैं। हिन्दी और दूसरी भाषाओके पत्रकारो तथा लेखकोने विज्ञानकी भिन्न-भिन्न शाखाओके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है, उसमे भी उन्होने नये अनूदित शब्द दिये है। वे प्रचलित है। और जनता-के जाने-बूझे हैं इनका सग्रह होना चाहिए। भाषा-विज्ञानकी दृष्टिसे उनमें कोई दोष नही है। इन शब्दोका स्थान न तो अन्तरराष्ट्रीय शब्द ले सकते है और न सस्कृतनिष्ठ शब्द। ये शब्द देशकी अनमोल सम्पत्ति हैं और किसी भी कारणसे इनकी उपेक्षा करना अपनी भाषाको हानि पहुँचाना है। जनभाषाके इन प्रचलित शब्दोको पारिभाषिक शब्दोकी कमी पूरी करनेके लिए काममें लाया जा सकता है और उनसे तथा उनके ढगपर नये पारिभाषिक शब्द बनाये जा सकते है। इस दिशामे नीचे लिखे ढगोसे काम किया जा सकता है —

१ इस दिशामें सबसे बडा काम **शब्द-संग्रह** है। पुराने साहित्य, लोकभाषा, नये, पुराने हिन्दी-उर्दू कोशो और दस्तकारो तथा कारीगरोकी बोलियोमें जो शब्द हैं, उनका सग्रह तथा गणना होने और अनुक्रमणिका

वनने (indexing) की आवश्यकता है। एक-एक पारिभाषिक शब्द भिन्न-भिन्न व्यवसायो या उद्योगोमें किन-किन अर्थोमें काममें आता है, यह ज्ञान वडे महत्त्वका है। उदाहरणके तौर पर अड्डा, काँटा, दाना, तार, धार, जन्तरी, लच्छा, गोला, गोली, जोड, चूडी, छाती, हाथ आदि शब्दोके भिन्न-भिन्न अर्थ हैं। पर अच्छेसे अच्छे हिन्दी कोशमें भी वे अर्थ नही मिलते। इस प्रकारके शब्दोके सग्रहका सबसे वडा काम उर्दूमे अजुमन तरक्की-ए उर्दू द्वारा हुआ था। यह काम मौलवी जफर-उर्रहमान साहव देहलवीने सैकडो उद्योगोमें लगे कारीगरो और दस्तकारोसे मिल-मिल कर कई वर्ष कठोर परिश्रम करके तथा अनेक कष्ट सहकर किया था और फलस्वरूप कोई वीस-पच्चीस हजार शब्द संग्रह किये थे, जो फरहग-ए-इस-तलाहात पेशावरानके नामसे आठ भागोमें अजुमन तरक्की-ए-उर्दू-द्वारा प्रकाशित किये गये थे। उदाहरणके तौर पर 'पेशा सलोतरी'[1] से सम्बन्ध रखनेवाले कुछ प्रचलित पारिभाषिक शब्द दिये जाते हैं—आँतकट्टी, आँसूढाल, आँसूधार, अभिरोग, अकार, अगनवाव, वावसूल, वादखाना, वादखानी, वादी, वाववन्द, वतरा रोग, वट, वदनाम, वरसाती, वसन्ता, वसन्ती, वगलत, वेलहड्डी (Splint) पाइन, पाई, तालुआ तथा तालू, झोली (घोडेके पेटके अफारका रोग) रस या रस्सा, सुमफटा, या खुरफटा, सुम सुकडा, काँखना, किरकिरी या कुरकुरी, गलियाना (नलीके द्वारा पशुके पेटमें ओषधि आदि पहुँचाना) हड्डा आदि। ऐसे सहस्रो पारिभाषिक शब्दोको इन आठो खण्डोमे भरमार है। पारिभाषिकता, भाषा विज्ञान और हिन्दीकी दृष्टिसे इन शब्दोमें कोई दोष या त्रुटि नही है। पर हमारी सकीर्ण-हृदयता, और मनोवृत्ति, प्राचीनताका मोह और अज्ञान इनको अपनानेमें वाधा वना हुआ है। उर्दू लिपिमें होनेके कारण आज इस सग्रहका पूरा उपयोग नही हो रहा है। जो निहायत खेदकी

१. फरहग इस्तलाहात-ए-पेशावराँ भाग ५, पृष्ठ ६२-१०८।

वात है। इसको नागरीमे छपवानेकी वडी आवश्यकता है।

२ प्रादेशिक भापाओमे मिलनेवाले भी ऐसे शब्दोका सग्रह होना चाहिए।

३. विदेशी भापाओके शब्दोके साथ-साथ अन्तरराष्ट्रीय शब्द जैसे गैस, डेल्टा, सोडा, पाई, ग्राम, मोटर आदि शब्द हिन्दीमे चल रहे है, उन्हें अपनी भाषाका मानकर आगे उनकी सहायतासे हिन्दी व्याकरणके नियमोके अनुसार नये-नये शब्द वनाये जायें, जैसे (Gaseous) के लिए गैसदार (न), गैसीला (न), और उनके स्थानपर नये शब्द बनानेमें शक्ति, समय और धन नष्ट न किया जाये।

४ जन-भाषा हिन्दी या हिन्दुस्तानीकी शैलीपर नये शब्दका काम वडे ज़ोर और लगनसे होनेकी आवश्यकता है। ऐसे शब्द बनानेका काम न होनेके बरावर हुआ है। इसका कारण यही है, कि अँगरेज़ी या सस्कृतके विद्वान् नये-नये शब्द वनाने बैठते है, तो वे व्याकरण और शुद्धताके चक्करमे इतने फँस जाते है, कि उनसे न तो सस्कृत, अँगरेज़ी या दूसरी भाषाओके शब्दोमें विकास हो पाता है और न उनसे हिन्दी व्याकरणके अनुसार नये शब्द बनते है, क्योकि इसको वे विकार, अशुद्धि और शब्दको विगाडना मानते हैं। उदाहरणके लिए दूज, तीज, चौथ, चैत, फागुन और इतवारको क्रमश , द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, चैत्र, फाल्गुन और रविवार और 'इतवारी परिशिष्ट'के स्थानपर 'रविवासरीय परिशिष्ट' लिखना। इसी प्रकार केन्द्र शब्दको 'केन्दर' कहना और लिखना अशुद्ध बन गया है। केन्द्रसे नये शब्द केन्द्रित, केन्द्रीकरण, केन्द्रीकरण करना, विकेन्द्रित, विकेन्द्रीकरण करना आदि बनाये गये है, किसीको केन्दरियासे, केन्दरियान, केन्दरियाना, विकेन्दरियाये, विकेन्दरियाना बनाने और हिन्दी कहनेका साहस नही। अँगरेज़ी फारसी आदि शब्दोका भी यही हाल है। हिन्दी-वाले दूसरी भाषाओके शब्दोको तो हिन्दीके ढाँचेमें ढालनेका कुछ प्रयत्न करेंगे पर सस्कृतके शब्दोको हिन्दीके ढाँचेमे ढालना उन्हें पसन्द नही।

उर्दूवाले भी अरबी, फारसी शब्दो और नामोमे तो शीन, काफ दुरुस्त लिखेंगे और अरबी, फारसी ढंगोसे नये शब्द बनायेंगे, पर संस्कृत शब्दोको या तो मतरूक (त्यक्त, छोडा हुआ) कहेंगे या उनके बिना आवश्यकता तद्भव बनायेंगे। पर इसका यह अर्थ नही है, कि जन-भाषाके ढंगसे नये शब्द बनानेका काम नही हुआ है। हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धाने 'हिन्दके विधानका अँगरेजी हिन्दुस्तानी कोश' प्रकाशित करके और डॉ० जाफर हसनने बडे परिश्रमसे हिन्दुस्तानी शब्दियात[1] नामक क्रान्तिकारी लेखमालाके द्वारा किया है। पर यह काम इतना कम है कि वह विज्ञान या शिल्प-विज्ञानकी एक भी शाखाकी पारिभाषिक शब्द-सम्बन्धी आवश्यकताको पूरा नही कर सकता। इनमे बहुत-से शब्द पारिभाषिकता, अर्थ या सुरुचिकी कसौटीपर पूरे नही उतरते और अटपटे है, पर बिचौलिया (mediator), उतराई (ferry charges), ठहराव (resolution), गुटका (vademecum) और हिन्दुस्तानी शब्दियातके शब्द जैसे बिजलियाना (electrify) इसाईयाना (Christianize) आदिको कौन ठीक न मानेगा? इनके पीछे प्रगतिशीलता, भाषा-क्रान्ति, जनहित और शब्द-लाघवताकी जो तीव्र भावना है वह अत्यन्त सराहनीय और अनुकरणीय है।

५. ऊपर लिखे कामोसे अधिक महत्त्वका काम यह है, कि हमारे साहित्यकार, वैज्ञानिक और शिल्पी, बोलचाल और साहित्यमें जनभाषाके शब्दोको विदेशी और संस्कृत, अरबी तथा फारसी शब्दोपर प्रधानता दें। जन-भाषाके इतने गुण होते हुए भी, इसका अर्थ यह नही है, कि साहित्यिक भाषाका महत्त्व या स्थान कम है। न इसका यह अर्थ है कि हम भाषाको अशिक्षितो, गँवारो, घसियारो और भटियारोके खिलवाडकी

---

१. 'नया हिन्द', इलाहाबाद, अंक सितम्बर सन् १९५२ से अंक अगस्त सन् १९५३ तक।

ऊपरकी तालिका और दूसरी बातोको देखकर हम नीचे लिखे परिणामोपर पहुचते हैं—

१. इन शब्दावलियोमे पौनेके लगभग (७२%) शब्द या तो सस्कृतके तत्सम शब्द हे या तो सस्कृत शब्दोसे बनाये हुए शब्द हैं।

२ अन्तर्राष्ट्रीय और अँगरेजी शब्दोकी सख्या शब्दोका आठवाँ भाग (१२%) के करीब है।

३. अँगरेजी-हिन्दी, अँगरेजी-सस्कृत आदि संकर शब्द भी नौ प्रतिशत हैं।

४ पर हिन्दीके शब्द कुल सोलहवाँ भाग (६%) है। जैसे गणितमे डेकागन (decagon) के लिए 'दशभुज' दिया है, 'दस कोने नही दिया गया है, और ट्रायगल (triangle) के लिए अत्यन्त प्रचलित हिन्दी शब्द 'तिकोन' त्रिभुज और नही, त्रिकोण दिये गये है। समझमें नही आता कि अत्यन्त प्रचलित हिन्दी शब्दोको छोडकर भी यह हिन्दी शब्दावली किस तर्कसे कही जाती है ?

५. इन शब्दावलियोमे सस्कृत और अँगरेजी शब्दोको हिन्दी ढगपर विकसित नही किया गया है। परिणामत हिन्दी या हिन्दीके व्याकरणके ढगसे शब्दोका विकास रुक-सा गया है। हिन्दी प्रत्यय और उपसर्ग गौण पड गये है।

६ इन शब्दोमे किसी दूसरी आधुनिक भारतीय भाषा जैसे गुजराती, मराठी, बँगला और तमिल आदिके अत्यन्त कम शब्द हैं। और जो हैं उनके आगे इन भाषाओके सकेत नही हैं।

७ अनुवादमें भी कही-कही अशुद्धियाँ हैं, जैसे मेडिकल सार्टीफिकेट लिए डॉक्टरी प्रमाण-पत्र और चिकित्सा प्रमाण-पत्र दिये गये हैं। आगे fitness or sickness के लिए क्षमताका या 'बीमारीका' और जोडे गये है। यहाँ स्वास्थ्य पत्र और अस्वस्थता-पत्रसे भाव प्रकट हो सकता था। ये दोनो

ही कोई डॉक्टर ही दे सकता है अत डॉक्टरी और प्रमाणपत्र दोनो जोड़कर बनाना अनावश्यक है। इसी प्रकार अन्य बहुत-से शब्दोके बारेमे सोचा जा सकता है। शायद यही होगा भी। सारे सुझाव एकत्र करके फिर एक बडा शब्दकोश प्रकाशित होगा। अभी तो यह शब्द-सग्रह ही है। व्यवहार और परिचार-द्वारा इनमें अभी और भी परिवर्तन अपेक्षित हैं।

८ नयी हिन्दी क्रियाएँ सस्कृत आदि शब्दोके साथ 'करना' प्रत्यय लगाकर बनायी गयी है, 'ना' प्रत्ययका प्रयोग प्राय नही किया गया। जैसे, सर्टीफाई (certify) के लिए 'प्रमाणित करना, तसदीक करना और प्रमाण देनाके स्थानपर प्रमानना क्रिया छोटी और हिन्दीके अधिक समीप होती। (circulate) क्रियाके लिए 'घुमाना'के साथ 'परिचालित करना' दिया गया है जबकि 'परिचलना' और 'परिचलाना' से काम चल सकता है।

९ सस्कृत और अँगरेज़ीके अच्छे ज्ञानके बिना स्कूलोके विद्यार्थी इन ८४ प्रतिशत सस्कृत-अँगरेज़ी शब्दोको न तो समझ सकेंगे और न शुद्ध लिख सकेंगे। इसलिए हिन्दीके साथ अँगरेज़ी और सस्कृतका गठजोड़ा अभी बहुत वर्षों तक ही नहीं, जबतक यह शब्दावलियाँ रहेंगी, तबतक बना रहेगा।

स्पष्ट है कि शिक्षा मन्त्रालय और बोर्डको यह प्रयत्न अवश्य करना चाहिए कि अन्तिम रूपसे प्रचलित शब्दावलीकी जडें हिन्दी यानी जन-भाषामें अधिक हो।

गणित और अन्य विज्ञानोमें प्रयोग किये जानेवाले सकेत-अक्षरो, चिह्नों और सूत्रोके बारेमें बोर्डका यह निर्णय, कि वे बिना किसी परिवर्तन-के ग्रहण कर लिये जायें, अर्थात् रोमन लिपिमें लिखे हुए अक्षर और अक

हिन्दीमें प्रयुक्त किये जायें, इन्हें अस्थायी तौरसे दस-पन्द्रह सालके लिए मान लेनेमें किसीको आपत्ति न होनी चाहिए। जिस प्रकार जन-भाषा और साहित्यिक-भाषासे पारिभाषिक शब्द बनते रहते हैं, वैसे ही पारिभाषिक शब्दोंसे जनता और भाषाएँ शब्द, मुहावरे और कहावतें भी बनाती रहती हैं और आगे भी बनती रहनी चाहिए।

●

बीसवाँ परिच्छेद

नयी-पुरानी संज्ञाएँ

भाषामें सज्ञाओका महत्त्व इसी बातसे प्रकट है, कि हर-एक भाषामें सज्ञा शब्दोकी सख्या और सब प्रकारके शब्दोसे बहुत अधिक होती है। इसका कारण यही है कि हमारे आसपास, जगत्में और जगत्के बाहर लोकालोकमें अनगिनत जीव, जड पदार्थ और भाव हैं। फिर उनके भेद, प्रभेद और उपभेद तथा उनकी अलग-अलग अवस्थाएँ और उनके काम हैं, जिनमें-से हर एकके लिए नही तो बहुतोको बतानेके लिए सज्ञा शब्दोकी आवश्यकता पडती है। मनुष्य जाति, पशुओ, कीडो-मकोडो धातुओ, उद्योग-धन्धो, शिल्पकलाओ और ज्ञान-विज्ञानो आदिमें मे यदि किसी एकको भी जरा ध्यानसे देखा जाये, तो उसके बहुत से प्रकार और उपभेद मिलेंगे। उन सबके लिए नामोकी आवश्यकता पडती है। किसी जातिकी सभ्यता और सस्कृतिकी उन्नति और औद्योगिक विकासके साथ-साथ उसकी भाषा-की भी उन्नति और विकास होता रहता है। भाषाकी उन्नतिका अर्थ है उसके शब्द-समूहकी वृद्धि, जिनमे सज्ञाओकी गिनती ही अधिक होती है। इन सज्ञाओमें सामान्य शब्द, पारिभाषिक शब्द और अर्द्ध-पारिभाषिक शब्द होते हैं।

संज्ञा शब्द धीरे-धीरे आवश्यकताके अनुसार शब्द-रचनाके ढग अनेक नियमोके अनुसार बनते रहते हैं, जिनका वर्णन उदाहरणसहित इन पुस्तक-मे दिया गया है। पूर्व सचित सामग्रीके आधारपर वर्णोके जरासे हेर-फेरसे या शब्दोके जोड-तोडसे कभी-कभी सर्वथा नये-नये शब्दोकी रचना हो जाती

है। कभी वह ठीक ढगोसे होती है, और कभी अनसुने तथा आश्चर्यपूर्ण ढगसे होती है। कभी-कभी पुराने शब्दोको ही नवीन भावोका द्योतक बना लिया जाता है, यानी पुराने शब्दोको नये अर्थ दे दिये जाते है। इसमे भी व्यवहारको सबसे अधिक मुख्यता है। जो शब्द जिस रूप या अर्थमें व्यवहारमें चल गया, वह चल गया, चाहे भाषा-शास्त्री उसमें कितनो भी मीन-मेख न निकालें। शब्दोकी यही विचित्र बात है। इतना ही नही, फिर नये सज्ञा शब्दोसे आवश्यकतानुसार नयी क्रियाएँ, नये विशेषण, तथा लिंग-भेद सूचक, लघुता-वाचक या भाववाचक आदि सज्ञाएँ बनती है, मानो उन सज्ञा शब्दोका वश फैलता है।

सज्ञा शब्दोकी रचनाके कुछ विशेष नियमोका वर्णन करनेसे पहले, सज्ञाके भेदोको बता देना आवश्यक मालूम होता है। ये भेद वे नही हैं जिनको विद्यालयोके विद्यार्थी हिन्दी व्याकरणकी पुस्तकोमें पढते हैं, वरन् सज्ञा शब्दोके कृत्रिम या अकृत्रिम होनेसे सम्बन्ध रखते हैं। इस दृष्टिसे हेलाराजने संज्ञाके नीचे लिखे चार प्रकार बताये हैं —[1]

१ **अकृत्रिम या प्रचलित संज्ञाएँ** जो प्राचीन परम्परासे चली आती हैं, जैसे गौ, घोडा, जल, पानी, कुत्ता आदि।

२ **कृत्रिम या बनावटी संज्ञाएँ** जो नाम किसी आचार्य, विद्वान् या व्यक्तिके द्वारा किसी भावको प्रकट करनेके लिए रखे जाते हैं। इसके दो भेद हैं (अ) पारिभाषिक सज्ञाएँ जो पारिभाषिक शब्दोको बतानेके लिए बनायी जाती है जैसे गुण, वृद्धि आदि। (आ) व्यक्तियो आदिके नाम, जैसे मोहनलाल, भारत, बगाल, दिल्ली आदि।

३. **दोनों विधिकी संज्ञाएँ** जो कृत्रिम और अकृत्रिम दोनो प्रकारकी हैं। इनके द्वारा पारिभाषिक (कृत्रिम) और अकृत्रिम दोनो भाव बताये जाते हैं, जैसे क्रिया, सख्या, कर्म, जोड, सन्धि आदि।

---

१. अर्थ-विज्ञान और व्याकरण-दर्शन, पृ० १४६।

४. अकृत्रिम सज्ञा संज्ञा होते हुए भी कृत्रिम संज्ञाके लिए भी प्रयोगमें आनेवाला शव्द, जैसे सम्बोधन, यह लौकिक अर्थके साथ-साथ पारिभाषिक अर्थको भी बताता है।

पाणिनिने सज्ञा शब्द वनानेकी नीचे लिखी विधियाँ दी है, जिन्हें प्राचीन तथा नये उदाहरणो सहित दिया जाता है। यदि किसी संख्या-क्रममें आनेवाली विधियोके अतिरिक्त कोई और विधि होगी तो उसे उस सख्या-क्रमके अन्तमें अलगसे दे दिया गया है।

१. व्यक्तियोंके नाम रखनेकी विधियाँ

(अ) पिताके नामपर, जैसे जानकी, दाशरथि, पाण्डव आदि। (आ) माताके नामपर, जैसे ऐतरेय, कौन्तेय (कुन्तीसे), माद्रेय (माद्रीके नामपर उसके दो वेटो नकुल और सहदेवका विशेपण), सौमित्र (सुमित्रा-से) आदि।

(इ) गोत (गोत्र)के नामपर, जैसे काश्यप, राघव, वात्स्यायन। पाणिनि-का अपना असल नाम 'आह्हिक' था, पर गोत्रका नाम पाणिनि था, उनका यह गोत्र नाम इतना प्रसिद्ध हुआ, कि असल नाम भुला दिया गया।

(ई) जन्म-स्थानके नामपर, जैसे पतजलिका नाम गोदीर्य भी था और पाणिनिका नाम शालातुरीय भी था। माथुर मथुरासे वना है।

निवास-स्थानके पासकी किसी चीजके नामपर भी व्यक्तियोके अल्ल नाम पड जाते है, जैसे प० मोतीलालका वश दिल्लीमें नहरके पास रहने-से नहरू कहलाने लगा। उनके सुपुत्र जवाहरलाल नेहरूको केवल 'नहरूजी'के नामसे पुकारा जाने लगा।

(उ) उस प्रान्त या देशके नामपर जहाँ उस व्यक्तिका जन्म हुआ हो, जैसे कैकेयी (केकय देशसे), गान्धारी (गान्धार, आधुनिक कन्धारसे), माद्री, मैथिली (मिथिलासे) आदि।

(ऊ) जिस रास या नक्षत्रमें कोई व्यक्ति पैदा हो, उसके नामपर,

जैसे रौहिणेय (रोहिणी नक्षत्रमें उत्पन्न होनेके कारण, फाल्गुन, फाल्गुनी नक्षत्रमें पैदा होनेके कारण अर्जुनका नाम) आदि ।

(ए) प्राचीन कथानको तथा उपाख्यानो आदिके आधारपर, जैसे पुरन्दर और वृत्रहा (इन्द्रके नाम, वृत्र नामके दानवको मारनेकी कथाके आधारपर), त्र्यम्बक (शिवका) आदि ।

(ऐ) चिढानेवाले या व्यग्यात्मक नाम भी पड जाते हैं और प्रचलित हो जाते है, जैसे एक ऋषिका नाम 'यर्वाण तर्वाण' था, क्योकि वे 'यद्वान तद्वान'के स्थानपर 'यर्वाण तर्वाण' ही बोला करते थे। इग्लैण्डकी पार्लियामेण्टका टोरी (Tory वर्तमान कन्जर्वेटिव) अनुदार दल और व्हिग (whig वर्तमान Liberal उदार दल) नाम चिढसे पड गये थे, और इन दलोके सदस्य अपने लिए ये नाम बडे गर्वके साथ प्रयोग करते थे ।

इनके अतिरिक्त कभी-कभी वंशोकी अल्ल, व्यवसाय, किसी पुरुष-का पद, कवियोका उपनाम (तखुल्लस,) कल्पित नाम आदि भी नामोके स्थान पा लेते है, जैसे महात्मा गान्धी कहनेसे प्राय. राष्ट्रपिता मोहन-दास करमचन्द गान्धीका ही बोध होता है । नेहरूजी (प० जवाहरलाल नेहरू), सरदार पटेल (सरदार वल्लभ भाई पटेल), मौलाना आज़ाद साहब (मौलाना अबुल कलामका उपनाम), गुरुदेव टैगोर (कविवर रवीन्द्र नाथ टैगोर), प्रेमचन्द (प्रसिद्ध उपन्यासकार धनपतरायका कल्पित नाम) तथा द्विवेदीजी (महावीरप्रसाद द्विवेदी) आदि । बहुत-से उर्दू कवियो-के नाम तो केवल पुस्तकोमें ही मिलते है, पर उनके उपनाम जैसे जफर, सौदा, जौक, दाग, हाली, अकबर, तथा जोश मलीहाबादी सब उर्दू जाननेवालोको याद हैं ।

२ ग्रन्थोंके नाम

(अ) ग्रन्थोको ग्रन्थकारका ही नाम दे दिया जाता है, जैसे कठ और चरक ऋषिकृत सहिताओको कठ और चरक नाम दे दिया गया ।

(आ) जीवनी, कहानी, पुराण तथा नाटक आदिको उसके मुख्य पात्रका ही नाम दे दिया जाता है, जैसे वासवदत्ता, कादम्बरी, चन्द्रगुप्त, हर्ष, अशोक, नूरजहाँ, शकुन्तला, महाराणा प्रताप, महात्मा गान्धी, लेनिन आदि।

ग्रन्थोको अध्यायो या छन्दोकी सख्याके आधारपर भी नाम दे दिया जाता है, जैसे अष्टाध्यायी, बिहारी सतसई, भर्तृहरिशतक (सौ श्लोकके आधारपर), समाधि शतक (पूज्य-पादाचार्य रचित), हनुमान् चालीसा (चालीस दोहोके कारण) आदि। यह आवश्यक नही है, कि श्लोकोकी संख्या ग्रन्थके नामकी सूचनाके अनुसार ही हो। उनकी सख्या कुछ कम या अधिक भी हो सकती है, पर यह बात अध्यायोपर लागू नही होती। ग्रन्थकी मुख्य घटना, विषय या भावके नामपर भी ग्रन्थका नाम दे दिया जाता है, भरतमिलाप, जयद्रथवध, अछूतोद्धार, सेवा-सदन, गोदान मेवाड-पतन, स्वाधीनता (जॉन स्टुआर्ट मिल लिखित 'लिबर्टी' नामक प्रसिद्ध पुस्तकका महावीरप्रसाद द्विवेदीकृत हिन्दी अनुवाद), द्वितीय महायुद्ध, साम्यवाद, बुद्धवाणी, दूसरी पचवर्षीय योजना आदि। चलचित्रो (फ़िल्मो) के नाम भी इसी ढगसे रखे जाते हैं।

३. राजाओंके नाम

देशके राजाओको देशके नामसे सम्बोधित कर दिया जाता है, जैसे कम्बोज, चोल, केरल, शक आदि।

४. वृक्षों आदिके नाम

वृक्षो या लताओंके फलोको भी, उन्हीका नाम दे दिया जाता है, जैसे अमरूद, अगूर, आम, अनार, अनन्नास, चीकू, पपीता, फालसा, लोकाट आदि। सागभाजी तथा कन्दमूल आदिको पौधे, बेल या वृक्षका ही नाम दे दिया जाता है, जैसे आलू, कचालू, कटहल, खरबूजा, गोभी, टमाटर, टिण्डा, तरबूज, तोरी, भिण्डी तथा शकरकन्दी आदि।

५. अनाजोंके नाम

अनाजोको उसी पौधेका नाम दे दिया जाता है, जैसे अरहर, उडद, गेहूँ, चना, चावल, जई, जौ, तिल, सरसो और सोयाबीन आदि।

६. फूलोंके नाम

फूलोको वृक्षो, पौधो या लताओका नाम दे दिया जाता है, जैसे अशोक, कदम्ब, गुलाब, गेंदा, चमेली, मोतिया, मौलसरी, सेवती, रातकी रानी आदि।

७. जड़के नाम

जड (मूल)को वृक्ष या लताका नाम, जैसे अशुमती, विदारी। पर प्राय जड, पत्तो, छाल (वक्कल) तथा बीजके नामोको उस वृक्ष, पौधे या वेलका नाम जोडकर कहनेकी अधिक प्रथा है, जैसे नीमके पत्ते, नीम-की छाल नीमकी जड, कटाईके पत्ते, कटाईकी जड, कटाईकी छाल, कटाईके बीज आदि। सामासिक शब्दोके द्वारा का, के, की सम्बन्धवाचक शब्दोको उडाकर नाम छोटा बन जाता है। इस विधिसे इनके लिए सहस्रो नये शब्द बनानेका झंझट नही करना पडेगा और सुननेवाला आसानोसे समझ ज येगा।

८. देशके नाम

देशका नाम जातियोके नामपर पड जाता है, जैसे अग, कुरु, पाचाल, ब्रिटेन, मगध आदि। भरतके नामपर हमारे देशका प्राचीन नाम भारत या भारतवर्ष पडा। सिन्धु नदीके कारण इसी देशका नाम हिन्द, यहांके निवासी हिन्दु और फिर यह देश हिन्दुस्तान कहलाया। खोजी अमरीकोके नामपर दोनो महाद्वीप अमरीकाओका नाम पडा। अमरीकाके पूर्वी द्वीप-समूहमे पहुँचकर कोलम्बसने समझा कि वह भारत (इण्डिया)के पश्चिमी द्वीपोमे आ गया है। इसपर उसने उनका नाम वैस्ट इण्डीज (पश्चिमी

हिन्द द्वीपसमूह) रख दिया और वहाँके निवासियोको रेड इण्डियन कहा, जो सर्वथा गलत था और यह गलती अब ठीक नही हो सकती। इसीके ढर्रेपर दक्षिणी प्रशान्त महासागरके द्वीपसमूहका ईस्ट इण्डीज (पूर्वी हिन्द द्वीपसमूह) रखा गया, यद्यपि वह भारतसे वहुत दूर है।

राजनैतिक कारणोंसे देश, शहरो, गली, मुहल्लो आदिके नाम खूब वदलते है। रूसमे सन् १९१७ के वाद नामोंमें वडी अदल वदल हुई। भारतवर्ष और पाकिस्तानमे भी नाम वदलनेको प्रवृत्ति देखी जा रही है, जो ठीक नही है।

हिन्दीमें देशो, प्रान्तो, नगरो, नदियो तथा पर्वत आदिके नामोके अध्ययनकी वडी आवश्यकता है। अँगरेज़ीमें तो भाषा-विज्ञानकी एक शाखाका नाम ही टॉपोनोमी (Toponomy) है, जिसे स्थान-नाम-शास्त्र कह सकते है।

६. वस्तुओंके नाम

वस्तुओके नाम देश तथा स्थानके नामपर रखे जाते है, जैसे एकेडेमी (साहित्य अकादमी, सगीत नाटक अकादमी, उर्दू अकादमी तथा हिन्दुस्तानी अकादमी आदि) शब्द यूनानकी राजधानी एथेन्सके पास स्थित एक वगीचीका नाम है जहां प्लेटो और उसके शिष्य दार्शनिक वादविवाद करते थे। उसी स्थानका नाम अब अकादेमी शब्द हो गया। कश्मीरके नामपर ऊनी कपडे कशमीरेका नामकरण हुआ। कैलिको कपडोका नाम कालीकट नगरसे पड गया। चीनी (मिट्टी) और चीनी (दानेदार खांड) चीन देशके नामपर है। जीन कपडेकी पतलून, निकर आदि वनती है। इसका यह नाम इटलीके प्रसिद्ध नगर जिनोवामें वननेके कारण पड गया। पोर्ट नामकी वढिया मदिराका नाम पुर्तगालकी प्रसिद्ध बन्दरगाह ओपोर्टोसे आनेके कारण पड़ गया। काले फुँदनेवाली लाल टोपीका नाम फैज़ टोपी है, जो उत्तरी अफ्रीकामें स्थित मराकू देशके प्रसिद्ध नगर

फँज़पर पडा। मलमलको अँगरेज़ीमे मसलिन कहते है और यह नाम इराकके नगर मूसलपर पडा। मध्यकालमे शायद वहाँके व्यापारी भारतसे मलमल ले जाकर युरॅपमे बेचते होगे। मिश्री मिस्र देशसे आती थी। मॉरिस चीनीका नाम मारिशस द्वीपके नामपर प्रचलित हो गया। वढिया वास्तोन कलम (मूल वास्ती कलम) से व्यापारी लोग अब भी वही-खाता करते है। इसका पौधा इराक देशके बसरा बगदाद नगरोंके पास वास्ता नामी स्थानपर जगलोंमें पैदा होता है। उसीपर इसका यह नाम चल निकला।[1] सुरती (सूरतसे) का रोचक वर्णन 'ई' प्रत्ययमे विस्तारसे दे दिया गया है। भला कोई इन नामोसे अर्थ कैसे निकाले ? कहनेका तात्पर्य यह है कि स्थानोके नामोपर बहुत-सी वस्तुओके नाम रखे जाते है।

१०. शास्त्रों या ग्रन्थोंके नाम

शास्त्रो या ग्रन्थोके जानकारो तथा पढनेवालोको भी उसी नामसे पुकारा जाने लगता है, जैसे पाणिनिके व्याकरणके ज्ञाता और छात्रको पाणिनीय कहा जाता था। चतुर्वेदी, त्रिवेदी, त्रिपाठी, द्विवेदी और ग्रन्थी (सिखोके गुरु ग्रन्थसाहबका ज्ञाता) इसी प्रकार बने हैं। इन्ही शब्दोसे चौबे, तिवाडी (तिवारी भी) और दूबे बन गये। मुसलमानोमे कुरानको कण्ठस्थ याद करनेवाले 'हाफिज़' कहलाते है।

एक भागके लिए भी सम्पूर्णके नामका प्रयोग किया जाता है, जैसे उत्तरी अमरीका, पश्चिमी बगाल, पूर्वी पजाबके लिए अमरीका, बगाल और पजाब आदि। सयुक्तराज्य अमरीकाके लिए अमरीका ही कहा जाता है, जैसे अमरीको सहायता, अमरीकी अड्डे आदि। बगालमें हिन्दीभाषियो-के लिए ही हिन्दुस्तानी चलता रहा है।

सम्पूर्णके लिए भी एक-एक भागका नाम काम आ जाता है, दक्षिण

---

१ फरहग इस्तलाहात-ए-पेशावरान, भाग ४, पृष्ठ १८४।

भारतके निवासियोको उत्तरमें मद्रासी कह दिया जाता है। अमरीकामे हिन्दू सारे हिन्दुस्तानियोके लिए बोला जाता है। नामका काम भी भाग-से चल जाता है, जैसे देवदत्तको देव या दत्त कह देते है।

लक्षणपर लक्ष्यका नाम पड जाता है, जैसे अन्धा काना (काना आदमी), कानी, कालू (काले आदमीके लिए), कोढी, छगा आदि।

स्थान या देशके नामपर जातियोका नाम, जैसे कश्मीरी, चीनी, जापानी, तिलगा, पजाबी, पाकिस्तानी, रूसी, हिन्दी आदि।

भाषाओके नाम भी प्राय स्थानोपर ही पडते है, जैसे अवधी, हिन्दी, गुजराती आदि (देखें, 'ई' प्रत्यय)।

अब सज्ञा शब्द बनानेके बारेमे सक्षेपमें कुछ और विधियाँ, विचार तथा सुझाव नीचे दिये जाते है

बहुत-सी वस्तुओके नाम व्यक्तियोके नामपर पड जाते है, जैसे ऍटलस नाम (नक्शोकी पुस्तक) यूनानी दैत्य ऍटलसके नामपर पडा। क्विजलिंग शब्द जिसे हम विभीषण या जयचन्द कह सकते है, नारवेकी सेनाके एक अफसरपर पडा, जो देश-द्रोही हो गया। इसलिए यह नाम देश-द्रोहियोके लिए आता है। डाढी-मूँछ सफा-चट रखनेका फैशन भारतके वायसराय लार्ड कर्ज़न (शासन-काल सन् १८९९–१९०५) के नामपर कर्ज़न फैशन कहलाता है। निकल धातुके रुपये तथा बरतन आदि भारतमे खूब चलते रहे है। भारतके सिक्कोमे भी चाँदीका स्थान उसीने ले लिया है। यह निकोलस नामके व्यक्तिके नामका छोटा रूप है। यह शब्द स्वीडनसे इग्लैण्ड आया और वहाँसे यहाँ आया।

शब्द घूमते-घूमते कहाँसे कहाँ पहुँच जाते है, उनमे-से यह एक उदा-हरण है। बहुत सोनेवालेको हम कुम्भकरण, दानीको करण, सत्यवादीको हरिश्चन्द्र तथा अति प्रेमीको मजनूँ कहते है। ये सब नाम ही तो है। 'पैम्फलेट' (छोटी पुस्तिका) शब्द मध्यकालीन एक यूनानी कवि 'पैम्फि'-लसकी एक कविताके नामपर पड गया। स्वराज्य आन्दोलनके दिनोंमे

'बॉयकाट' शब्द यहाँ चल रहा है। यह शब्द आयरलैण्डके एक कर्मचारी कैप्टन बॉयकाट (सन् १८८०) के नामपर प्रचलित हुआ था। इससे क्रिया बॉयकाट करना बनती है। 'मेस्मेरिज्म' एक प्रकारकी नज़र बाँधने की मोहिनी विद्या है। यह शब्द मेस्मर नामके व्यक्तिके नामपर चालू हुआ। तम्बाकोके विपको 'निकोटीन' कहते हैं। यह शब्द पुर्तगालकी राजधानी लिज़बन स्थित फ्रान्सीसी राजदूत (सन् १५६०) निकोलसके नामपर पडा। बिजलीमें 'वाल्ट' शब्द विद्युत् शक्तिकी इकाईको कहते हैं और इससे कई शब्द बनते हैं। विद्युत् विज्ञानमे हमारे यहाँ भी यह शब्द चलता है। यह शब्द इटलीके एक भौतिकी विज्ञानी वाल्टा (मृत्यु सन् १८२७) के नामपर पडा। ऐसे ही बिजलीकी मापकी इकाईका शब्द 'वाट' (Watt) हमारे यहाँ चलता है, जैसे यह बल्ब चालीस वाट या बत्तीका है। यह शब्द भी जेम्सवाट नामके एक इजीनियर (मृत्यु सन् १८१९) के नामपर पडा। यहाँ वाटका अनुवाद बत्ती अर्थ-विज्ञानकी दृष्टिसे बडे महत्त्वका है। सभाओके ठीक टाइमको गान्धी-टाइम कहा जाता है, क्योंकि गान्धीजी निश्चित समयपर सभामें बोलने आदिके बडे पाबन्द थे। इसी प्रकार नादिरशाही आज्ञा, ज़ारशाही, हिटलरशाही शब्द भी नामोपर प्रचलित हुए हैं।

कभी-कभी व्यक्तियोंके नामोके अन्तिम भागको प्रत्यय बनाकर वस्तुओ-के नाम रखे जाते हैं। बेतारके तारके आविष्कर्ता इतोलियन वैज्ञानिकका नाम मारकोनी था। अमरीकाकी एक व्यापारिक संस्थाने अपने एक रेडियो-का नाम मारकोनीके ढर्रेपर टैण्डरोनी रजिस्टर्ड कराया। इसका अर्थ कोमल-ध्वनिका रेडियो हुआ। क्या हमारे रेडियो निर्माता इसी प्रकार अपने रेडियोके नाम तानसेनी (न), बैजोनी (न), विष्णोनी (न) या सहगलोनी (न), मधुरोनी या कमलोनी रखकर भारतके प्रसिद्ध गायको तानसेन, बैजूबावरा, विष्णु दिगम्बर और सहगलका नाम चलाना पसन्द करेंगे? साथमें ओनी (न) प्रत्यय भी हिन्दीको नया मिल जायेगा। इसी प्रकार

बहुतसी चीजोंके नाम भी व्यक्तियोंके नामपर पड़ते रहते हैं।

धर्मों, सम्प्रदायों तथा पन्थोंके नाम व्यक्तियोंके नामपर चल पड़ते हैं। ये नाम सामासिक शब्द होते हैं और इनके अन्तमें धर्म, मत, पन्थ, सम्प्रदाय तथा वाद आदि शब्द आते हैं, जैसे ईसाई धर्म, कबीर पन्थ, गान्धीवाद, बौद्ध धर्म, मार्क्सवाद आदि। अब भारतमें गण, गच्छ और संघ आदिका रिवाज नहीं रहा, वरना उनके नाम भी व्यक्तियोंके नामोंपर रखे जाते थे, जैसे नन्दि संघ आदि।

हिन्दीके प्रसिद्ध प्रकाशक और जैन साहित्यके ज्ञाता पं० नाथूरामजी प्रेमीने भारतमें पति-पत्नीके नाम समान होनेकी प्रथाका उल्लेख किया है।[1] इस प्रथाके अनुसार पतिके नामके साथ श्री, देवी, बहू आदि जोड़कर पत्नीका नाम ससुरालमें बोला जाता था। यह प्रथा अँगरेजी प्रथा पतिके नामके साथ 'मिसेज़' शब्द जोडकर पत्नीका नाम बोलनेकी प्रथाके समान है। इसके कुछ पुराने उदाहरण ये हैं . सेठानी भविष्यदत्ता (भविष्यदत्तसे) सोम-श्री ब्राह्मणी (सोमदत्तसे), यज्ञदत्ता(यज्ञदत्तसे), धनदत्ता, हीरादेई (हीरासे), धर्मश्री (धर्मदाससे), नून सिरि (साह नूनासे), जीवलदे (साह जीवासे), वेला बहू (वेलजीसे)। इस प्रथाका चलन रुक गया है। पर कहीं-कहीं बोल-चालमें अब भी प्रचलित है।

ओजारोकी सख्या बहुत है और इनके काम अलग-अलग होते हैं। घर, उद्योग-धन्धो, छोटे शिल्पो, बडे-बडे कारखानो, ग्राम तथा घरेलू दस्तकारियो और विज्ञान शालाओमे औजारो तथा यन्त्रोकी आवश्यकता हर घडी पडती है। इनके नाम क्रियाओ, सज्ञाओ और विशेषणोसे शब्द-रचनाकी अनेक विधियोके अनुसार बनते हैं। कभी-कभी बिना नियमके भी नाम बन जाते हैं। इस पुस्तकमे सैकडो औजारो तथा यन्त्रोके नाम मिलेंगे। भिन्न-भिन्न प्रकारके कारीगरो तथा शिल्पियोके आविष्कारोमे

---

१. जैन साहित्य और इतिहास, पृ० ५४१-४२।

उद्योग-धन्धो और शिल्पोमे काम आनेवाले औज़ारो (कामो, क्रियाओ, अवस्थाओ आदि)के नाम रखे हैं। उन्होने यह काम अपनी सहज बुद्धिसे अपनी पूर्व-सचित शव्द-सामग्रीके आधारपर किया और यह कहा जा सकता है, कि उन्होने वडे अच्छे, छोटे-छोटे तथा अर्थपूर्ण शव्द वनाये हैं। शव्दशास्त्रियो, विद्वानो या यन्त्रकारोने उनके लिए शव्द नही वनाये थे। ये लोग तो प्राय उन्ही नामोमें हेर-फेर करके शव्द वनाते है या अपने कामके शव्द वनाते हैं। औज़ारवाचक शव्द वनानेके केवल प्रत्ययोकी सूची यहाँ दी जाती है—आ, इया, ई, एल, औटो, क, का, कश, की, ग्राफ, गिरा, गीर, डी, न, ना, दर्शक, पाश, फ़ोन, वोन, मीटर, स्कोप आदि।

खेदकी वात है कि आज हम अपने विद्यमान यन्त्रवाचक शव्द-समूहकी अवहेलना करके नये-नये शव्द वनाते जा रहे हैं। आवश्यकता इस वातकी है, कि हमारे अनेक शिल्पियोमे दिन-रात प्रयोगमे आनेवाले शव्दोको सग्रह करके कोश तैयार कराये जायें। यह काम हर-एक प्रादेशिक भाषा (तथा जनपदीय वोलियो)मे होना चाहिए। उर्दूमे यह महान् काम अजमन तरक़्की-ए-उर्दूकी देखरेखमे मौलवी जफरउर्रहमान साहब देहलवीने किया था।

संज्ञाएँ इतनी है कि उनमें-से हर-एक प्रकारकी सज्ञाओके वनानेकी विधि यहाँ देना स्थानाभाव और अल्पज्ञानके कारण कठिन है। यह काम हर-एक विषयके विद्वानोको अलग-अलग करना चाहिए।

विदेशी सज्ञाओके बारेमे एक-दो शव्द कहकर इस विषयको समाप्त कर देना है। हर-एक भाषा प्राय विदेशो सज्ञा शब्द ही उनके मूल रूपमे या अनुवाद रूपमे उधार लेती है। क्रियाएँ आदि तो नाम-मात्रको आती हैं। 'विदेशी शब्दोका हिन्दीकरण', 'दुभाषाई या सकर शब्द' और 'शब्द अनुवादकी समस्या' नामके परिच्छेदोमे विदेशी शव्दोको अपनानेके बारेमे वहुत कुछ लिख दिया गया है। इसलिए इस बारेमें इतना ही कहना काफी होगा कि यह काम बडी बुद्धिमानी और सुरुचिके साथ कलापूर्ण ढगसे हिन्दी-की शोभा बढानेके लिए हिन्दीके हितोका ध्यान रखते हुए होना चाहिए।

●

इक्कीसवाँ परिच्छेद

नयी क्रियाएँ

भाषामे क्रियाके काम, उपयोग, स्थान और महत्त्वको बताना बहुत कठिन है। हर-एक भाव तथा हर-एक कामकी क्रियाको प्रकट करनेके लिए क्रिया-बोधक शब्द चाहिए। सूक्ष्म भावोंके लिए सूक्ष्म अर्थबोधक क्रियाशब्दोकी आवश्यकता पडती है और सयुक्त तथा मिश्रित भावोंको प्रकट करनेके लिए सयुक्त तथा मिश्रित क्रियाशब्दोकी जरूरत होती है।

हिन्दीमें सस्कृत धातु-जैसी कोई चीज नही होती। इसलिए जिस प्रकार सस्कृतमे एक धातुके आरम्भमे भिन्न-भिन्न उपसर्ग लगाकर अनेक क्रिया शब्द बनाये जा सकते है, वह सुभीता हिन्दीको प्राप्त नही है।

हिन्दी क्रियाओंके स्रोत सस्कृत शब्दोके तद्भव रूप, देशी शब्द और विदेशी शब्द हैं। हिन्दीमे दूसरे शब्दोके समान क्रियाओको भी सरल बनाया गया है। भारतकी आधुनिक भाषाओंके प्रसिद्ध विद्वान् जॉन बीमस् लिखते हैं, "भारोपीय भाषा परिवारकी सब भाषाओंकी सब शाखाओंमें सरल बनाना वास्तवमें एक नियम है, और अब जिन बातोंके बारेमे हम विचार कर रहे हैं, क्रिया भी इसी सामान्य नियमका अनुकरण करती है।"[१]

---

१ "Simplification is in fact the rule in all branches of the Indo-Europeon family of languages and in those we are now discussing the verb follows this general law"

A comparative Grammar of the Modern Aryan Languages in India vol III By John Beams पृ० २

हिन्दी क्रियाओकी इसी सरलताकी ओर सस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रश भाषाके प्रसिद्ध विद्वान् डा० हीरालाल जैनने सकेत किया है ।

"अपभ्र श ग्रन्थका अनुवाद करनेमे मुझे एक और बातका अनुभव हुआ, जिसे यहाँ प्रकट कर देना उचित जान पडता है। सस्कृतके अनेक क्रिया पद ऐसे हैं, जो अपभ्र शमे पाये जाते हैं और व्रजभाषा आदि पुरानी हिन्दीमे भी बहुत-कुछ प्रचलित थे, किन्तु जो प्रचलित खडी बोलीसे लुप्त हो गये हैं। उनका अर्थ व्यक्त करनेके लिए अब हमें उनके भूतकालिक कृदन्त व विशेषण या सज्ञाएँ बनाकर 'होना' व 'करना' क्रियाके साथ उनका उपयोग करना पडता है।

उदाहरणार्थ

संस्कृत	अपभ्रंश	पुरानी हिन्दी	प्रचलित रूप
नमति	णमइ	नमता है	नमन करता है[1]
नश्यति	णसइ	नसता है	नष्ट होता है
प्रकाशते	पयासइ	प्रकाशता है	प्रकाशित होता है
मलिनायते	मइलेइ	मैलता है	मैला होता है
भक्षति	भक्खइ	भखता है	भक्षण करता है
वारयति	वारइ	वारता है	वारण करता है
प्रकटयति	पयडइ	प्रकटता है	प्रकट होता है

ऐसे उदाहरण अनन्त हैं। यह मुझे भाषामें उन्नतिकी जगह अवनतिका लक्षण दिखता है। क्रियाओका क्षेत्र घटना नही, बढना चाहिए था। मेरी समझमें ऐसे क्रिया-पदोका प्रयोग हिन्दीमे प्रारम्भना चाहिए।'[2]

आधुनिक हिन्दीमे क्रिया बनानेकी इसी अवनतिशील पद्धतिको प्रोत्साहन दिया जाता रहा है, जिसकी ओर डॉ० हीरालाल जैनने ऊपर

१, अब तो इसके स्थानपर 'नमस्कार करता है' लिखा जाता है—ले०।

२ 'सावय धम्म दोहा', डॉ० हीरालाल जैन-द्वारा सम्पादित, पृ० २६।

संकेत किया है। जो नयी पारिभाषिक शब्दावलियाँ या पारिभाषिक शब्द कोश इस समय निकल रहे है, उनमें या तो अँगरेज़ी क्रियाओका हिन्दी अनुवाद दिया ही नही जाता, मानो क्रिया बनानेकी आवश्यकता ही नही है, और यदि हिन्दी क्रियाएँ दी जाती हैं, तो इसी ढगसे। नीचे भारत सरकार-द्वारा प्रकाशित कई पारिभाषिक शब्दावलियोमे-से केवल दोमें-से कुछ नमूने उदाहरण रूपसे दिये जाते है, नीचे लिखी क्रियाएँ देखिए।[१]—

अँगरेज़ी	हिन्दी
Elect	निर्वाचन (V) (करना दिया भी नही, चुनना नही)
Nominate	नाम निर्देशन (,,)
Punish	दण्ड देना
Transfer	स्थानान्तरण करना, हस्तान्तरण करना

यह सूची १९४९ मे प्रकाशित हुई थी, और इसे भारत विधान सभाके सभापति-द्वारा बुलायी गयी भारतकी मुख्य भाषाओके विशेषज्ञोकी समितिने स्वीकार किया था।

इतने वर्ष बीतनेपर भी क्रियाओकी रचना उसी शैलीपर चल रही है। सन् १९५५में भारत सरकार-द्वारा प्रकाशित गणितकी पारिभाषिक शब्दावलीसे कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते है—

Divide	विभाजित करना (विभाजना नही)
Factorize	गुणन खण्ड करना (खण्डना नही)
Reduce	लघुकरण (करना दिया नही)

प्रसिद्ध भाषा-विशेषज्ञ डॉ० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या 'करना' या 'बनाना' शब्द लगाकर क्रिया बनानेके पक्षमें लिखते है "अन्य भारतीय

---

१. Glossary of Technical Terms used in the Constitution of India

भाषाओ (एव कुछ हद तक फारसी)की तरह हिन्दीमे भी एक खास विशेषता है, जिससे उसकी व्यजक-शक्ति सहज ही बढ जाती है, वह है किसी भी सज्ञा शब्दके साथ 'करना' या 'बनाना' अर्थवाली क्रियाका प्रयोग। उदाहरणके लिए 'विश्वास करना','विचार करना','हुकुम या आज्ञा करना' इत्यादि। यह रीति बडी सहज एव सरलतासे समझमे आ जानेवाली है और इसके कई लाभ हैं। इसके कारण क्रिया-रूप बनानेके लिए प्रत्ययोका आश्रय, जो कि प्राचीन एव असुविधाजनक हो गया है, नही लेना पडता, दूसरे, इस प्रयोगके कारण सज्ञाको ही क्रियाके रूपमें उपयोग करनेसे आती अस्पष्टता दूर हो जाती है इस प्रयोगमें थोडा-सा विस्तार अवश्य आ जाता है, परन्तु बदलेमें अर्थ अत्यन्त स्पष्ट हो जाता है, फलत सीखने, याद रखने तथा शब्दोका विभिन्न अर्थोंमे प्रयोग करनेमें बहुत कम प्रयासकी आवश्यकता रह जाती है।"[1]

यह बात मानते हुए भी कि 'करना' 'बनाना' आदि शब्द सज्ञाओके साथ जोडकर क्रिया बनाना आसान है और इस विधिसे न केवल सस्कृत शब्दोके साथ बल्कि अरबी, फारसी और अँगरेज़ी आदि शब्दोके साथ 'करना', 'बनाना' आदि लगाकर बनी बहुत-सी क्रियाएँ हिन्दीमें चालू है। पर हम यह नही समझ सके कि 'ना' 'आना' आदि लगानेमें क्या कठिनाई है, जैसे झगडना, खोजना आदि क्रियाएँ झगडा करना और खोज करना आदि क्रियाओसे अधिक सरल हैं। दूसरे हम कितना भी प्रयत्न करें, हिन्दीमें प्रत्ययोसे बनी तथा भविष्यमे बननेवाली क्रियाओसे छुटकारा पाना न तो सम्भव है और न वाछनीय है। इसके अतिरिक्त जब उपसर्गों तथा प्रत्ययोकी सहायतासे सहस्रो सज्ञाएँ तथा विशेषण आदि बनते है, फिर प्रत्ययोकी सहायतासे नयी क्रियाएँ बनानेमे ही यह आपत्ति क्यो?

१ भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी, पृ० १५१।

सूचना . रिक्त स्थानोंमें-से अँगरेजी शब्द हिन्दी अनुवाद-सहित अनावश्यक समझकर निकाल दिये गये हैं।—ले०

तीसरे, संज्ञा और क्रिया रूपकी स्पष्टता तो 'खोज' और 'खोज करना' के समान खोज (स०) और 'खोजना' (क्रि०) में भी है।

संज्ञाओ आदिके अन्तमे 'करना' लगाकर नयी क्रियाएँ वनानेके प्रसगमे यह वात भी उल्लेखनीय है, कि 'करना' जोडकर क्रिया वनानेके साथ-साथ 'करना'का ही दूसरा रूप 'कना' ('र'के लोपके वाद वना प्रत्यय) लगाकर भी वनी अनेक क्रियाएँ हिन्दीमे मिलती हैं, जिनके उदाहरण प्रत्ययोके परिच्छेदमें 'वना' प्रत्ययके अन्तर्गत दिये गये है, जैसे चटकना (चटचट करना), चसकना (चसचस करना), लचकना आदि।

यह वात स्पष्टरूपसे समझ लेनी चाहिए, कि 'करना'से हमारा विरोध नही है, पर हम उसके कममे कम प्रयोगके पक्षमें है, क्योकि उसमें स्थान, तथा समय कम लगेगा और तार आदि देनेमे कम खर्च होगा। प्रयत्न लाघवको हर भापामे स्वीकारना चाहिए ही। सस्कृतमें कहावत थी 'अर्धमात्रा लाघवेन पुत्रोत्सव मन्यन्ते वैयाकरणा ' केवल सरलताकी खातिर भापाकी शक्तिकी अवहेलना उचित नही जान पडती।

अव क्रियाके भेदो, उनके वनानेको विधियो तथा क्रियाई पारि-भापिक शब्दोके वारेमें सक्षेपमें लिखा जाता है। शब्दोकी रचनाके अनुसार क्रियाओंको तीन भेदोमें वाँटा जा सकता है—१ साधारण क्रियाएँ, २ सयुक्त क्रियाएँ, ३ मिलवाँ क्रियाएँ या मिश्रित क्रियाएँ।

१ साधारण क्रियाओको शुद्ध क्रियाएँ भी कह सकते है। इनमें 'ना', 'आना' 'वाना' 'इयाना' 'कना' प्रत्ययोसे वनो सभी क्रियाएँ शामिल है, चाहे वे किसो भी भापाके शब्दोसे वनी हो।

साधारण क्रियाओके दो उपभेद किये जा सकते हैं—(अ) तद्भव क्रियाएँ और दूसरी सज्ञाओ तथा विशेषणोसे वनी क्रियाएँ। (आ) ध्वनि-बोधक क्रियाएँ। ये क्रियाएँ ध्वनियाँ (आवाज़ो) से बनती हैं।

इस प्रकारको तद्भव तथा नाम धातु क्रियाओको इन तीन छोटे उप-भेदोमे वाँटा जा सकता है—(अ) हिन्दी क्रियाएँ, जो तद्भव कहलाती है,

(आ) सस्कृत शब्दोसे वनी क्रियाएँ, (इ) विदेशी शब्दोसे वनी क्रियाएँ।

(अ) तद्भव क्रियाएँ तो हिन्दीमें वहुत है। पर जिस तरह अँगरेज़ीमें सज्ञावाचक शब्दोको ज्योका त्यो या कोई उपसर्ग या प्रत्यय लगाकर क्रिया वनानेका सरल ढग है, हिन्दीमे सज्ञाओको क्रिया रूपमें ज्योका त्यो प्रयोग करनेका ढग तो नही है, पर सज्ञाओ तथा विशेषणोके अन्तमें नाम धातु प्रत्यय लगाकर क्रिया वनानेकी विधि पुरानी है। प्रत्ययोके प्रसगमें इस प्रकार वनी कुछ क्रियाएँ दी गयी है। अब कुछ क्रियाएँ उदाहरण रूपसे यहाँ नीचे दी जाती है: जैसे, (आपसे) अपनाना, (अलापसे) अलापना, (अकसे) आँकना, (कससे) कसियाना, (कीलसे) कीलना, (खातासे) खतियाना, (चिकनासे) चिकनाना, (झूठसे) झुठलाना, (ठोकरसे) ठुकराना, डकारना, (तावासे) तवियाना, (थोडास) थुडना, कम हो जाना, (दुलतीसे) दुलतियाना, (पीतलसे) पितलयाना, (वातसे) बतियाना, (वातें बताना), (मैं-मैंसे) मिमियाना, (मिट्टीसे) मटियाना, (माँडीसे) मडियाना, (कलफसे) कलफना, (मुक्कीसे) मुकियाना, (रेतसे) रेतना, (लाठीसे) लठियाना, (सराप-श्राप) सरापना, (हाथसे) हथियाना, (हिन्द तथा हिन्दीसे) हिन्दियाना आदि। इनमे कुछ नयी क्रियाएँ भी बना दी गयी हैं। इस प्रकार क्रियाएँ वनाकर प्रयोगमे लानेका प्रयत्न करना चाहिए।

(आ) सस्कृत तत्सम शब्दोके साथ 'ना' आदि प्रत्यय लगाकर क्रियाएँ बनानेका ढग भी पुराना है। इसी परिच्छेदमें कुछ उदाहरण पीछे दिये जा चुके है। पुराने हिन्दी साहित्यसे सस्कृतसे बनी ऐसी क्रियाओको सग्रह करके चालू करना चाहिए। इसी ढगपर नयी क्रियाएँ और वनायी जा सकती हैं, जैसे अनुमानना (न), अनुवादना (न), निमन्त्रना (न), निर्वाचिना (न), प्रमाणना (न), विद्रोहना (न), विद्युताना (न), विस्तारना (न), सम्पादना (न), सशोधना (न) आदि।

(इ) विदेशी, फारसी, अरबी तथा अँगरेजी शब्दोंसे बनी क्रियाएँ भी हिन्दीमें चलती हैं। फारसी शब्दोंसे, जैसे, आज़माना, ख़रचना, ख़री-

३ वे क्रियाएँ जिनके अन्तमे 'कना' लगता है, जो 'करना' का सक्षिप्त रूप है। इसके काफ़ी उदाहरण 'वना' प्रत्ययके अन्तर्गत दे दिये गये हैं। यहाँ कुछ और उदाहरण दिये जाते है, जैसे कसकना, कूकना, खिसकना, गहकना, चटकना, चमकना, चिपकना, छौंकना, टपकना, वुरकना, मसकना, महकना आदि।

४ वे क्रियाएँ जिनके अन्तमे प्रत्यय 'कना'के स्थानपर 'सना' है, जो 'कना' से ही वदलकर वना है, जैसे, खाँसना, खोसना, ठूँसना, चाँसना आदि।

५ वे क्रियाएँ जिनमे 'कारना' लगता है। ऐसी क्रियाओके उदाहरण 'कारना' प्रत्ययके अन्तर्गत दे दिये गये है। कभी-कभी कारनाका 'क' 'ग'से वदलकर 'गारना' वन जाता है, जैसे झिगारना (झीगरका झी-झी करना) आदि।

हिन्दीमें सख्याओसे भी क्रियाएँ वनायी गयी हैं, जैमे चौहरा करना, तिहराना, दुहराना, दुगनाना, सठियाना आदि। इसी प्रकार वहुत-मे विदेशी खेल भी हिन्दीमें नयी क्रियाएँ लाये है, जैसे आउट करना, गोल करना, टॉस करना, मात देना (खाना भी), रन वनाना, हिट लगाना आदि।

संयुक्त क्रियाओका वर्णन करनेसे पहले 'करना' लगाकर क्रिया बनानेकी विधिके वारेमे कुछ अधिक वता देना आवश्यक मालूम होता है। इस विधिसे क्रिया वनानेके पक्ष-विपक्षमें ऊपर चर्चा हो चुकी है। इस ढगसे वनी क्रियाओको शुद्ध क्रिया नही कहा जा सकता। परन्तु हिन्दी, सस्कृत, अरवी, फ़ारसी आदि भाषाओके तत्सम सज्ञा शब्दोंके साथ 'करना' लगाकर क्रिया वनानेकी विधि इतनी आम हो गयी है कि इसकी उपेक्षा नही की जा सकती। ऐसी क्रियाओको नामधातु क्रिया कह सकते है पर सस्कृतके अनुकरणपर नही। इन नामधातु क्रियाओंके कुछ उदाहरण ये है—

१ हिन्दी शब्दोसे, जैसे—आड करना, नटखट करना, खोज करना,

घमण्ड करना, चालान करना, छल करना, झगडा करना।

२. सस्कृत शब्दोसे, जैसे—आदर करना, आविष्कार करना, क्रिया-काण्ड करना, चर्चा करना, तिरस्कार करना, दान करना, धर्म करना, नित्यकर्म करना, प्रतिनिधित्व करना आदि।

३ अरवी फारसी शब्दोसे, जैसे—असर करना, इनकार करना, क़वूल करना, खर्च करना, गदर करना, गवन करना, गुज़र करना, गुज़ारा करना, दगा करना, दफ़न करना, (दफनाना भी) नक़ल करना, फिकर करना, हज करना आदि।

अँगरेज़ी आदि शब्दोसे, जैसे—ऑपरेशन करना, कम्पोज़ करना, टाइप करना, टेलीफोन करना, नीलाम करना (पुर्तगाली) पलस्तर करना, पॉलिश करना, फिट करना, रपट करना, वारनिश करना, सिलूट करना या मारना (फौजी बोलीमें) आदि।

सयुक्त क्रियाएँ (Compound verbs) जिनमें क्रिया बनानेके प्रत्ययो—आना, कना, कारना, ना, लाना और वाना आदिका वर्णन प्रत्ययोके परिच्छेदमें आ चुका है। क्रियाओके अन्तमें देना, डालना, आना, पडना, जाना, सकना, चुकना, चाहना, रहना, लगना आदि क्रियाएँ जोडकर क्रियाओके अर्थोंमें कुछ परिवर्तन किया जाता है या क्रियाकी विशेष स्थितिका ज्ञान कराया जाता है। इस ढगसे बनी क्रियाओको संयुक्त क्रिया कहते है। सयुक्त क्रिया दो क्रियाओके मिलनेसे बनती है। इनमें पहली क्रियाको मुख्य क्रिया कहते हैं और पीछे आनेवाली क्रियाको सहायक क्रिया कहते हैं, जैसे दौड जानामे दौडना मुख्य क्रिया है और जाना सहायक क्रिया है। हिन्दीमें सहायक क्रियाओका बहुलतासे प्रयोग मिलता है। जैसा कि पहले बताया गया है, यह हिन्दीको प्रकृतिका विशेष गुण है। सयुक्त क्रियाओका विषय शब्द-रचनाकी अपेक्षा व्याकरणसे अधिक सम्बन्ध रखता है। पर हिन्दी शब्दोके अध्ययनमें सयुक्त क्रियाओ-को समझनेमें भ्रम न हो, इसलिए यहाँ इनका सक्षेपमें वर्णन किया जाता

है। सयुक्त क्रियाओंके बारह भेद[1] उदाहरण सहित ये हैं—

१. अवधारण (निश्चय, समाप्ति तथा तीव्रता) बोधक (intensive) क्रियाओंमें धातुओंके आगे देना, डालना, आना, पडना, जाना, लेना, बैठना, दिखाना, रहना, रखना और उठना क्रियाएँ लगानेसे बनती हैं जैसे, फेंक देना, तोड डालना, बन आना, गिर पडना, खा जाना, पी लेना, चढ बैठना, कर दिखाना, बैठ रहना, सौंप रखना, और बोल उठना आदि।

२. शक्ति बोधक (Potential) क्रियाओंमे धातुओंके आगे सकना क्रिया लगती है, जैसे—बोल सकना, अनुशासन रख सकना आदि।

३. पूर्णता बोधक (Completives) क्रियाओंमे धातुओंके आगे चुकना लगाते है, जैसे—प्रबन्ध कर चुकना, छाप चुकना आदि।

४ बारम्बार या नित्यता बोधक (Frequentatives) क्रियाओंके आगे करना लगाते हैं, जैसे—आया करना, कहा करना, वह कहा करता है आदि।

५ इच्छा बोधक (Desiderating) क्रियाओंमे वर्तमान क्रियाके सामान्य रूपमें या सामान्य भूतमें 'चाहना' क्रिया लगायी जाती है, जैसे—मैं जाना चाहता हूँ, मै जाया चाहता हूँ। क्रियाके सामान्य भूत रूपके साथ चाहना जोडनेसे तात्कालिकता भी प्रकट होती है, जैसे—ट्रेन आया चाहती है।

६. आरम्भ बोधक (Inceptives) क्रियाओंमे क्रियाके बाद 'लगना' क्रिया लगाते हैं। इससे कामका आरम्भ प्रकट होता है, जैसे—कहने लगा, काममें विघ्न पडना भी इससे मालूम होता है। पर कैलाग साहबने इसका उदाहरण नहीं दिया।

७ अनुमति बोधक (Permissives) क्रियाओंमें क्रियाके विकारी

---

१ कैलाग लिखित ग्रामर ऑव हिन्दी लग्वेजसे साभार।

रूपके अन्तमे देना लगाते हैं, जैसे—मुझे बोलने दीजिए, उसने उसको खाने दिया।

८. नकारात्मक (Acquisitives) क्रियाएँ अनुमति बोधक क्रियाओं-से उलटा अर्थ देती हैं। ये क्रियाओके विकारी रूपके अन्तमें देनाके स्थान-पर 'पाना' क्रिया लगाते हैं जैसे—तुम वहाँ गडवड करने नही पाओगे, मै वैठने नही पाया आदि।

९. नित्यताबोधक (Continuatives) क्रियाओमे क्रियाओके अन्तमे रहना लगाते है, जैसे—तुम क्यो हँसते रहते हो? वह जाता रहता है।

१०. प्रगतिबोधक (Progressives) क्रियाएँ इनमें क्रियाओके अन्तमे जाना लगता है। नित्यता बोधक क्रियासे यह भिन्न है, जैसे—वह जोतता जाता है। पानी बहता जाता है। भाग जाना, चला जाना, चला आना, कहे जा भी इसी श्रेणीमे आते है। जानाके स्थानपर फिरना लगानेसे भी प्रगतिका बोध होता है, जैसे—कहते फिरना, मारे-मारे फिरना आदि।

११. गतिबोधक (Staticals) क्रियाओमे आना लगता है, जैसे—वह रोता हुआ जाता है। एक अभिनेता गाता हुआ आता था।

१२ पुनुरुक्ति बोधक (Reiteratives) क्रियाओमें समान अर्थ-वाली या समान दो क्रियाएँ जोडी जाती हैं, जैसे—वह बिना समझाये-बुझाये चला गया, सब छोड-छाडकर महात्मा बुद्ध जगलको चले गये आदि।

१३ विवशताबोधक (Compulsives) क्रियाओमें मुख्य क्रियाओके सामान्य रूपके आगे 'पडना' जोड देते है, जैसे—मुझको त्याग-पत्र देना पडा। कही-कही वर्तमान कालका 'है' प्रत्यय भी लगता है, जैसे—मुझे लिखना है।

मिलवाँ क्रियाएँ या मिश्रित क्रियाएँ : मिलवाँ क्रियाएँ वे होती है, जिनमें दो भावोको मिलाकर क्रियाएँ वनायी जाये, जैसे—विजलाँसी देना या विजलाँसना (electrocute) विजलाँसी देनाका अर्थ विजलीके द्वारा फाँसी देना होगा। और भसकना। भसकनाका अर्थ भैसकी तरह खाना है, न कि भसभस करना है।

हिन्दीकी व्याकरणोमें मिलवाँ क्रियाओके विषयमे कोई चर्चा नही मिलती। इसका कारण शायद इस विषयकी ओर लेखकोका व्यान न जाना हो। इस सम्बन्धमे यह वात भी विचारणीय है, कि जिन क्रियाओमे पहले उपसर्ग लगे हो, उन्हें मिलवाँ क्रिया माना जाये या नही ? जैसे— अन्तरराष्ट्रीय-करण करना या अन्तरराष्ट्रियाना (internationalize) और विकेन्द्रियाना या विकेन्द्रीकरण करना (decentralize) आदि।

उपसर्गोंकी सहायतासे वनी क्रियाओको मिलवाँ क्रिया माननेके पक्षमे सवसे वडी युक्ति यह है, कि जव एक सज्ञा और एक-एक क्रिया या दो सज्ञाओके मेलसे वनी क्रियाको मिलवाँ क्रिया माना जा सकता है, तव उपसर्गों यानी अव्ययो या विशेषणोके योगसे वनी क्रियाओको मिलवाँ क्रिया माननेमे कोई आपत्ति न होनी चाहिए। और इसके विपक्षमे यह कहा जा सकता है, कि ऐसी क्रियाओको मिलवाँ क्रिया माननेमे न इनकी सख्या ही वहुत वढ जायेगी, वल्कि क्रियाओके वर्गीकरणमे भी कठिनाई पैदा हो जायेगी। कुछ भी हो, यह वात व्याकरणकी वारीकीकी है, जिस-पर वैयाकरणोको पर्याप्त विचार करना चाहिए।

विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान (Social Sciences) आदिमे पारिभाषिक शब्दोमें मिलवाँ क्रियाएँ वनानेकी जरूरत पडती है। इनके वनानेमे समास या मिलवाँ शब्द वनानेकी विधि (blending) का आश्रय लेना चाहिए। उदाहरणके तौरपर नीचे कुछ शब्द दिये जाते है : ऐफ्रो-एशियाना या ऐफ्रो-एशियाईकरन करना (Afro-Asianise) विजलेपना या विद्युल्लेपना या विद्युन्लेपन करना (electroplate),

विद्युत्-टाइप करना (eloctrotype) और भारोपियाना (Indoeu-ropeonise) आदि।

मिलवाँ क्रियाओके प्रकरणसे एक बात और प्रकट हो जाती है, कि सस्कृतनिष्ठ हिन्दीकी विधिसे बनी क्रियाओकी अपेक्षा हिन्दी क्रियाओके ढगसे अर्थात् 'ना' 'कना' या 'इयाना' प्रत्ययोकी सहायतासे बनी क्रियाएँ छोटी है।

•

बाईसवाँ परिच्छेद

भिन्नार्थक शब्द

हर-एक भाषामें कुछ शब्दोके ऐसे जोडे या तिगडी मिलेंगी, जिनका उच्चारण लगभग समान ही होता है, चाहे उनकी वर्तनी (वर्ण-विन्यास) समान हो या न हो—जैसे, हिन्दीमें सस्कृत तत्सम स्त्री शब्द और पुर्तगाली शब्द इस्तरी, कपडोपर फेरनेका लोहा। ऐसे शब्दोका अर्थ तथा विकास या व्युत्पत्ति अलग-अलग होती है और इनका अर्थ प्रसगके विना नही जाना जा सकता। ऐसे शब्दोको अँगरेजीमे होमोनिम्ज (Homonyms) कहते हैं और उसमे ऐसे शब्दोके जोडो आदिकी सख्या सात सौके लगभग हैं।[१] हिन्दीमें हम उन्हे भिन्नार्थक शब्द, समध्वन्यात्मक शब्द या समवाक[२] कह सकते हैं। अनेकार्थक या नानार्थक (Polyonym) शब्द इससे विपरीत अर्थको प्रकट करता है। अँगरेजीमे जहाँ ऐसे शब्दोका उच्चारण मिलता-जुलता है, वहाँ उनकी वर्तनीमे कुछ अन्तर होता है। वर्तनीके अन्तरके कारण लिखित भाषामे तो उनका अन्तर साफ़ समझमें आ जाता है, परन्तु वोलचालमे वह अन्तर भी नही रहता, जिससे सुननेवाला प्रसंगसे विना कठिनाई उनका अर्थ समझ लेता है। उर्दूमे भी ऐसे शब्द वहुत मिलते है और उनके हिज्जे (वर्तनी) में कुछ अन्तर होता है। इसलिए उर्दूमे 'अ', त, ज, स और ह की ध्वनिके दो-दो या तीन-तीन वर्ण है। उर्दूको इस वर्तनी-भेदसे लाभ भी है और हानि भी।

१. Romance of Words, पृ० १२३।
२. श्री रामचन्द्र वर्माका सुझाव।

शाखाकी तरफ अभीसे ध्यान दिये जानेकी आवश्यकता है।

शब्द-रचनाके कामसे भिन्नार्थक शब्दोका प्रत्यक्ष सम्बन्ध तो कम है, परन्तु वर्तमान तथा भावी भिन्नार्थक शब्दोको समझाने और उनसे नये शब्द बनानेमे इस विषयसे सहायता मिलेगी। यही समझकर इस विषयको यहाँ स्थान दिया गया है।

भाषाओमे ऐसे शब्दोके मिलनेके नीचे लिखे तीन कारण मिलते है : १ विदेशी शब्दो या आसपासकी भाषाओसे वैसे ही उच्चारणवाले शब्दोसे मिलकर किसी भाषामें भिन्नार्थक शब्दोके कुछ जोडे बन जाते है, जैसा उदाहरण स्त्री तथा इस्तरीका ऊपर दिया गया है। २ एक ही भाषाके शब्दोके जोडे भी ऐसे मिलते हैं, जैसे पाला, सीमाके अर्थमें, और पाला, तुषार या जमी हुई भाप आदि। ३ कभी-कभी ऐसा भी होता है, कि एक ही भाषाकी सज्ञाओ आदिका रूप उसकी क्रियाओ आदिके विकारी रूपोसे उच्चारणमे मिलता है और इस प्रकार भिन्नार्थक शब्द बन जाते है, जैसे दीया या दिया, दीया दीपक अर्थमे, और दिया, देना क्रियाका भूतकालिक रूप आदि। अँगरेजीमे रोज़ (Rose = गुलाबका फूल) तथा रोज़ (Rose = उठा) आदि भी ऐसे उदाहरण है।

ऐसे शब्दोका सामान्य प्रयोग तो भाषामें होता ही है, पर कभी-कभी ऐसे शब्दोका श्लेषात्मक या दुअर्थक प्रयोग कविता आदि या बातचीतमें हास्यरस पैदा करता है। शेक्सपीयरने अपने नाटको और काव्योमे

An entirely new branch of linguistics styled 'homonymics' has begun to take shape, using the most exact and, scientific method available to the philologist, the objective evidence of linguistic atlases, where the geographical distribution of sounds, words and grammatical elements is recorded." Words and Their Use, पृ० ५४।

परम्पराके पक्षपाती इन वर्णोंके भेदको बनाये रखनेके पक्षमे हैं, जब कि डॉ० जाफर हुसेन-जैसे उर्दू-लिपि-सुधारक इस भेदको उडानेका प्रचार कर रहे हैं। परन्तु हिन्दीमे वर्तनीका अन्तर नहीके बराबर होता है, इसलिए प्रसग तथा प्रकरणसे उन शब्दोका अर्थभेद समझा जाता है। ऐसे शब्द भाषाका भूषण ही हैं, दूषण नही, और यदि इसे दोष भी माना जाये, तो यह एक अनिवार्य दोष है।

भिन्नार्थक शब्दोका महत्त्व इससे भी स्पष्ट हो जायेगा, कि अब भिन्नार्थक शब्दोका वैज्ञानिक ढगसे अध्ययन करनेके लिए भाषा विज्ञानकी एक नयी शाखा भिन्नार्थक शब्द विज्ञान (Homonymics) विकसित होने लगी है। इस प्रसगमे डॉ० स्टीफन उलमैनका यह उद्धरण ध्यान देने योग्य है—

"नानार्थकताके मुकाबलेमे भिन्नार्थकता भाषाके जीवनमें एक उपघटना है। इसका विस्तार सीमित है, यद्यपि जितना समझा जाता है, उससे अधिक है। यह एक विचित्र विकास है। पर कठिनतासे अर्थविकासकी कोई ऐसी समस्या होगी, जिसने पिछले वर्षोंमें इससे अधिक विस्तृत ध्यान खीचा हो। भाषा विज्ञानकी एक सर्वथा नयी शाखा भिन्नार्थक शब्द विज्ञान (Homonymics) ने रूप धारण करना आरम्भ कर दिया है, जिसमे भाषा विज्ञानियोको प्राप्त होनेवाली अत्यन्त ठीक तथा वैज्ञानिक पद्धति और भाषाई एटलसोकी बाहरी साक्षी प्रयोगमें लायी जाती है। इन एटलसोमें ध्वनियो, शब्दो और व्याकरण सम्बन्धी तत्त्वोका भौगोलिक बँटवारा लिखा होता है।"[१] हिन्दीमे भाषा विज्ञानकी इस नयी उदीयमान

---

१ "Compared to polysemy, homonyms is but an episode in the life of language Its incidence is limited though greater than realised It is a freak development—yet there is hardly any problem of meaning that has attracted wider attention in recent years.

शाखाकी तरफ अभीसे ध्यान दिये जानेकी आवश्यकता है।

शब्द-रचनाके कामसे भिन्नार्थक शब्दोका प्रत्यक्ष सम्बन्ध तो कम है, परन्तु वर्तमान तथा भावी भिन्नार्थक शब्दोको समझाने और उनसे नये शब्द बनानेमे इस विषयसे सहायता मिलेगी। यही समझकर इस विषयको यहाँ स्थान दिया गया है।

भाषाओमें ऐसे शब्दोके मिलनेके नीचे लिखे तीन कारण मिलते है १ विदेशी शब्दो या आसपासकी भाषाओसे वैसे ही उच्चारणवाले शब्दोसे मिलकर किसी भाषामें भिन्नार्थक शब्दोके कुछ जोडे बन जाते है, जैसा उदाहरण स्त्री तथा इस्तरीका ऊपर दिया गया है। २ एक ही भाषाके शब्दोके जोडे भी ऐसे मिलते हैं, जैसे पाला, सीमाके अर्थमें, और पाला, तुषार या जमी हुई भाप आदि। ३ कभी-कभी ऐसा भी होता है, कि एक ही भाषाकी सज्ञाओ आदिका रूप उसकी क्रियाओ आदिके विकारी रूपोंसे उच्चारणमे मिलता है और इस प्रकार भिन्नार्थक शब्द बन जाते है, जैसे दीया या दिया, दीया दीपक अर्थमे, और दिया, देना क्रियाका भूतकालिक रूप आदि। अँगरेज़ीमे रोज़ (Rose = गुलाबका फूल) तथा रोज़ (Rose = उठा) आदि भी ऐसे उदाहरण है।

ऐसे शब्दोका सामान्य प्रयोग तो भाषामे होता ही है, पर कभी-कभी ऐसे शब्दोका श्लेषात्मक या दुअर्थक प्रयोग कविता आदि या बातचीतमें हास्यरस पैदा करता है। शेक्सपीयरने अपने नाटको और काव्योमे

An entirely new branch of linguistics styled 'homonymics' has begun to take shape, using the most exact and, scientific method available to the philologist, the objective evidence of linguistic atlases, where the geographical distribution of sounds, words and grammatical elements is recorded," Words and Their Use, पृ० ५४।

भिन्नार्थक शब्दोका प्रयोग करके वडा हास्यरस पैदा किया है और करारी चोट की है। इस दृष्टिसे ऐसे शब्दोकी जानकारी वडी उपयोगी है।

एक अँगरेज़ लेखक टी० वरोका मत है, कि भिन्नार्थक शब्दोके अस्तित्वका फल प्रायः ऐसे जोडोमे-से एक शब्दको दवा देना होता है।[1] उन्होने उदाहरणके तौरपर पूर्व वैदिक सस्कृत (Early Vedic Sanskrit) और उत्तर वैदिक संस्कृत (Later Vedic Sanskrit) में-से कुछ सस्कृत भिन्नार्थक शब्दोके उदाहरण दिये है और वताया है, कि उन जोडो-में-से एक-एक शब्द प्रयोग वाहर हो गया।

वे उदाहरण ये हैं—

पूर्व वैदिक सस्कृत	उत्तर वैदिक संस्कृत
असुर-स्वामि	असुर-दानव, राक्षस
अरि-भक्त, विश्वासनीय,	अरि-शत्रु

इस अरिसे ही आर्य शब्द बना है।

कारु-गवैया	कारु-दस्तकार, शिल्पी

उपरोक्त शब्दोमें-से पूर्व वैदिक सस्कृत शब्द प्रयोग बाहर हो गये हैं।

हिन्दी और हिन्दोमें प्रचलित सस्कृत, फारसी, अरबी शब्द और अँगरेज़ीके शब्दोसे बने भिन्नार्थक शब्दोके कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं।

स्त्री (इस्तरी) के श्लेषात्मक प्रयोगका चुटकला तो इतना प्रसिद्ध है कि उसको यहाँ देना व्यर्थ है। 'बस' अधिकार या काबूके अर्थमें प्रयोग किया जाता है और हम कहते हैं—'यह बात मेरे 'बस' की नही है।' फारसीका 'बस' बहुत, काफी तथा पूरा आदिके अर्थमें खूब आता है, जैसे

---

१. "The existence of homonyms frequently results in the suppression of one of such pairs" The Sanskrit Language by T Burrow, पृ० ४०।

बस करो। अँगरेज़ीका बस (bus, omnibus) यातायातके मशीनी (न) साधनोंकी वृद्धिके साथ भी प्रयोगमें आता है। आजकल सभी स्त्री-पुरुष बसोंमें यात्रा करते हैं। इस प्रकार हिन्दीमें बस शब्द तीन अर्थोंमें प्रचलित है।

अपने यहाँ एक देशी शब्द 'मिस' बहाने या हीले आदिके अर्थमें आता है। पर अब अँगरेज़ी शब्द 'मिस' (miss) कुँवारी लड़की भी चलता है, जैसे, मिस स्मिथ, मिस मधुबाला और अत्यन्त फैशनेबल सुन्दरीके लिए भी आता है, जैसे 'मिस फ्रान्स', 'मिस १९५६' आदि।

रेल-पेलका देशी 'रेल' शब्द रेलगाडीके अँगरेज़ी 'रेल'से पृथक् है।

हिन्दी 'कफ', बलगमके अर्थमें और अँगरेज़ी 'कफ' कमीज़की आस्तीनके अन्तिम भागके अर्थमें आता है।

देशी शब्द नाल तो हमारे यहाँ पहले था ही, फिर अरबी नाल (नआल-मूल अर्थ जूती) भी घोड़ो, बैलोंके पाँवोंमें लगने लगे। कुछ आदमी अपने बूटों तथा जूतियोंमें भी नाल लगवाने लगे। इतना ही नहीं इस शब्दको लेकर यह कहावत भी बन गयी 'घोड़ोंको लग रहे थे नाल, मेंढकोंने भी टांग उठायी।' जगह-जगह नाल लगानेवाले नालबन्द[1] काम करने लगे और उनके अपने पेशेके बहुत-से पारिभाषिक शब्द बन गये हैं जिनकी सूची तैयार की जा सकती है।

'आम' भारतके फलोंका राजा है, किन्तु अरबी शब्द 'आम' जन साधारण या मामूलीके अर्थमें हिन्दीमें आता है। और दिल्लीके लाल किलेमें दीवान-ए-खासके साथ दीवान-ए-आम भी उसकी शोभा बढ़ा रहा है।

'मीना' (स० मीन) मछलीके अर्थमें रामायणमें 'जल संकोच बिकल भये मीना' आता है और गूजरोंके साथ-साथ राजपूतानेकी एक ओर आदि

---

१. अरबी नाल+फ़ारसी बन्दसे बना संकर शब्द। —ले०

'मीना' नाममे प्रसिद्ध है। फारसीके सम्पर्कसे फारसी शब्द 'मीना', शराब रखनेकी सुराही, तथा एक बहुमूल्य रत्न और चांदी-सोनेपर रग-बिरगे कामके लिए प्रयुक्त होता है। इसी मीनाकी सहायतासे सहस्रो मीनाकार चांदीके आभूषणो तथा छोटे-बड़े बरतनो, खिलौनो आदिपर मीनाकारी करके उनकी शोभाको चार-चांद लगा रहे है। मीनाकारी व्यवसाय सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द भी हैं ही।

न सुन सकनेवाले आदमीके लिए हिन्दी 'बहरा' शब्द प्रसिद्ध है। गूँगा-बहरा भी हम कहते हैं। पर अँगरेजी शासनकालमें होटलो तथा अँगरेज़ी कोठियोंमें खाना पकाने तथा खाना परोसनेवाले नौकर बेयरर (bearer) को बैरा कहा जाने लगा। इसके उच्चारणमें जन-भाषा (folk etymology) अपना काम कर रही है। सस्कृत शब्द 'अस्त्र' हथियारके लिए आता है, युग्मरूप अस्त्र-शस्त्र प्राय बोलते हैं। अस्त्रके साथ फारसी शब्द असतर चालू हो गया, और हमारे कोटो तथा लिहाफो आदिके नीचे असतर लगने लगा।

हिन्दी काज कार्य, कामके अर्थमे तथा किसी बडे-बूढेकी मृत्युके बाद दिये जानेवाले मृत्यु भोजके अर्थमें चलता है। 'आप काज सो महाकाज' कहावत मशहूर है। हरियाना प्रदेशमे तो समस्त गाँव, आसपासके दो-चार गाँव तकका काज (मृत्यु भोज) होता था। उसके साथ कपडोमे बटन लगानेके छेद (सूराख) को बतानेवाला पुर्तगाली शब्द[१] काज चल पडा है।

हिन्दी रास ठीक, अनुकूल तथा राशिके अर्थमें चलता है और हम कहते है, 'मुझे यह काम रास नही आया।' 'उसकी रास सिह है।' इसके साथ घोडेकी बागके लिए भी फारसी शब्द रास ही बोला जाता है।

---

१ देखें—श्री रामचन्द्र वर्मा-द्वारा सम्पादित प्रामाणिक हिन्दी कोश, दूसरा सस्करण, पृ० २४१।

अरवी शब्द रास (-अन्तरीप) भौगोलिक पारिभापिक शब्द है, जो हिन्दीमें अत्यन्त कम प्रचलित होनेपर भी रास उम्मीद (आशा अन्तरीप) नाममें आ ही जाता है। घोडेकी वाग (रास) के साथ उद्यान वोधक फारसी शब्द वाग हिन्दीमे आता ही है।

चाक शब्द चक्रके अर्थमें आता है और कुम्हार चाकपर मिट्टीके वरतन वनाते हैं, तथा उत्तर भारतमें हिन्दू विवाहोमें चाक पूजा जाता है। उसके साथ-साथ श्याम-पटपर चौक, या चॉकसे लिखा जाता है, और विलायती ढंगके मजनो तथा टूथ पेस्टोमे फ्रेंच चॉक पडता है। यह चॉक अँगरेजी शब्द है।

फारसी शब्द सीना क्रिया है, और सीना (फा०) (छाती) उसके साथ चलता है।

सस्कृत 'ग्राम' शब्द गांवके अर्थमें हिन्दीमें चलता है। अब दशमलव वाटके तौलमे 'ग्राम' अँगरेजी शब्द चल पडा और किलोग्राम आदि भी आ गये। इसी प्रकार गोल हिन्दी शब्द है और गोल (goal) हाकी फुटवालका विदेशी शब्द है।

सस्कृत शब्द 'पालक' पालनेवाले या परमात्माके लिए आता है। पर 'पालक' सागसे भी हम सव परिचित है। इस सागका पालक नाम क्यो पडा, यह वताना कठिन है। ऐसे और भी कितने ही जोडे मिल जायेंगे।

मोगरा कपडे तथा मिट्टी कूटनेका मोटा डण्डा होता है, और मोगरा फूल भी प्रसिद्ध है। दिल्लीमे वेसनमे एक वढिया नमकीन पदार्थ वनता है, जो मोगरा कहलाता है। इनमे आपसमे कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता।

गिनतीमें लाख शब्द आता ही है, पर वृक्षोंसे प्राप्त होनेवाले गोंदके समान एक पदार्थको भी लाख कहते है, जिससे वार्निश, चूड़ियां ग्रामो-फोनके रिकार्ड तथा मुहर लगानेकी लाख वनती है।

'स्वामिभक्त वीर दाई पन्नाने अपने बच्चेकी बलि देकर उदयसिंह-को पाला,' तथा 'आपका किस माया चारीसे पाला (वास्ता) पडा है ?' दोनों वाक्योंमें 'पाला' शब्दोका निकास भी अलग-अलग है। 'खाता-पीतामें' 'खाता' खाना क्रियासे बना है, जब कि 'वही खाता' या 'खाता (account)' के अर्थमें आनेवाला खाता अलग ही शब्द है। इसी 'खाता' से खतियाना क्रिया बन गयी और खतौनी भी पटवारियोकी होती है।

गाडी शब्द अकेला तथा बैलगाडी, ऊँट गाडी (शिकरम), घोडा गाडी, मोटरगाडी तथा रेलगाडीके साथ आता है और गाडना क्रियासे भी गाडी रूप बनता है।

घोडेको बांधनेकी जगहको थान कहते है, जो स्थानका तद्भव है और कपडेके थान भी होते हैं। 'खेल' खेले जाते हैं और 'खेल' मे पशु पानी पीते हैं। इसमे खेलके दो अर्थ हैं।

इसी प्रकार 'पहुँचा' और पहुँचनाका भूतकालिक रूप 'पहुँचा', तथा पहुंची (आभूषण) और पहुँची (क्रिया) देखिए।

इस दृष्टिसे हिन्दी शब्दोका अध्ययन होना चाहिए। हिन्दी कोशोसे ऐसे शब्दोके सम्बन्धमें कोई बहुत अधिक जानकारी नही मिलती। उनमे ऐसे जोडे प्राय. एक ही शब्दके अन्तर्गत दे दिये जाते हैं और साथ ही उनसे बने हुए दूसरे शब्द या मुहावरे भी दे दिये जाते है। जब कि ऐसे शब्द अलग-अलग दिये जाने चाहिए। हिन्दी शब्द-रचनाके काममें ऐसे शब्दोकी ओर पूरा ध्यान देनेसे हिन्दी शब्दोके अध्ययनमे प्रगति होगी।

●

तेईसवाँ परिच्छेद

मुहावरे और कहावतें

शब्द-रचनाके प्रसंगमे मुहावरो और कहावतोका वर्णन आवश्यक ही नही, अनिवार्य भी है। सुभाषित, सूक्ति, लोकोक्ति या कहावतें और मुहावरे किसी जातिकी सम्मिलित सम्पत्ति और किसी भाषाका भूषण ही नही, वल्कि प्राण होते है। ये समाजके जीवन और अनुभवोकी अभिव्यक्ति, ज्ञानका भण्डार और पीढी-दर-पीढी चली आनेवाली वपौती होती है। इनमें गागरमें सागर या कूज़ेमे दरिया वन्द होता है। सुभाषित वाक्यामृत है। इनसे किसी जातिके विचारोकी परम्परा और अनुभवोंकी लड़ी मिल जाती है। वक्ता, कवि, लेखक और जनता इनसे काम लेती रहती है। इन कहावतो और मुहावरोका भाषामे शब्दोंसे भी अधिक महत्व और महान् स्थान है। अच्छी कहावतोंमें विचारोकी गहराई, कल्पनाकी उड़ान और क्षेत्रकी विशालता होती है, और वे अमर होती है। इसीलिए उन्हें सूक्ति या सुभाषित कहा गया है। एक-एक सूक्ति और कहावत हीरोंके मोलकी होती है और मुहावरे मोतियोंके समान होते है। इनमें किसी जातिके रीति-रिवाज, परम्परा और संस्कृति ही छिपी हुई नही होती, बल्कि उनकी सहायतासे किसी जातिके इतिहासकी वहुत-सी बातोंका पता भी लग सकता है। किसी भाषाके इतिहास, विकास, जातिके [illegible] अंगों, वर्गों या समुदायोंकी भाषाको देन और उनपर बाहरी तथा [illegible] प्रभावों आदिकी छाप सम्बन्धी वहुत-सी बातें इनसे मालूम हो जाती है।

भाषामे कहावतों और मुहावरोंके प्रयोगसे एक विशेष [illegible]

है। इनमे एक ऐसा जादू भरा होता है, जिसकी चोट कोमल तथा चावुक-की मारसे भी गहरा असर करती है, पर सुननेवालेको बुरी मालूम नही होती। इनके प्रयोगमें शिष्टता और व्यग्यकी गहरी पुट होती है। 'घर न वार मियाँ मुहल्लेदार,' 'नौ सौ चूहे खाके विल्ली हजको चली,' 'पर उप-देश कुशल वहुतेरे,' और 'तेलीका वैल,' 'मक्खीचूस' और 'नेताकी दुम' आदि अनेक कहावतें और मुहावरे है, जो सुननेवालेके हृदयपर अपना प्रभाव डाले विना नही रहते। मुहावरेदार (Idiomatic) भाषा हमेशा श्रेष्ठ मानी जाती है।

कहावतो और मुहावरोका अन्तर वावू गुलावरायजीके शब्दोमें यह है—"कहावतमें एक पूर्ण सत्य या विचारकी पूरी अभिव्यक्ति हो जाती है। वह दूसरे वाक्यका अंश नही वनती, वरन् एक स्वतन्त्र वाक्य होती है। मुहावरा स्वतन्त्र नही होता, वह किसी वाक्यमे रखे जानेका मुहताज होता है।"[1] 'खेती खसम सेती, नही तो रेती' कहावत है और 'हाथका मैल,' 'लकीरका फकीर होना' मुहावरे हैं। मुहावरेमें कमसे कम दो पद होते है और वह व्याकरणका अतिक्रमण नही करता। उर्दूके प्रसिद्ध कवि स्व० व्रजमोहन दत्तात्रय कैफीका कथन है, "यह जो कहा गया है, कि मुहावरेकी वुनियाद अर्थालकार (इस्तआरे) परसे होती है, ठीक नही मालूम होती। इस्तआरेकी जगह उपमा कहा जाये तो मुजायका नही।"[2] उन्होने मुहावरोके कुछ उदाहरण भी दिये हैं, जैसे, 'तीन पाँच करना,' 'अपने ढाई चावल बघारना,' 'आँखें आना,' 'आँखें दिखाना,' 'देखिए ऊँट किस करवट वैठता है,' 'क़लम तोड दिये,' 'दिल आना' आदि। इनमें इस्त-आरा अर्थात् अर्थालंकार शायद ही हो। मुहावरोके प्रयोगमे इस बातका खास ध्यान रखनेकी आवश्यकता है, कि मुहावरा अपने शब्दोमे किसी प्रकारकी कमी, बढोत्तरी और हेरफेरके हस्तक्षेपको सहन नही करता। वह ज्योका

१ हिन्दी लोकोक्तियाँ और मुहावरे, पोठिका, पृ० 'ख'।
२ कैफ़िया, पृ० १७८–७९।

त्यो और उपयुक्त अवसरपर प्रयोग किया जाता है। 'आँखें लगना'के स्थान-पर 'चक्षु लगना' कहना अशुद्ध है।

शब्दोंके समान नयी-नयी कहावतें और मुहावरे हर समय बनते और प्रचलित होते रहते हैं। इनके बनानेमें जातिके सभी वर्गों और अंगोंका योग होता है। शरीरके अंगों, प्रकृति, ऋतुओं, पशु-पक्षी, भिन्न-भिन्न व्यवसायों और पारिभाषिक शब्दोंके आधारपर अनेक कहावतें और मुहावरे प्रचलित हो गये हैं। इनके बनानेमें जनता किसी भी प्रकार साहित्यकारों-से पीछे नहीं रही है। इनके निर्माणमें स्त्री-समाजका भी बड़ा हाथ रहा है। स्त्रियोंके मुहावरोंमें उक्ति सस्कार (यूफेमिजम) खूब मिलता है, जैसे 'अलग होना,' 'दिन चढना' आदि। लोक-भाषामें भी कहावतें और मुहावरे कम नहीं हैं। हर भाषामें शिष्टसे शिष्ट और अश्लीलसे अश्लील कहावतें और मुहावरे भी मिलते हैं। अच्छे हिन्दी-उर्दू कहावतों और मुहा-वरोंकी भी बहुत बडी सख्या है। डॉ० एस्० डब्ल्यू फालनने अपने कोशमें[1] लिखा है कि दूसरी भाषाओंसे, हिन्दीमें अभिव्यजनात्मक मुहावरोंकी बहुत बडी सख्या है, जो कि सर्वथा अन-अनुवादनीय है। उदाहरणके तौरसे 'काठका उल्लू', 'मनके लड्डू फोडना', 'मिट्टीका माधो', 'आँखें उडना', आदि मुहावरे दिये जा सकते हैं। कैफ़ी साहब लिखते हैं, 'उर्दूमें मुहावरों-की सख्या शायद दूसरी सब भाषाओंसे अधिक है। यही नहीं कि मुहावरे हमारी भाषामें सबसे ज्यादा हैं, बल्कि इनके प्रकार तरह-तरहके हैं। यह बहुलता और सम्पन्नता दूसरी भाषाओंमे नहीं पायी जाती।"[2] और यदि यह कहा जाये कि उर्दू-हिन्दीमें कहावतों और मुहावरोंका नमिस इन समूह बहुत अधिक है और सस्कृत, अरबी या फारसीकी कुछ कहावतोंके सिवाय शेष कहावतें और मुहावरे उर्दू-हिन्दीमें समान रूपसे प्रयुक्त होते

[1] Introduction to A New Hindustani Dictionary, Ed. 1879 A D

[2] कैफ़िया, पृ० १७६।

हैं, तो कोई अतिशयोक्ति न होगी।

अब इनके बननेके कारणोंको सोदाहरण नीचे दिया जाता है—

कुछ कहावतें और मुहावरे ऐतिहासिक, पौराणिक वास्तविक या काल्पनिक कहानियोंके आधारपर बने हैं, जैसे—

१. 'सुदामाके तन्दुल' कृष्ण सुदामाकी पौराणिक कहानीके आधारपर बना मुहावरा है।

२. 'खाली हाथ जाना' मुहावरा है जो सिकन्दर महान्‌के मरनेके बाद अरथीसे बाहर खाली हाथ रखनेकी घटनापर बन गया।

३. 'अभी दिल्ली दूर है' मुगल बादशाह मुहम्मदशाहके द्वारा सन् १७३९में नादिरशाहके आक्रमणके समय कहे गये एक फारसी वाक्य 'हनूज दिल्ली दूर अस्त' का अनुवाद है।

४ 'चोर चोरीसे जाय, पर हेरा-फेरीसे न जाय' कहावत है जो किसी चोरसे साधु बने एक ऐसे व्यक्तिकी कहानीके आधारपर चल पड़ी, जो रातमे उठकर अपने साथी साधुओके कमण्डलोंमें हेर-फेर कर दिया करता था।

५. 'अगूर खट्टे होना', 'लालची बन्दर' और 'रँगा सियार', 'टेढी खीर' आदि मुहावरे क्रमश लोमडी, बन्दर, गीदड और सारसकी प्रसिद्ध कहानियोके आधारपर बने है।

कहावतो और मुहावरोकी रचनामे कवियोने भी बडा काम किया है। अच्छे कवि अपने छन्दो और शेरोमे सत्यो और जीवनके अनुभवोको कहावतो और मुहावरोके रूपमे इस प्रकार बाँधते है, कि वे कहावतें और मुहावरे अमर बन जाते हैं। चाहे उनके बनानेवाले कवियोका नाम और पूरे छन्द किसीको स्मरण हो या नही, पर उनका प्रयोग होता रहता है। कहते हैं, शेक्सपीयर और मिल्टनने अँगरेज़ी भाषाको इतने नये मुहावरे दिये कि उनकी सख्या बाकी समस्त अँगरेज़ कवियोके द्वारा बनायी गयी कहावतो और मुहावरोके बराबर थी। इस दृष्टिसे हमारे देशकी सभी भाषाओके

कवियोंके साहित्यके अध्ययनकी आवश्यकता है, जिसमें उनके द्वारा रची गयी कहावतों तथा मुहावरोंका संग्रह हो सके। हर्ष है कि इस ओर शोधार्थियोंका ध्यान गया है और इधर कई शोध-प्रबन्ध और वृहत्संग्रह प्रकाशित होने जा रहे हैं। नमूनेके तौरपर कुछ कवियोंकी रेखांकित सूक्तियों और मुहावरोंको देखिए, जैसे—

सींग हिलें और खुर घिसे कन्धा बोझ न लेय।
ऐसे बूढ़े बैल को कौन बाँध भुस देय॥ (अज्ञात)
जिन ढूँढा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ।
जो बौरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठ॥ (कबीर)
तुलसी या संसार में भाँत-भाँति के लोग।
सबसे हिल-मिल रहिए, नदी - नाव संयोग॥ (तुलसीदास)
दिल के फफोले जल उठे सीने के दाग से।
इस घर को आग लग गयी घर के चिराग से॥ (अज्ञात)

कुछ कहावतों और मुहावरोंमें जीवनके अनुभवोंको सूत्रोंके ढंगसे कहा जाता है। नामालूम वे कब और कैसे प्रचलित हो गये। उन्हें आसानीसे याद किया जा सकता है और आवश्यकता पड़नेपर झटसे कहा जा सकता है जैसे, 'एक मछली सारे पानीको गन्दा कर देती है', 'खरबूजेको देखकर खरबूजा रंग बदलता है',। 'खाइए मन भाता (माफिक या पसन्द भी) पहिनिए जग भाता' आदि।

कुछ कहावतों और मुहावरोंके भिन्न-भिन्न भेदोंके आधार नीचे दिये जाते हैं—

१. पशु पक्षियोंके मुहावरोंमें या तो किसी पशु-पक्षीका नाम होता है या उनके किसी अंग या स्वभावकी तरफ इशारा होता है, जैसे 'ऊँट रे ऊँट तेरी कौन-सी कल सीधी', 'दुम दबाकर भागना', 'उल्लू बोलना (उजाड़ या सुनसान होना)', 'गधेके सींग', 'हाथीके दाँत खानेके और

दिखानेके ओर', 'कान खडे करना', 'मुरगीकी एक टाँग', गिरगिटकी तरह रंग वदलना', 'जूँकी चाल, जब गीदडकी मौत आती है तो शहरकी ओर भागता है' आदि।

२ शरीरके अगोंके मुहावरोंमें शरीरके किसी अगका नाम विशेष स्थान रखता है। जिस प्रकार बहुत-से पारिभाषिक और साधारण शब्द शरीरके अगोंके नामोंपर बने हैं। वैसे ही बहुत-सी कहावतें और मुहावरे भी इनके आधारपर बनाये गये हैं जैसे, 'पेटका हलका', 'पाँचो अँगुलियाँ बराबर नही होती', 'मुँहमे दाँत न पेटमे आँत', 'अँगुलीसे नाखून अलग नही होते' आदि।

३ वनस्पतिके मुहावरो और कहावतोमे किसी वनस्पतिका नाम आ जाता है जैसे, 'आमके आम गुठलियोंके दाम', 'ढाकके तीन पात', 'उलटे बाँस बरेलीको', 'हथेलीपर सरसो जमाना', मूली गाजर होना', 'आँखोमे सरसो फूलना' (नशेमें चूर होना), आदि।

४. खाने-पीनेके मुहावरोमे खाने-पीनेके पदार्थोंके शब्दोकी अपेक्षा उनका आर्थिक अश अधिक प्रधान होता है जैसे, 'आटे दालका भाव मालूम होना', 'थालीका बैगन', 'रोटीके टीट', 'दाँत काटी रोटी होना', 'बूरके लड्डू', 'दूधका-सा उबाल', 'दूधका दूध पानीका पानी' आदि।

५. वस्त्रोंके मुहावरोमे पहनने-ओढनेके किसी वस्त्रकी प्रधानता होती है जैसे, 'चोली दामनका साथ होना', 'जूतियोमें दाल बँटना', 'जूते खाना', 'पगडी उछालना', 'पगडी बदल यार होना' आदि।

६. ऋतुओंके मुहावरोमे ऋतुओकी भिन्न-भिन्न अवस्थाओकी तरफ सकेत होता है जैसे, 'आग बरसना', ओससे प्यास नही बुझती', 'सिर मुँडाते ही ओले पडना', 'आग-बबूला होना', 'मूसलाधार बरसना', 'बरसाती मेढक', 'हवाके घोडेपर सवार होना' आदि।

७ प्राकृतिक मुहावरोंमे प्रकृतिके दृश्योकी ओर इशारा होता है

जैसे, 'आँखोका तारा', 'सितारा चमकना', 'आकाश-पाताल एक करना', 'आसमानपर दिमाग़ होना', 'हवाई किले बनाना', 'बुरी ग्रह आना', 'मीन मेष निकालना' (आलोचना करना) आदि ।

८ गिनतीके मुहावरोमें किसी संख्या ही से अर्थ निकलता है या उसमें संख्याकी प्रधानता होती है जैसे, 'उन्नीस-बीसका फर्क होना', 'तीन-तेरह होना', 'तीन-पाँच करना', 'सवाये होना', एक सौ एक दो सौ ग्यारह' आदि ।

९ **युद्ध और वीरताकी** कहावतो तथा मुहावरोमे युद्ध सम्बन्धी किसी बातकी प्रधानता होती है। राजपूती कालमे वीरता और युद्ध सम्बन्धी बहुत-से मुहावरे बने . जैसे, 'खेत रहना' (लडाईमे मारा जाना), 'घमसानका रण', 'रण चढना', 'तलवारके घाट उतारना', 'तलवारोकी छाँवोमें दिन काटना' (अत्यन्त विपत्ति और जोखिमका जीवन बिताना), 'जानपर खेलना' 'एक मियानमें दो तलवार नही समा सकती,' 'दूसरेके कन्धोपर बन्दूक चलाना', बीडा उठाना', 'चारो खाने चित्त', 'जयचन्द होना', 'घरका भेदी लका ढाये' आदि ।

१० **मनोवैज्ञानिक** तथा अनुभूतिपूर्ण मुहावरोमे मनोवैज्ञानिक अनुभूतियोका वर्णन अत्यन्त सचाई और सुन्दरतासे होता है। इनकी संख्या भी सैकडो है। जैसे, आँखोमे खून उतरना, कलेजा ठण्डा होना, पाव तलेसे जमीन, लहूके घूँट पीना, मन मसोसकर रह जाना, चेहरेपर हवाई उडना, मुँह फक हो जाना आदि ।

११ जल-सम्बन्धी मुहावरोमे समुद्र, दरिया या उनके पानीकी किसी बातसे नये अर्थ पैदा हो जाते है, जैसे, 'आग पानीका बैर,' 'उल्टी गगा बहाना,' 'पानी न मांगना,' 'डूब मरो चुल्लू-भर पानीमे', 'दरियामें रहना मगरमच्छसे बैर,' 'सात समन्दर पार' (बहुत दूर), 'पानीका बुलबुला' आदि ।

१२. शिल्पसम्बन्धी मुहावरोमें किसी-न-किसी शिल्पी, शिल्पीके काम या औज़ार या किसी पारिभाषिक शब्दका प्रयोग होता है। इन मुहावरो आदिके सम्बन्धमे यह बात विशेष रूपसे उल्लेखनीय है कि जब भाषाके साधारण शब्दोको अपनाकर शिल्प-विज्ञानी या दस्तकार आदि पारिभाषिक शब्दोका रूप देते हैं, तभी साहित्यकार और जनता भी पारिभाषिक और अर्ध-पारिभाषिक शब्दोके आधारपर मुहावरे और कहावतें बनाती रहती हैं। इस प्रकार साहित्यकी दोनो शाखाओ—ज्ञान-साहित्य और जीवन-साहित्य—में आपसमे शब्दोका लेन-देन जारी रहता है। इतना ही नही, अच्छी भाषा वह है, जो पारिभाषिक शब्दोंको नयेसे नये मुहावरे तथा कहावतें बनाती रहे। हमारे देशमें परिस्थितिवश विज्ञान आदिके नये-नये पारिभाषिक शब्द भाषामें मुहावरोके रूपमें बहुत कम आये हैं। जो थोडे-बहुत नये मुहावरे बने है, उन्हें अपवाद ही समझना चाहिए। शिल्प-सम्बन्धी मुहावरे बहुत हैं, जैसे 'कोल्हू या तेलीका बैल बनना,' 'कभी गाडी नावमें कभी नाव गाडीमें,' 'सौ सुनारकी एक लुहारकी,' 'सूत न कपास जुलाहेसे लट्ठमलट्ठा,' 'धोबीका कुत्ता घरका न घाटका,' 'तेल देख, तेलकी धार देख,' 'धोबिनसे क्या तेलिन घाट उसका मोगरा उसको लाठ,' 'बात खटाईमें पडना,' 'मीन मेष निकालना,' षटराग (बखेडा) लेकर बैठना,' 'तार कुतार होना,' 'पापड बेलना,' 'हीग लगे न फिटकरी रग चोखा होय,' 'चूना लगाना,' 'टिकिट काटना' 'पारा चढना' आदि।

१३ व्यापारिक मुहावरे व्यापारसे सम्बन्ध रखते हैं, जैसे 'नौ नकद न तेरा उधार,' 'देना एक न लेने दो,' 'दूकान लगाना,' 'दूकान बढाना,' 'हिसाब कौडी-कौडीका बख्शीश लाखोकी', 'मूलसे व्याज प्यारा होना,' ऊँची दूकान फीका पकवान,' 'जाय लाख रहे साख' आदि।

१४ खेल सम्बन्धी मुहावरे, जैसे 'चाल चलना,' 'दाव-पेंच चलना,' 'शह देना,' 'मात करना,' 'नहलेपर दहला लगाना,' 'पौ बारा होना,'

'कसर रह गयी' (नटोकी देन), 'तमाशा खतम पैसा हजम' आदि ।

१५. व्यंग्यात्मक मुहावरोंमें धर्मके ठेकेदारो, ढोंगियो, बगुला भगतो, अवसरवादियो और दूसरोको साधन बनाकर काम करनेवालो आदिपर करारी चोटें लगायी गयी हैं जैसे, 'अन्धश्रद्धा,' 'अन्ध भक्ति', 'बगला भगत,' 'लकीरका फकीर,' 'भेडिया धसान,' 'सतवचन महाराज,' 'हाथमे सुमरनी बगलमे कतरनी,' 'बाबा वाक्य प्रमाणम्,' 'नया मुसलमान अल्ला ही अल्ला पुकारे,' 'पोप-लीला,' 'चढ जा बेटा सूलीपर राम भला करेगा,' 'भुसमें आग लगा जमालो दूर खडी,' 'रगे सियार,' 'दूसरेके कन्धेपर बन्दूक चलाना,' 'बांबीमें हाथ तुम दो मन्त्र मै पढूँ,' 'गगा गये गगादास जमना गये जमनादास,' 'गिरगिटकी तरह रग बदलना,' 'खुशामदी टट्टू,' 'खुशामदसे ही आमद है इसलिए बडी खुशामद है,' 'लोडर न लीडरकी दुम,' 'जी हुजूर,' 'हाँ में हाँ मिलाना' आदि ।

व्याकरणकी दृष्टिसे हिन्दी मुहावरोको दो भागोमें बांटा जा सकता है—१. क्रियाई मुहावरे और २. सज्ञाई मुहावरे । क्रियाई मुहावरोंके अन्तमे क्रिया अवश्य होगी, जैसे 'आंखें लाल-पीली करना', 'आंखे चार होना', 'आंखें फेरना', 'जी चुराना' आदि । सज्ञाई मुहावरोंके अन्तमें क्रिया नहीं होती, बल्कि सज्ञा होती है, जैसे 'तेलीका बैल,' 'हाथका मैल,' 'भाडेका टट्टू,' 'गीदड भभकी,' 'बन्दर बांट' आदि ।

ऐसा देखनेमें आ रहा है, कि इस समय हिन्दीमे नये मौलिक मुहावरे नही बन रहे है और प्रचलित मुहावरोका प्रयोग भी कम हो रहा है क्योकि हिन्दी लेखकोका ध्यान मुहावरोंके प्रयोगकी तरफ कम है । यह गुण प्रेमचन्दजीमें बहुत था । यह बात भाषाके लिए अच्छी नहीं है । नये मुहावरोंमें टिकिट काटना, लाल झण्डी दिखाना, रद्दीकी टोकरीमें डालना, दफ्तरी सरकार, पारा चढना, टेम्परेचर चढना, कागजी घोडे दौडाना, कागजका पेट भरना, कोल्ड स्टोरेजमें डालना आदि है, जिनमेंसे बहुतेरे तो अँगरेजी मुहावरोंके अनुवाद मात्र हैं ।

विदेशी मुहावरो और लोकोक्तियोके समानक स्थिर करने और अनुवाद करनेमे बडी सावधानतासे काम लेना चाहिए, जैसे 'It is raining cats and dogs' का हिन्दी समानक 'मूसलाधार वर्षा होता है, कुत्ते बिल्लीका बरसना नही। हिन्दी मुहावरो और लोकोक्तियोके अच्छे कोश तैयार होनेकी बडी आवश्यकता है।

चौबीसवाँ परिच्छेद

चिह्न, संकेत, और सांकेतिक रूप

भापामे चिह्नो (Signs), सकेतो या प्रतीको (Symbols), सूत्रो (Formulae) और साकेतिक रूपो (abbreviations) का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। शब्दोके समान इनके भी अर्थ होते है। इनका प्रयोग भापा, गणित, विज्ञान, प्रूफ सशोधन, व्यापार, बैक व्यवसाय, रेल्वे विभाग, सरकारी दफ्तरो और बहीखाता आदिमें होता है। गणित और रसायनमे तो सूत्रोकी भरमार है। साकेतिक रूप भापा, उद्योग व्यापार, रेलवे तथा बैक व्यवसाय आदिमे बहुत काम आते है। इन चिह्नो आदिकी विशेपता इनके छोटेपन तथा स्थायी अर्थमें है। साकेतिक अक्षरो-का क्षेत्र बहुत सीमित होता है और उस क्षेत्रसे बाहर उन्हे कोई नही समझता। यद्यपि बहुधा एक चिह्नका एक ही अर्थ होता है, तो भी भिन्न विज्ञानो या गणितमे कुछ चिह्नोका अलग-अलग अर्थोमें प्रयोग होता है। उदाहरणके तौरपर ○, ⊙ तथा 7 ∠ दिये जाते हैं। ○ का अर्थ खगोल विद्यामे पूरा चाँद, चिकित्सा विद्यामे पिण्ट माप और गणितमे परिधि होता है। चिन्ह ⊙ का अर्थ खगोल विज्ञानमें सूर्य और गणितमे वृत्त होता है। चिन्ह 7 का अर्थ ज्यामितिमें 'से बडा', पर भापा विज्ञानमें 'पूर्व रूपसे पर रूपके परिवर्तन' को सूचित करता है। इसी प्रकार चिन्ह ∠ का अर्थ ज्यामितिमे 'से छोटा' पर भापा विज्ञानमे 'पर रूपसे पूर्व रूपमें परिवर्तन' को बतलाता है। कहनेका तात्पर्य यही है, कि चिह्नोंके अर्थ बहुधा स्थायी तथा एक ही होते है, पर कुछ चिह्नोंके अर्थ [illegible]

भी होते हैं ।

साकेतिक रूपो या अक्षरोके अर्थ भी बहुत ही होते हैं, जैसे—अँगरेज़ी बी० डी० (B D) से बनारसीदास, बद्रीदास तथा बखतावरदास आदि बन जाते हैं । अँगरेज़ी आर० एस० (R. S) से राय साहब उपाधिका बोध होता था, पर नाममे रघुवीर सिंह, रघुवर सहाय, राम सहाय, रामस्वरूप आदिका बोध होगा । पी० एम० (P M) से पोस्टमास्टर, प्राइम मिनिस्टर, और डाकघरमें पोस्ट मैरिडियन, [दिनके बारह बजेसे रात बारह बजे तकका समय) आदि होते हैं । एस० बी० आई० (S. B I.) स्टेट बैंक ऑव इण्डियाके लिए, आर० बी० आई० (R B. I) रिजर्व बैंक ऑव इण्डिया और पी० एन० बी० (P. N B) पजाब नेशनल बैंकके लिए, आर० आर० (R. R) रेलवे बिल्टीके लिए और टी० टी० (T. T) टेलीग्राफिक ट्रान्सफर होते हैं ।

गणित विज्ञान और भाषाके चिह्नो, सकेतो तथा सूत्रो आदिको भाषामे अन्तर्राष्ट्रीय स्थान मिल गया है और संसारकी प्राय सभी भाषाओमें उनका प्रयोग होता है । हिन्दोमें भी उन्हें अपना लिया गया है, चाहे उन्हें उनके मूल नामसे पुकारा जाये या अनूदित नामसे, जैसे △ को भूगोलमें 'डेल्टा' मूल यूनानी शब्दसे पुकारेंगे, पर इसी चिह्नको ज्यामितिमें अनूदित शब्द तिकोन या त्रिभुज कहेंगे । इसी प्रकार (′) (″) फुट और इच, (○) डिग्री मूल शब्द है । % का प्रतिशत अनुवाद है । इस प्रकार एक ही विदेशी चिह्नको अपनाकर हमने कही विदेशी नामको अपनाया है, तो कही उसका हिन्दो समानक स्थिर किया है ।

विज्ञानके सूत्रोकी सहायतासे विज्ञानको याद करनेमें आसानी होती है और ये सूत्र सैकडोकी सख्यामे हैं । रसायनशास्त्रमें जो मूलतत्त्व माने गये हैं उनके साकेतिक रूप या प्रतीक अलग-अलग हैं और उन रासायनिक तत्त्वोके मिश्रणसे जो दूसरे पदार्थ बनते है, उनके साकेतिक रूप अलग

हैं। उनमें-से एक-दोके उदाहरण ही यहाँ दिये जाते हैं, अल्यूमिनियम (Al), ताँवा (Cu), स्वर्ण (Au), लोहा (Fe), पारा (Hg) आदि। परन्तु इनसे सम्वन्धित सूत्रोंको यहाँ देनेमें हम असमर्थ हैं। फिर भी उदाहरणके तौरपर यहाँ कुछ सूत्र दिये जाते हैं।

गन्धक अम्ल (Sulphuric Acid) = H_2So_4

नीला कसीस या नीला थोथा (Copper Sulphate) = $Cuso_4$

हरा कसीस (Ferrous Sulphate) = $Fe\ So_4$

नमक (Sodium Chloride) = Nacl

चूना (Calcium oxide) = Cao

ऐसे सैकडो सूत्रोंका हिन्दी रूप स्थिर करनेका समय अभी नहीं आया है। इसलिए जबतक वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्द अच्छी तरह हिन्दीमें प्रचलित होकर टकसाली न बन जायें, तबतक इन सूत्रोंको ज्योंका त्यों रोमन लिपि और रोमन अकोंमे देना उचित होगा।

शिक्षा-मन्त्रालयसे प्रकाशित रसायन शास्त्र सम्वन्धी शब्द-संग्रहमें रसायन शास्त्रमें प्रयुक्त होनेवाले कुछ शब्दोंके संक्षिप्त रूप दिये गये हैं। यह सूची वहुत छोटी है। इसमें कुछ शब्दोंके सांकेतिक रूप अनुलिपिकी पद्धतिपर हैं, कुछके हिन्दी अनूदित शब्दोंसे सांकेतिक रूप बनाये गये हैं और कुछके दोनों प्रकारके सांकेतिक रूप दिये गये हैं, जैसे वोल्ट (Volts) के लिए 'वोल्ट', सोल्यूशन (विलय)के लिए 'विल' और डायरेक्ट करेन्ट (दिष्ट धारा)के लिए 'दि० धा०' तथा 'डो० सी०' दोनों दिये गये हैं। इंच, औंस, ग्राम, ग्रेन, फुट, वोल्ट तथा वाट आदि शब्दोंके लिए पूरे शब्द ही सांकेतिक रूपमें रख दिये गये हैं, जब कि इनके भी सांकेतिक रूप बनाये जा सकते हैं।

आशा है भविष्यमें इनमें उचित संशोधन कर दिया जायगा और दूसरे विभागों आदिको भी इसी प्रकारकी सांकेतिक [illegible] प्रकाशित की जायेंगी।

भारतमे सैकडो शहर, कस्वे और गाँव रेलके स्टेशनोपर हैं। रेलके टिकिटो और पारसलोपर पूरे नामके साथ साकेतिक रूप भी होते हैं, जिनकी सहायतासे रेलके कर्मचारी लम्वे-लम्वे नामोको लिखनेके कष्टसे वच जाते हैं और इस प्रकार समय तथा श्रमकी वचत हो जाती है, उदाहरणके तौरपर भारतके कुछ शहरोके नामोको कोष्ठकमे अँगरेजी साकेतिक रूपोके साथ दिया जाता है, जैसे अलीगढ जकशन (Al Jn.), अमृतसर (ASR.), अम्वाला छावनी (UMB), अम्वाला सिटी (UMC), दिल्ली (DLI), नागपुर (NGP), मद्रास (MAS.), और हावडा (HWH) आदि। इनमें शहरके नाम पहला अक्षर तो स्पष्ट है, पर वाकी अक्षरोके लिए कोई विशेष नियम नही है। हिन्दीमे इन सहस्रो साकेतिक रूपो (Abbreviations) को कैसे रूप दिया जाये, यह एक जटिल समस्या है। उसके लिए क्या नियम वनाया जाये, इस तरफ रेलवेके कामसे परिचित हिन्दीभाषी विद्वानोको ध्यान देना चाहिए और रेलवे अधिकारियोकी सहायतासे इन नामोके ठीक-ठीक रूप निर्धारित करके सूची वनानी चाहिए। इस काममें मतभेदको स्थान देकर एक शहरके नामके कई-कई रूप देकर सन्दिग्धताको स्थान नही दिया जा सकता। फिर ये साकेतिक अक्षर समस्त भारतके लिए तो होगे ही।

इसी प्रकार सरकारी टिप्पणो (notings)में सरकारी अधिकारियोके पदोको सक्षिप्तताके भावसे साकेतिक रूपोसे सूचित किया जाता है। सस्थाओं, दफ्तरो तथा विभागो आदिके नाम भी साकेतिक रूपोमें लिखे जाते हैं। इन सरकारी पदो, सस्थाओ, तथा विभागो आदिके ऐसे हिन्दी नाम स्थिर करने होगे, जो सबको मान्य हो और फिर उनके साकेतिक रूप हिन्दी नियमोसे स्थिर करने होगे। यहाँ बहुरूपताको स्थान न होगा, क्योकि उससे गडबड पैदा होगी और सन्दिग्धताको स्थान मिलेगा। इनमें-से वहुत-से नाम अखिल भारतीय होगे और सभी प्रादेशिक भाषाओमें उनके वही रूप होगे।

हमारे देशमें भिन्न भिन्न भाषाओमे नये शब्द तथा पारिभाषिक शब्द बनानेका काम तो हो रहा है, पर भाषा, गणित, विज्ञान, व्यवसाय, रेलो तथा सरकारी दफ्तरो आदिमें प्रयोगमें आनेवाले चिह्नों, सकेतो, प्रतीकों, सूत्रो और साकेतिक रूपोको स्थिर करनेकी तरफ अभी ध्यान नहीं है। इसको गौण समझकर या अभी इनको निश्चित करनेका उपयुक्त समय न समझकर अभी इस कामको छुआ नहीं जा रहा है, केवल चलती चर्चा कही देखी गयी है। इस ओर ध्यान देनेकी अधिक आवश्यकता है।

केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय-द्वारा भिन्न-भिन्न विज्ञानो आदिके पारिभाषिक शब्दोकी जो सूचियाँ निकल रही है, उनमे परिशिष्ट II मे वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली बोर्ड (Board of Scientific Terminology) का इस विषयमें नीचे लिखा सिद्धान्त नम्बर तीन दिया है

"गणित और अन्य विज्ञानोमे प्रयोग किये जानेवाले प्रतीक-चिह्न और सूत्र विना किसी परिवर्तनके ग्रहण कर लिये जायें अर्थात् रोमन लिपिमें लिखे हुए अक्षर और अक ही हिन्दीमें प्रयुक्त किये जायें।"

इससे दो बातें साफ-साफ समझमें आती है। एक तो प्रतीक-चिह्नोंको ज्योका त्यो अपनानेकी बात और दूसरी सूत्रोंको रोमन अक्षरों और अकोंमें हिन्दीमें प्रयुक्त करनेकी बात। पहली बात अर्थात् प्रतीक-चिह्नों (Signs and Symbols) के ज्योका त्यो अपनानेके बारेमें तो वाद-विवादकी कोई गुजाइश है ही नही क्योंकि किसीने आज तक उनको अपनानेका विरोध नही किया, वरन् सब उनका प्रयोग करते हैं। सूत्रोंके बारेमें एक प्रश्न यह उठता है कि क्या हम आयरन (Iron, लोहा) को विज्ञानमें 'Fe' लिखें या 'लो' लिखें और स्वर्णको अंग्रेजी गोल्ड 'Gold = Au' लिखें? (अंगरेजोंमें भी लोहेके लिए (Fe) अंगरेजी नही, बल्कि लातीनी शब्द फेरम (Ferrum) से बना है और स्वर्णके लिए 'Au' रूप एक लातीनी शब्द 'आरम' (Aurum) से बना

है। इससे यह वात तो प्रकट होती है कि विज्ञानमे शब्द एक भापाके होते है और उनके लिए साकेतिक रूप या सूत्र अन्तर्राष्ट्रीय काममें आते है, चाहे वे किसी भी भापाके हो। क्या हिन्दीमे भी इसी पद्धतिको अपनाया जाये ? इस समय हमारे देशके वैज्ञानिक अँगरेज़ी भापाके माध्यमसे शिक्षा प्राप्त हैं और ये सूत्र अन्तर्राष्ट्रीय रूप धारण कर चुके है। इसलिए इन सूत्रोको फिलहाल ज्योका त्यो अपनानेमें वुद्धिमत्ता और सुगमता है, आगे राष्ट्र और शिक्षाकी सुविधाके लिए जैसा ठीक होगा भावी पीढियोंके विद्वान् स्वय निर्णय कर लेंगे।

पर क्या साकेतिक रूपो (abbreviations) के लिए हिन्दीमे कोई नियम स्थिर है, या नही ? यदि हम किसी भी हिन्दी पत्रको उठाकर देखें तो हमें मध्य प्रदेशके लिए म० प्र०, उत्तर प्रदेशके लिए उ० प्र०, रुपयेके लिए रु०, कांग्रेस कमिटीके लिए कॉं० क० और प्रधान मन्त्रीके लिए प्र० म० प्रयुक्त हुए मिलते है। केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालयकी एक पारिभाषिक शब्दसूचीमें इस सम्बन्धमें नीचे लिखा नियम दिया है .

"सस्कृत व्याकरणमे नामोके प्रथम, द्वितीय, तृतीय अथवा चतुर्थ स्वरके उपरान्त बचे हुए भागको विभिन्न अवस्थाओमे त्यागा जा सकता है। और उदाहरणमें Cerebrospinal Fever के लिए 'प्रमस्तिमेरु ज्वर' शब्द दिया है, जिसमें 'प्रमस्ति' साकेतिक रूप शब्द 'प्रमास्तिष्क'से बनाया है जो इस शब्दके तीसरे स्वरके उपरान्त भागको त्यागनेसे बना है। इस सिद्धान्तके अनुसार साकेतिक रूपोको स्थिर किया जा सकता है।

उदाहरणार्थ लिये कुछ पूरे नाम और उनके साकेतिक रूप नीचे दिये जाते हैं .

प्रधान (President) · प्र०, उप प्रधान (Vice President) · उ० प्र०, प्रधान मन्त्री (Prime Minister) प्र० म०, मुख्य मन्त्री

(Chief Minister) मु० मं०, भारत सरकार (Govt of India) भा० स० शिक्षा मन्त्रालय (Ministry of Education) शि० म०, साहित्य अकादमी दिल्ली सा० अ० दिल्ली, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग : हिं० सा० स० प्रयाग, नागरी प्रचारिणी सभा काशी ना० प्र० स० काशी, सयुक्त राष्ट्र सघ (United Nations Organisation) स० रा० सं०, मोहनदास कर्मचन्द गान्धी मो० क० गान्धी, सहायक निर्देशक प्रोग्राम (Assistant Director Programmes) स० नि० प्रो०, मुख्य इजीनियर (Chief Engineer) मु० इ० आदि।

यहाँ एक बात और स्पष्ट कर देनी चाहिए। हमने नार्दर्न रेल्वे (Northern Railway) के लिए एन० रेलवे और देहली स्टेट ट्रान्सपोर्ट के लिए (D T S.) डी० टी० एस० रूप देखे हैं। ऐसे ही भारतीय नामो जैसे सुनीतिकुमार चाटुर्ज्याके लिए एस० के० चाटुर्ज्या लिखे देखे हैं। यथा इनके लिए क्रमश ना० रेलवे, दे० रा० ट्रा० और सु० कु० चाटुर्ज्या नहीं लिखे जा सकते। हमे संक्षिप्त रूपोमें भी हिन्दीको अपनानेका प्रयत्न करना चाहिए। नामोके मामलेमें हमे विदेशी ध्वनियोको हिन्दीमे स्थान देना चाहिए, क्योकि अपने नामका बिगडा रूप सुनना या लिखा जाना कोई आदमी पसन्द न करेगा। वे हिन्दीकी प्रकृतिके अनुसार होने चाहिए। हिन्दीमे रचा-पचा इस प्रकारका उदाहरण अँगरेजी शब्द डाक्टर है। इसका सक्षिप्त रूप हिन्दीमे 'डॉ०' है, न कि अँगरेजी उच्चारणके अनुसार 'डॉ०' है। 'डा०' का सांकेतिक रूप पूर्ण रूपसे हिन्दीकी प्रकृतिके अनुसार है। पर बी० ए०, एम० ए० आदि रूप हिन्दीमें इतने लम्बे कालसे प्रचलित हैं कि उनको अब ठीक करके लिखना कठिन है और इनमे कोई दोष नही है, क्योकि प्रचलनकी मुहरने उन्हें टकसाली बना दिया है।

अच्छा हो यदि भाषा, गणित, और विज्ञान आदिमे प्रयुक्त आदर्श शब्दों, प्रतीको और सांकेतिक रूपोका एक बडा कोश तैयार किया जाये और उनके हिन्दी नाम भी निर्धारित किये जायें।

बीसवाँ परिच्छेद

जबतक ऐसा न हो, तबतक हिन्दीके अच्छे-अच्छे कोशोंके अन्तमें, अँगरेज़ी कोशोके अनुसरणपर परिशिष्टके रूपसे गणित, चिकित्सा विज्ञान, तथा प्रूफ-पढाई आदिके चिह्न-प्रतीक तथा सांकेतिक रूप देनेकी परिपाटी चालू रहेगी।

● ●

परिशिष्ट : एक

नामानुक्रमणिका

(केवल आवश्यक नामोंको ही अनुक्रमणिकामें सम्मिलित किया गया है।)

हि

● ●

परिशिष्ट : दो

सहायक पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओंकी सूची

१ अच्छी हिन्दी श्री रामचन्द्र वर्मा

२. अर्थ विज्ञान और व्याकरण दर्शन डॉ० कपिलदेव द्विवेदी

३ अपभ्रंश प्रकाश प्रो० देवेन्द्रकुमार जैन

४ इस्तलाहात-ए-जुगराफिया प्र० अजमन तरक्की-ए-उर्दू, दिल्ली

५ इन्तखाव-ए-दाग

६ उर्दू हिन्दी कोश सम्पा० श्री रामचन्द्र वर्मा

७ कैफिया श्री व्रजमोहन दत्तात्रेय कैफी

८ कोशकला श्री रामचन्द्र वर्मा

९ जमाना प्रेमचन्द अंक, कानपुर

१० जीवन साहित्य, नयी दिल्ली

११ जैन ग्रन्थ-प्रशस्ति संग्रह, सं० पं० जुगल किशोर मुख्तार

१२ जैन साहित्य और इतिहास . पं० नाथूराम प्रेमी

१३ जैन सिद्धान्त भास्कर, आरा, जून सन् १९४०

१४ दरिया-ए-लताफ़त मीर इन्शाउल्लाखाँ इन्शा

१५. नया हिन्द, इलाहाबाद, अंक सितम्बर '५२ से अगस्त '५३, दिसम्बर सन्'५४

१६ नवभारत टाइम्स, दिल्ली, १५ अक्तूबर '५६, ७ नवम्बर '५६

१७ पाणिनिकालीन भारत . डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल

१८ प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, बम्बई

१९. फरहंग-ए-इस्तलाहात-ए-पेशावरान भा० ४, ५ सम्पादक मौ० जफर-उर्रहमान देहलवी

२० भारतीय संविधानका मसौदा अनु० श्री राहुल सांकृत्यायन

२१. भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी ले० डॉ० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या

२२ भाषालोचन श्री सीताराम चतुर्वेदी

२३ भाषाविज्ञान श्री सीताराम चतुर्वेदी

२४ मराठी जबानपर फारसीका प्रभाव डा० अब्दुलहक़

२५. राष्ट्रभाषाका सवाल श्री जवाहरलाल नेहरू

२६ वजा इस्तलाहात प्रो० वहीदुद्दीन सलीम पानीपती

२७ वाणिज्य शब्दकोश सम्पादक डॉ० रघुवीर आदि

२८ वैज्ञानिक शब्दसंग्रह . श्री पोपटलाल गोविन्दलाल शाह

२९. शब्द-साधन श्री रामचन्द्र वर्मा

३०. शब्दोंका जीवन डॉ० भोलानाथ तिवारी

३१ शास्त्रीय परिभाषा कोश सम्पादक श्री वी० आर० दाने तथा श्री सी० जी० कर्वे

३२. श्रमण, बनारस नवम्बर सन् '५६

३३. समीचीन धर्म-शास्त्र, अनु० श्री जुगलकिशोर मुख्तार

३४ सामान्य भाषाविज्ञान . डॉ० बाबूराम सक्सेना

३५ सावय धम्म दोहा सम्पादक डॉ० हीरालाल जैन

३६. संस्कृत-अँगरेजी कोश सम्पादक श्री आप्टे

३७. हिन्दी निरुक्त श्री किशोरीदास वाजपेयी

३८ हिन्दी शब्दानुशासन : ,, ,,

३९ हिन्दी भाषाका इतिहास : डॉ० धीरेन्द्र वर्मा

४० हिन्दीपर फारसीका प्रभाव . श्री अम्बाप्रसाद [illegible]

४१ हिन्दी भाषा और साहित्यका इतिहास श्री [illegible]

४२ हिन्दी लोकोक्तियाँ और मुहावरे श्री गुलाबराय

४३ हिन्दी व्याकरण श्री कामताप्रसाद गुरु

४४ हिन्दुस्तान (दैनिक), दिल्ली, ७ नवम्बर'५४, ७ जुलाई'५७

अँगरेजी पुस्तकें—

1 A Comparative Grammar of Modern Aryan Languages, three volumes: John Beames
2 A New Hindustani English Dictionary : Dr. A W. Fallan
3. Bhargawa's Standard Illustrated Dictionary Prof R C Pathak.
4 Comprehensive English Hindi Dictionary : Dr. Raghuvira.
5. Concise Oxford Dictionary H. W Fowler
6 Glossary of Technical Terms Used in the Constitution of India, Published by the Govt of India.
7 Indian Words in English Dr G S. Rao
8 Language, Its Nature, Development and Origin Mr. Otto
9. List of Technical Terms in Hindi, C Publication, General Administration
10 —Do — C
11 —Do Medi
12. Nuclear Explosive ndia Pu
13 Our Language .
14. Portuguese Infl o Xavier Soares.

15 Report on International Scientific and Technical Dictionaries : Dr. I E Holmstorm, Unesco Publication.

16 Romance of Words Earnest Weekly

17. Science in Plain Language, Unesco Publication

18 The Grammar of Hindi Language : Rev. S H. Kellog

19 The Hindustan Times, New Delhi, 13th July, 26th Sept., lst Oct. '56 and 7th Oct '56

20 The Indian Express, Delhi, 4th Feb, 29th Dec '56.

21 The Problem of Hindustani Dr. Tara Chand

22. The Sanskrit Language Prof T Burrow.

23 The Statesman, New Delhi, 10th May, '56,

24 The World of Words Eric Partrige

25. Thoughts on Language Mahatma Gandhi

26. Words and Their Use . Dr Stephen Ullmann

• •

परिशिष्ट : तीन

पारिभाषिक शब्द-कोश सूची

आधुनिक भारतीय भाषाओंमे प्रकाशित चुने हुए पारिभाषिक शब्द-कोशोकी सूची—

उर्दू

अजमन तरक्की-ए-उर्दू, औरंगाबाद (दकन)-द्वारा प्रकाशित ·

१ फरहंग-ए-इस्तलाहात-ए-इल्मिया

२-५. फरहग-ए-इस्तलाहात-ए-इल्मिया चार भाग—रसायन शास्त्र, भौतिक विज्ञान, समाज शास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास, राजनीति, भूगोल

६-१३ फरहग-ए-इस्तलाहात पेशावरान सम्पादक मौलवी ज़फर उर्रहमान देहलवी, आठ भाग

१४ मजमूअ-ए-इस्तलाहात उस्मानिया यूनिवर्सिटी, हैदराबाद।

१५ फहरिस्त इस्तलाहात, हिन्दके दस्तूरके मसौदेकजमीमा प्रकाशक भारत सरकार।

गुजराती

१ डिक्शनरी ऑव लीगल टर्मस, (कानून) बडौदा राज्य-द्वारा प्रकाशित

२ सियाजी वैज्ञानिक शब्द सग्रह प्रकाशक ,, ,,

३. ए ग्लासरी ऑव मैथिमेटिकल टर्म्स, (गणित) प्रकाशक गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद ।

४ वैज्ञानिनी परिभाषा प्रकाशक गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद ।

५ अर्थशास्त्रानी परिभाषा प्रकाशक ,, ,,

६. पदार्थ विज्ञान अने रसायन-पारिभाषिक शब्द-कोश प्रकाशक डॉ० वाई० जी० नायक

७ वैज्ञानिक शब्द संग्रह संयोजक पोपटलाल गोविन्दलाल शाह, प्रकाशक गुजरात संशोधन मण्डल, बम्बई ।

तमिल

१ सेनाई माकाना तमिल संघम : कलाइ कोरकल, तिरुनेलवेली

२ ए डिक्शनरी ऑव टैक्नीकल टर्म्स अंगरेजी तमिल, मद्रास स्टेट तमिल संघम, तिरुनेलवेली ।

तेलुगु

१. तेलुगु ईक्वीवेलेंट्स ऑव टैक्नीकल टर्म्स इन फिजिक्स, [illegible] बालकेश्वर राव, आन्ध्र युनिवर्सिटी, वाल्टेयर ।

पंजाबी

१ एग्रो पंजाबी टैक्नीकल टर्म्स, प्रकाशक पेप्सू गवर्नमेन्ट, पटियाला ।

बंगाली

१ गणितेर परिभाषा सम्पादक ज्योतिर्मई घोष, प्र० प्रे[illegible] कालिज, कलकत्ता ।

२. रत्नमाला (पर्यायवाची शब्दकोश) सम्पादक [illegible] पाठक, कलकत्ता विश्वविद्यालय प्रकाशन

३ वैज्ञानिक परिभाषा भाग १ भूगोल

४ ,, ,, २ गणित

५. ,, ,, ३ रसायन

६ ,, ,, ४ भौतिकशास्त्र

७ ,, ,, ५ वनस्पतिशास्त्र

८ वैज्ञानिक परिभाषा भाग ६ शरीरशास्त्र तथा स्वास्थ्य ।

मराठी

१ इंगलिश-मराठी अर्थशास्त्र परिभाषा सम्पादक एस० एम०, कुलकर्णी, अहमदनगर ।

२ भारतीय मानसशास्त्र परिभाषा कोश सम्पादक वाडेकर ।

३ शास्त्रीय परिभाषा कोश सम्पादक वाई० आर० दाते, प्रकाशक महाराष्ट्र कोष मण्डल, पूना ।

मलयालम

१. टर्म्ज़ इन बोटेनी (मलयालम) प्रकाशक युनिवर्सिटी ऑव ट्रावनकोर त्रिवेन्द्रम ।

२ टर्म्ज़ इन एज्यूकेशन ,, ,,

३. टर्म्ज़ इन ऐलीमेन्ट्री केमिस्ट्री ,, ,,

४. टर्म्ज़ इन ऐलीमेण्ट्री फिजिक्स ,, ,,

५ टर्म्ज़ इन मैथेमेटिक्स ,, ,,

हिन्दी

इण्टरनेशनल एकेडेमी ऑव इण्डियन कलचर नागपुर-द्वारा प्रकाशित, मुख्य सम्पादक डॉ० रघुवीर ।

१ ए डिक्शनरी ऑव इंगलिश इण्डियन टर्म्ज़ ऑव एडमिनिस्ट्रेशन

हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा प्रकाशित—

१७ समाचारपत्र शब्दकोश श्री सत्यप्रकाश

१८ शासन शब्दकोश श्री राहुल साकृत्यायन

१९. प्रत्यक्ष शरीर कोश

२० भूतत्त्व विज्ञान कोश

२१ जीव रसायन कोश

२२. चिकित्सा विज्ञान कोश

२३. हिन्दी साहित्य पारिभाषिक शब्दकोश प्रकाशक ज्ञानमण्डल, बनारस।

हिन्दुस्तानी

१ हिन्दके विधानकी अँगरेज़ी-हिन्दुस्तानी शब्दावली, प्र० हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धा

२ हिन्दुस्तानी शब्दियात लेखमाला ले० डॉ० जाफर हसन, हैदराबाद, नया हिन्द कानपुरमें प्रकाशित।

• •